ISSN 0972-1746

iitr 50 1965 2015 स्वर्ण जयन्ती

50 वर्षों से राष्ट्र की सेवा में समर्पित

विषविज्ञान संदेश

राजभाषा पत्रिका

अंक 23–24
वर्ष 2015–16

सीएसआईआर-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
(वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली)

संविधान में हिन्दी भाषा के विकास के लिए निदेश

351. संघ का यह कर्त्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिन्दुस्तानी के और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं के प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहां आवश्यक या वांछनीय हो वहां उसके शब्द-भण्डार के लिए मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे।

सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर. राजभाषा पत्रिका

विषविज्ञान संदेश

2015-16

सी.एस.आई.आर.–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

राजभाषा कार्यान्वयन समिति

प्रोफेसर आलोक धावन, निदेशक	अध्यक्ष
डॉ. मुकुल दास, मुख्य वैज्ञानिक	राजभाषा अधिकारी
डॉ. पूनम कक्कड़, मुख्य वैज्ञानिक	सदस्य
डॉ. डी. कार चौधरी, मुख्य वैज्ञानिक	सदस्य
डॉ. देवेन्द्र परमार, मुख्य वैज्ञानिक	सदस्य
डॉ. के. सी. खुल्बे, प्रभारी, आर.पी.बी.डी.	सदस्य
श्री निखिल गर्ग, प्रभारी कम्प्यूटर अनुभाग	सदस्य
डॉ. एन. मणिक्कम	सदस्य
श्री अनिल कुमार, प्रशासन नियंत्रक	सदस्य
श्रीमती कनकलता मिश्रा, वित्त एवं लेखा अधिकारी	सदस्य
श्री एस. पी. प्रभाकर, भंडार एवं क्रय अधिकारी	सदस्य
श्री योगेन्द्र सिंह, वरिष्ठ अधीक्षक अभियन्ता (विद्युत)	सदस्य
श्री आर. के. उपाध्याय, कार्यपालक अभियन्ता	सदस्य
श्री जगन्नाथ, अनुभाग अधिकारी (स्थापना - I)	सदस्य
श्री यू. एस. मिश्रा, अनुभाग अधिकारी (सामान्य)	सदस्य
श्री विवेक श्रीवास्तव, सुरक्षा अधिकारी	सदस्य
श्री राकेश सिंह बिसेन, प्रभारी, ज्ञान संसाधन केन्द्र	सदस्य
श्री चन्द्र मोहन तिवारी, हिन्दी अधिकारी	सचिव

सम्पादक मण्डल

प्रोफेसर आलोक धावन	संरक्षक
डॉ. पी. डी. द्विवेदी	सम्पादक
डॉ. आलोक कुमार पाण्डेय	सह-संपादक
डॉ. डी. कार चौधरी	सदस्य
डॉ. कैलाश चन्द्र खुल्बे	सदस्य
डॉ. रजनीश कुमार चतुर्वेदी	सदस्य
डॉ. अनुराग त्रिपाठी	सदस्य
श्रीमती प्रीति चतुर्वेदी भार्गव	सदस्य
डॉ. (श्रीमती) ज्योत्स्ना सिंह	सदस्य
श्रीमती सुमिता दीक्षित	सदस्य
श्री राम नारायण	सदस्य
श्री चन्द्र मोहन तिवारी	सदस्य

प्रकाशक

सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

विषविज्ञान भवन, 31 महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ, 226001, उत्तर प्रदेश, भारत

पत्र व्यवहार का पता :-

निदेशक

सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान

विषविज्ञान भवन, 31 महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ, 226001, उत्तर प्रदेश, भारत

दूरभाष : (0522) 2613357, 2621856

फैक्स : +91-522-2628227

ई-मेल : rpbdiitr@yahoo.com, director@iitrindia.org

वेबसाइट : www.iitrindia.org

(पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने विचार हैं)

पत्रिका के संदर्भ में समस्त जानकारी के लिए कृपया संपर्क करें :-

डॉ. प्रेमेन्द्र धर द्विवेदी

संपादक

राजभाषा पत्रिका ''विषविज्ञान संदेश'' एवं

प्रधान वैज्ञानिक, खाद्य, औषधि एवं रसायन विषविज्ञान विभाग

सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान

विषविज्ञान भवन, 31 महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ, 226001, उत्तर प्रदेश, भारत

दूरभाष : 2620107, 2620106, 2231172 एक्सटेशन 244

फैक्स : +91-522-2628227

विषय सूची

संरक्षक की कलम से.....

सम्पादकीय.....

खाद्य पदार्थों में डाईऑक्सिन की उपस्थिति : पर्यावरण व मनुष्यों पर उसके दुष्प्रभाव.....1
दिव्या सिंह एवं आलोक कुमार पाण्डेय

डबल फॉरटीफाइड नमक : एक नई सोच.....18
मुकुल दास एवं सुमिता दीक्षित

क्रिस्पर/कैस 9 जीनोम संपादन– नयी तकनीक, व्यापक आयाम.....25
मोहन कमथान

आसवनी अपशिष्ट को अनॉक्सीकृत प्रक्रिया द्वारा शोधनोपरान्त पर्यावरण में सुरक्षात्मक निस्तारण की चुनौतियाँ.....34
विनीत कुमार एवं राम चन्द्रा

खाद्य पदार्थों में मोनोसोडियम ग्लूटामेट कितना नुकसान दायक?.....50
सुमिता दीक्षित एवं मुकुल दास

जल में प्रतिजैविक प्रतिरोध का उद्गमन : वैश्विक समाधान की आवश्यकता.....56
नेहा गुप्ता, दीप्षी चौरसिया एवं प्रीति चतुर्वेदी

खाद्य पदार्थों में मिलार्ड अभिक्रिया के परिणाम.....67
रिंकेश कुमार गुप्ता एवं प्रेमेन्द्र धर द्विवेदी

विश्लेषणात्मक रसायन में मानक पदार्थों का प्रयोग एवं महत्व.....76
वी. तन्मया एवं राकेश कुमार

क्या आपका पानी आपके गुर्दे की बीमारियों का कारण है.....85
रत्नाकर तिवारी, सिद्धार्थ गंगोपाध्याय एवं विकास श्रीवास्तव

खाद्य एलर्जी पर एक व्यापक समीक्षा.....92
आकांक्षा शर्मा एवं प्रेमेन्द्र धर द्विवेदी

सीनोरैबिडाइटिस एलिगन्स **पर नैनोंकणो की विषाक्तता का मूल्यांकन**.....101
योगेन्द्र नागर एवं अरुणा सतीश

स्वर्ण जयन्ती प्रकाशन.....110

हिन्दी सप्ताह उद्घाटन समारोह.....111

अनुवाद प्रतियोगिता.....112

आशुभाषण प्रतियोगिता.....113

निबन्ध लेखन एवं टिप्पणी प्रतियोगिता.....114

हिन्दी सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता.....115

हिन्दी सप्ताह पुरस्कार वितरण समारोह.....116

सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ ने राजभाषा हिंदी में कार्यालय में उत्कृष्ट प्रदर्शन का अष्टम पुरस्कार प्राप्त किया.....119

स्वर्ण जयन्ती व्याख्यान श्रृंखला.....120

प्रोफ़ेसर आलोक धावन
एफएनए एससी, एटीएस, एफएईबी, एफआईएनएस
निदेशक

Professor Alok Dhawan
FNASc, ATS, FAEB, FINS
Director

संरक्षक की कलम से.....

प्रिय पाठकों, इस संस्थान से प्रकाशित राजभाषा पत्रिका ''विषविज्ञान संदेश'' का यह अंक आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे अपार हर्ष हो रहा है। स्थापना के स्वर्ण जयन्ती वर्ष तक की विकास यात्रा में संस्थान ने राजभाषा के प्रचार प्रसार में उत्तरोत्तर प्रगति की है और हमारा संकल्प है कि हम वैज्ञानिक उपलब्धियों एवं अनुसंधानों को राजभाषा के माध्यम से जनसामान्य को उपलब्ध कराते रहेंगे। मुझे विश्वास है कि राजभाषा हिन्दी के माध्यम से विषविज्ञान के क्षेत्र में हो रही नवीनतम खोज एवं संस्थान के प्रयासों की जानकारी से जनजीवन लाभान्वित होगा।

इस पत्रिका के प्रकाशन का उद्देश्य जैव प्रौद्योगिकी एवं सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में पर्यावरण स्वास्थ्य सम्बंधी समस्याओं का निदान वैश्विक स्तर पर हो रहे वैज्ञानिक अनुसंधान, प्रौद्योगिक विकास, जैव विविधता, स्वास्थ्य सुरक्षा, जलवायु परिवर्तन, खाद्य पदार्थ एवं नैनोमैटीरियल विषाक्तता जैसे अध्ययनों की अद्यतन जानकारियों को जन-जन तक पहुँचाना है।

उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत अंक में अनुभवी वैज्ञानिकों, प्रौद्योगिकीविदों और शोधकर्ताओं द्वारा लिखे गए लेख राजभाषा हिन्दी के माध्यम से प्रकाशित किए गए हैं, जिससे, जनमानस संस्थान द्वारा विज्ञान के क्षेत्र में हो रहे वैज्ञानिक शोध परिणामों के आधार पर उपयोगी और प्रेरणादायक सूचनाएं प्राप्त कर सकें और उनके आधार पर स्वास्थ्य के प्रति वैज्ञानिक चेतना जागृत कर सकें।

यह पत्रिका विगत कई वर्षों से अपने उत्कृष्ट वैज्ञानिक लेखों एवं सारगर्भित प्रस्तुति के आधार पर भारत सरकार के राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के अधीन नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, लखनऊ द्वारा पुरस्कृत रही है। इसके लिए पत्रिका के प्रकाशन से जुड़े वैज्ञानिक, कर्मचारी, लेखक एवं संपादक मंडल के सदस्य उत्साहित हैं।

हमें पूर्ण विश्वास है कि विषविज्ञान संदेश का यह संस्करण पाठकों को नयी और उपयोगी जानकारियों, शोध सूचनाओं तथा संस्थान द्वारा विषविज्ञान के क्षेत्र में हो रहे वैज्ञानिक क्रियाकलापों से अवगत करायेगा। हमारा प्रयास है कि इस पत्रिका में प्रकाशित वैज्ञानिक लेख मनोरंजक, वैज्ञानिक दृष्टिकोण से उपयोगी, ज्ञानवर्धक एवं उद्देश्यपूर्ण हों।

मैं इस पत्रिका के उज्ज्वल एवं सफल भविष्य की कामना करता हूँ।

आलोक धावन

प्रोफेसर आलोक धावन

डॉ. प्रेमेन्द्र धर द्विवेदी
वरिष्ठ प्रधान वैज्ञानिक

सम्पादकीय

विज्ञान के क्षेत्र में नित्य नये बहुप्रौद्योगिकी एवं बहुआयामी विकास के साथ सूचना तकनीकी व शोध आयामों में क्रांतिकारी परिवर्तनों के बीच राजभाषा हिन्दी के माध्यम से सामंजस्य स्थापित करना अपने आप में एक चुनौती है। हमारा संस्थान इस चुनौती को स्वीकार करते हुए विगत कई वर्षों से न केवल विज्ञान के क्षेत्र में हो रहे चहुँमुखी विकास तथा उसके द्वारा मानव जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों की जानकारी भी प्रदान कर रहा है। इसी क्रम में यह संस्थान विषविज्ञान सम्बन्धी जनोपयोगी जानकारियों को राजभाषा हिन्दी के माध्यम से जनसाधारण तक पहुँचाने हेतु ''विषविज्ञान संदेश'' नामक वैज्ञानिक पत्रिका का सम्पादन करता रहा है, जिसके फलस्वरूप इस विषय का सम्पूर्ण बोध सम्भव हो सका है। वैज्ञानिक शोध संबंधी अधिकतर जानकारियाँ विदेशी भाषा में प्रकाशित होती हैं, जिसके कारण जानकारियाँ व उपलब्धियां जनसाधारण तक नहीं पहुँच पाती हैं। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु हमारी पत्रिका ''विषविज्ञान संदेश'' वैज्ञानिक शोध उपलब्धियों, शोध सूचनाओं एवं बहुप्रौद्योगिकी जानकारियों को निरंतर पाठकों तक पहुँचाने का प्रयास करती है, ताकि उनके स्वास्थ्य, जीवन एवं पर्यावरण में अनुकूल सुधार हो सके।

अनुसंधान एवं आविष्कार स्वतंत्र चिन्तन से जुड़े विषय हैं और चिन्तन तथा भाषा दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। वैज्ञानिक द्वारा अवलोकन या मूल्यांकन तथा ज्ञान विज्ञान, शोध कार्य के व्यापक प्रचार-प्रसार तथा देश के विकास हेतु जनता की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए जनभाषा का सहारा लेना अति आवश्यक है। इससे स्पष्ट है कि ''विषविज्ञान संदेश'' पत्रिका राजभाषा हिन्दी के माध्यम से शोधकर्ताओं, विद्यार्थियों एवं अन्य पाठकों तक विविध वैज्ञानिक सूचनाओं एवं शोध परिणामों को पहुँचाने में सफल रही है। इसी का परिणाम है, कि भारत सरकार, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के अन्तर्गत, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, लखनऊ द्वारा विगत कई वर्षों से इस पत्रिका को पुरस्कृत किया जाता रहा है, जो अपने आप में एक बड़ी उपलब्धि है तथा इस पत्रिका की स्वीकार्यता को दर्शाता है।

हम संस्थान के निदेशक के बहुत आभारी हैं जिनके संरक्षण, मार्गदर्शन एवं कुशल नेतृत्व में इस पत्रिका का प्रकाशन संभव हो पाया है। इस पत्रिका के सम्पादन से जुड़े प्रत्येक व्यक्ति एवं उन सभी सहयोगियों, वैज्ञानिकों, कर्मचारियों एवं लेखकों के प्रति मैं आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने अपने अथक परिश्रम से इस पत्रिका के प्रकाशन में सहयोग प्रदान किया।

सद्भावनाओं सहित।

प्रेमेन्द्र धर द्विवेदी
संपादक

विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गाँधी मार्ग
पोस्ट बाक्स न० 80, लखनऊ, उ.प्र., भारत
VISHVIGYAN BHAWAN, 31, MAHATMA GANDHI MARG
POST BOX NO 80, LUCKNOW-226001, U.P. INDIA
Phone:+91-522-2231172, 2620107, 2628228 *244 Fax:+91-522-2628227, 2611547
director@iitrindia.org www.iitrindia.org

1965 2015 स्वर्ण जयन्ती
50 वर्षों से राष्ट्र की सेवा में समर्पित
एनएबीएल द्वारा रासायनिक एवं जैविक परीक्षण हेतु प्रत्यायित
Accredited by NABL for chemical and biological testing
विषाक्तता परीक्षण: जीएलपी अनुरुप सुविधा
Toxicity Testing: GLP Test Facility

खाद्य पदार्थों में डाईऑक्सिन की उपस्थिति : पर्यावरण व मनुष्यों पर उसके दुष्प्रभाव

दिव्या सिंह एवं आलोक कुमार पाण्डेय

नैनोमैटेरियल विषविज्ञान प्रभाग, नैनो औषधि एवं नैनोमैटेरियल विषविज्ञान विभाग
सी.एस.आई.आर.–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
विषविज्ञान भवन, 31 महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ, 226001, उत्तर प्रदेश, भारत

पॉलीक्लोरीनेटेड डाईबेंजो डाईऑक्सिन (पी.सी.डी.डी.) या साधारणतया डाईऑक्सिन, पॉलीहेलोजिनेटेड कार्बनिक यौगिकों का समूह है, एवं दृढ़संग्रही (persistent) पर्यावरणीय प्रदूषण का एक मुख्य प्रदूषक है। यह मुख्यतः औद्योगिक निर्माण का सहउत्पाद होता है, एवं ठोस अपशिष्ट, चिकित्सकीय अपशिष्ट, प्लास्टिक, इत्यादि को जलाये जाने से निकलते हैं। यह अत्यंत विषैले होते हैं, तथा पर्यावरण में लंबे समय तक बने रहते हैं। यह जल में अघुलनशील हैं, किन्तु वसा स्नेही होने के कारण यह मनुष्यों एवं पशुओं के वसीय ऊतकों में जमा होते रहते हैं। यह हमारे शरीर में मुख्यतः खाद्य पदार्थ, मांस, दुग्ध उत्पाद, मछली इत्यादि के द्वारा पहुँचते हैं, इसका स्तर खाद्य श्रृंखला बढ़ने के साथ बढ़ता जाता है, अर्थात शाकाहारी जीवों की तुलना में माँसाहारी प्राणियों में इसकी मात्रा 1000 गुना ज्यादा होता है।

पृष्ठभूमि

डाईऑक्सिन पर्यावरणीय प्रदूषक हैं। यह 'डर्टी डजन' समूह (स्टॉकहोम सम्मेलन में सम्मिलित बारह दृढ़संग्रही प्रदूषकों का एक समूह) से होने के कारण अत्यधिक विषैला होता है, जो अजैविक प्रदूषक की श्रेणी में रखे जाते हैं। डाईऑक्सिन मनुष्यों के लिए घातक रसायनों में से एक जाना जाता है। यह औद्योगिक रसायनिक प्रक्रियाओं में सहउत्पादों के रूप में उत्पन्न होते हैं। ये तेल, वसा और गैर–ध्रुवीय विलायक में आसानी से घुलनशील होते हैं। यह रसायन अवाष्पशील तथा अत्यधिक स्थायी होते हैं। डाईऑक्सिन वसा में घुलनशील होने के कारण, खाद्य श्रृंखला में जैवसंचित होते रहते हैं। डाईऑक्सिन यौगिक वाष्प के माध्यमों से या हवा में उपस्थित सूक्ष्म कणों के माध्यम से वातावरण में पहुँचते हैं, तथा मिट्टी, पौधों या अन्य सतहों पर एकत्रित हो जाते हैं। डाईऑक्सिन शरीर में प्रवेश करने के बाद दीर्घकाल तक रहते हैं, यह उनकी रासायनिक स्थिरता और शरीर में उनकी वसा ऊतकों में जमा होने की क्षमता के कारण होता है, जहां वे वसा ऊतकों द्वारा अवशोषित किये जाते हैं। शरीर में इनकी अर्धायु काल लगभग 7 से 11 वर्ष होने का अनुमान है।

डाईऑक्सिन का रासायनिक नाम – 2,3,7,8–टेट्राक्लोरो डाईबेंजोपैराडाईऑक्सिन (टी.सी.डी.डी.) है। 'डाईऑक्सिन' का नाम अक्सर संरचनात्मक और रासायनिक संबंधित पॉलीक्लोरीनेटेड डाईबेंजो पैराडाईऑक्सिन (पी.सी.डी.डी.) और पॉलीक्लोरीनेटेड डाईबेन्जोफ्यूरेन (पी.सी.डी.एफ.) के परिवार के लिए प्रयोग किया जाता है। इसी तरह के जहरीले गुणों के साथ कुछ डाईऑक्सिन की तरह पॉलीक्लोरीनेटेड बाईफिनॉल (पी.सी.बी.) भी शब्द 'डाईऑक्सिन" के तहत शामिल किए गए हैं। अभी तक डाईऑक्सिन से संबंधित ज्ञात यौगिकों में से कुल 419 प्रकार के यौगिकों की पहचान की गई है, लेकिन इनमें से केवल 30 यौगिकों (सारणी–1) को अधिक विषैला माना जाता है। इन सभी में टी.सी.डी.डी. की विषाक्तता (TEF 1.0) सबसे अधिक होने के कारण महत्वपूर्ण माना जाता है ।

रसायनिक संरचना

1, 4 डाईऑक्सिन की संरचना में दो बेंजीन रिंग होती हैं, वे दो ऑक्सीजन ब्रिज के द्वारा एक दूसरे से जुड़ी रहती हैं तथा इनके मध्य में दो डाईऑक्सीजिनेटेड रिंग उपस्थित होने के कारण इसे डाईऑक्सिन कहते हैं, पी.सी.डी.डी. में 8 स्थान होते हैं, जहाँ क्रियात्मक समूह आकर जुड़ सकते हैं। स्थान

तालिका –1 : डाईऑक्सिन जैसे महत्वपूर्ण congeners के लिए विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) विषाक्त तुल्यता कारक (विश्व स्वास्थ्य संगठन–टॉक्सिक इक्वीवेलेन्स फैक्टर)			
कान्जेनरस	टी ई एफ मान	कान्जेनरस	टी ई एफ मान
डाई–पी–डाईऑक्सिन पी सी बी		''डाईऑक्सिन की तरह'' (पी सी बी)	
2,3,7,8–टी सी डी डी	1.0	नॉन–ऑर्थो+मोनो–ऑर्थो पीसीबी	
1,2,3,7,8–पी सी डी डी	1.0	नॉन–ऑर्थो पीसीबी	
1,2,3,4,7,8,–एच एक्स सी डी डी	0.1		
1,2,3,4,7,8,–एच एक्स सी डी डी	0.1	पी सी बी 77	0.0001
1,2,3,4,7,8,9,–एच एक्स सी डी डी	0.1	पी सी बी 81	0.0001
1,2,3,4,7,8,–एच पी सी डी डी	0.01	पी सी बी 126	0.1
ओ सी डी डी	0.0001	पी सी बी 169	0.01
डाईबेन्जोफ्यूरेन (पीसी डीएफ)		मोनो–ऑर्थो पी सी बी	
2,3,7,8–टी सी डी डी	0.1	पी सी बी 105	0.0001
1,2,3,7,8–पी ई सी डी	0.05	पी सी बी 114	0.0005
एफ2,3,4,7,8–पीईसीडीएफ	0.5	पी सी बी 118	0.0001
1,2,3,4,7,8–एच एक्स सी डी एफ	0.1	पी सी बी 123	0.0001
1,2,3,4,7,8–एच एक्स सी डी एफ	0.1	पी सी बी 156	0.0005
1,2,3,7,8,9–एच एक्स सी डी एफ	0.1	पी सी बी 157	0.0005
2,3,4,6,7,8–एच एक्स सी डी एफ	0.1	पी सी बी 167	0.00001
1,2,3,4,6,7,8–एच पी सी डी एफ	0.01	पी सी बी 189	0.0001
1,2,3,4,7,8,9–एच पी सी डी एफ	0.01		
ओ सी डी एफ	0.0001		

संक्षेपण : ''टी'' = टेट्रा; ''पी''= पेंटा; ''एचएक्स'' = हेक्सा; ''एचपी'' = हेप्टा; 'ओ' ऑक्टा; ''सीडीडी''= क्लोरो–डाईबेन्जो डाईऑक्सिन; ''सीडीएफ'' = क्लोरो–डाईबेन्जोफ्यूरेन; ''सीबी''= क्लोरोबाईफिनॉल (स्रोत – नैटो–सीसीएमएस, 1998)

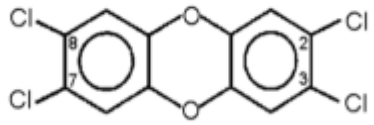

चित्र 1 : 2,3,7,8 – TCDD स्रोत – WHO 89037

1 से 4 तथा 6 से 9 इस प्रकार कुल 75 विभिन्न प्रकार के पी. सी. डी. डी. होते हैं। टी. सी. डी. डी.(चित्र–1) की विषाक्तता क्लोरीन अणु की संख्या और विन्यास पर निर्भर करती है, वे यौगिक जिनमें क्लोरीन 2,3,7,8 स्थान पर होते हैं वह सबसे अधिक विषैले पाये गये हैं।

डाईऑक्सिन के स्रोत

डाईऑक्सिन औद्योगिक प्रकिया का सहउत्पाद होता है। यह प्राकृतिक स्रोत (चित्र–2, 3) जैसे ज्वालामुखी उद्गार, जंगल की आग तथा मानव जनित स्रोत, जैसे अनियंत्रित अपशिष्ट (ठोस अपशिष्ट, चिकित्सा अपशिष्ट) के अपूर्ण दहन से उत्पन्न होता है। इसके अलावा तांबा गलाने, पेपर पल्प के क्लोरीनेशन तथा कुछ शाकनाशी व कीटनाशी के निर्माण के दौरान भी अवांछनीय रूप से डाईऑक्सिन निकलता है। यद्यपि इसका उत्सर्जन स्थानीय होता है, लेकिन इसका प्रसार वैश्विक होने के कारण यह पूरे विश्व में पाया जाता है। इसकी अधिकतम सांद्रता इसके स्रोत के पास उपस्थित मिट्टी, अवशेष, खाद्य पदार्थ (दुग्ध उत्पाद, मांस, मछली, और घोंघा) में पायी जाती है, जबकि हवा, पानी और पौधों में इसकी मात्रा कम पाई जाती है, जिसका मुख्य कारण डाईऑक्सिन का इन तत्वों में अघुलनशील होना है। डाईऑक्सिन और डाईऑक्सिन की तरह के तत्व जैसे–1,4,5 पी.सी.डी. डी. और पी.सी.डी.एफ. व्यापक रूप से वातावरण में मौजूद रहते हैं, और यह विभिन्न औद्योगिक तथा दहन प्रक्रियाओं में सह उत्पादों के रूप में मौजूद रहता है। पी सी डी डी, पी सी बी का प्रमुख प्रदूषक घटक है, लेकिन न तो पी सी डी डी और न ही पी सी डी एफ जानबूझ कर निर्मित किये जाते हैं ।

डाईऑक्सिन के प्रमुख स्रोत

(I) अनुसंधान के लिए डाईऑक्सिन का संश्लेषण

डाईऑक्सिन का संश्लेषण अधिकांशतः अनुसंधान के प्रयोजनों के लिए किया जाता है –और इसका लक्षण

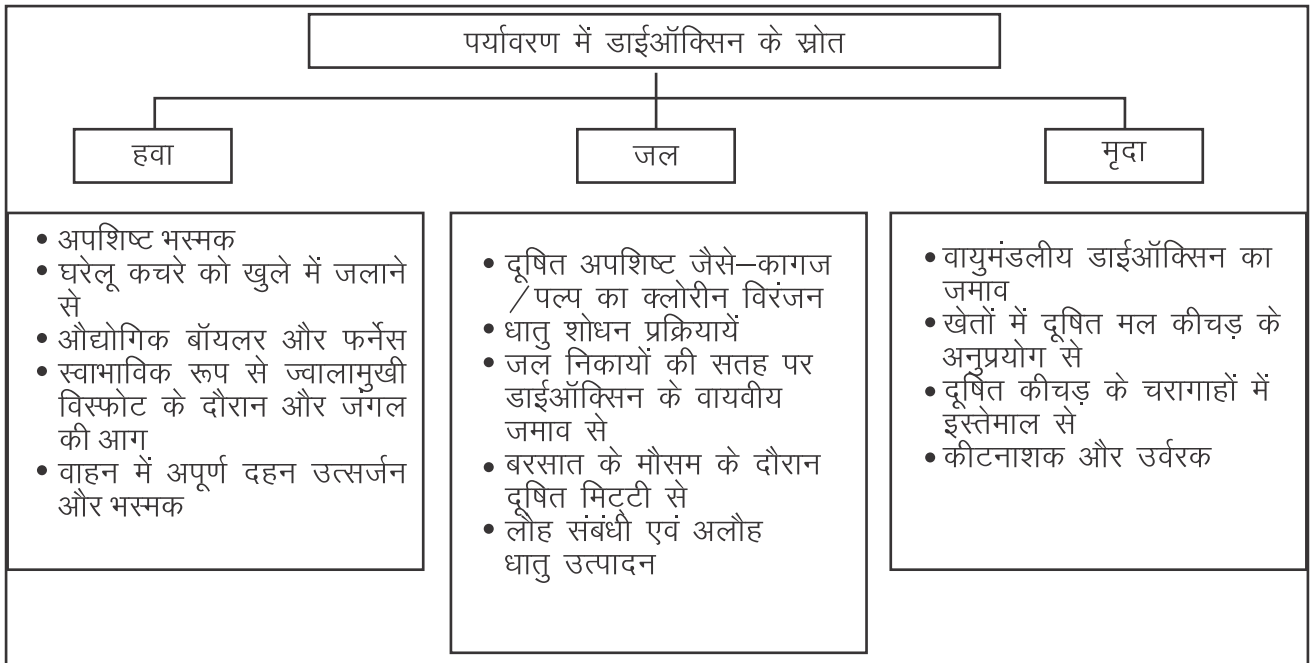

चित्र 2 : पर्यावरण में डाईऑक्सिन के प्रमुख स्रोत

स्रोतः http://toxicslink-org/docs/DIOXIN&Factsheet44-pdf

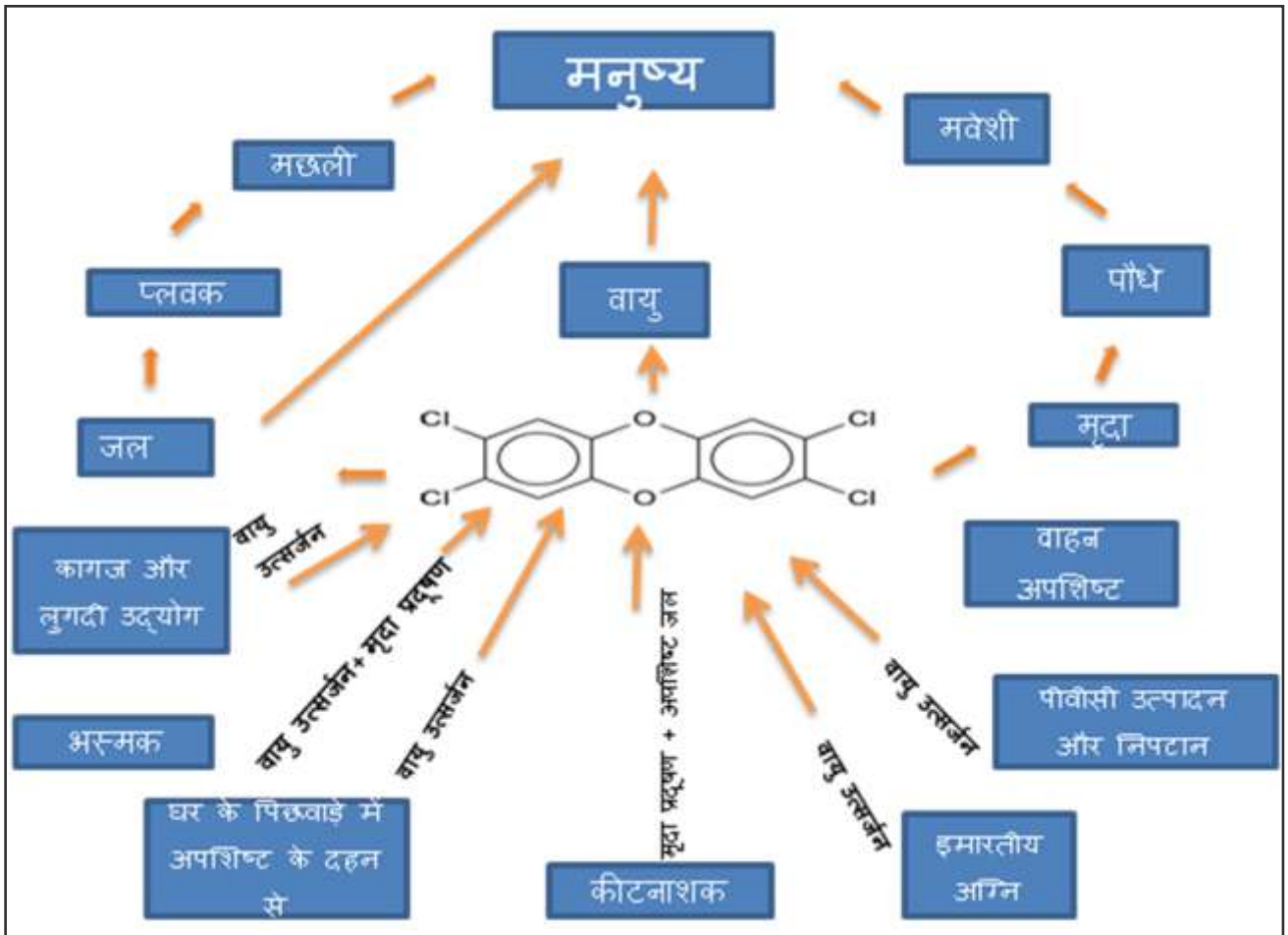

चित्र 3 : पर्यावरण में डाईऑक्सिन उत्सर्जन के स्रोत एवं उनका जैवसंचयन व जैव आवर्धन

वर्णन, हाई रेसोल्यूशन गैस क्रोमैटोग्राफी (HRGC) द्वारा, हाइ रेसोल्यूशन गैस क्रोमैटोग्राफी– हाई रेसोल्यूशन मास स्पेक्ट्रोस्कोपी (HRGC&HRMS), पराबैंगनी स्पेक्ट्रोस्कोपी (UV spectroscopy), इन्फ्रा–रेड स्पेक्ट्रोस्कोपी (IR spectroscopy), परमाणु चुंबकीय अनुनाद (NMR) और एक्स–रे तकनीक से भी किया जाता है।

(ii) औद्योगिक प्रक्रियाओं के उप–उत्पाद के रूप में

डाईऑक्सिन और फ्यूरेन, क्लोरीनयुक्त फिनॉल, क्लोरीनयुक्त डाईफिनॉल, ईथर और हेक्सा क्लोरोबेन्जीन के निर्माण के दौरान उप–उत्पाद के रूप में बनते हैं।

(iii) 2,4,5– ट्राईक्लोरो फिनॉल के निर्माण के दौरान

2,3,7,8 टीसीडीडी सम्भवतः 2,4,5 ट्राईक्लोरो फिनॉल से 1,2,4,5 टेट्राक्लोरो बेंजीन के उत्पादन के साथ उप–उत्पाद के रूप में बनता है। औद्योगिक प्रक्रिया में, यह प्रतिस्थापन प्रतिक्रिया 180°C तापमान पर विलायक के रूप में मेथनॉल के साथ स्थान लेता है। आम तौर पर इस प्रतिक्रिया में दबाव 7 केपीए तक बढ़ जाता है। ऊष्माक्षेपी अभिक्रिया होने के कारण, प्रतिक्रिया मिश्रण का तापमान 230 – 240°C तक पहुँच जाता है जिस कारण दबाव बढ़ जाता है, और अवांछित टी.सी.डी.डी. का निर्माण होता है। कुछ उद्योग उच्च दबाव से बचने के लिये विलायक के रूप में एथीलीन ग्लाइकॉल का उपयोग करते हैं, लेकिन इस उपचार के लिये विशेष सावधानी की आवश्यकता होती है क्योंकि एथिलीन ऑक्साइड बनने के कारण

अनायास ही तापमान 180°C से ऊपर बढ़ सकता है और प्रतिक्रिया में अपेक्षाकृत अनियंत्रित ढंग से अधिक टी.सी.डी.डी का उत्पादन बढ़ जाता है। विलायक की पुनः प्राप्ति प्रक्रिया में उत्पाद से टी.सी.डी.डी निकालते हैं, फिर भी यह नीचे अवशेषों के रूप में बचे रहते हैं।

(iv) अन्य क्लोरीन युक्त उत्पादों के निर्माण के दौरान

2,4 डाईक्लोरो –, 2,4,6 ट्राईक्लोरो–, 2,3,4,6 टेट्रा क्लोरो और पेंटाक्लोरो फिनॉल के निर्माण के दौरान, टी.सी.डी.डी. का निर्माण सहउत्पादों के रूप में होता है। फिनॉल के क्लोरीनीकरण के दौरान या क्लोरोबेंजीन के क्षारीय जलीय अपघटन के दौरान पी. सी.डी.डी. और पी.सी.डी.एफ. का भी निर्माण होता है।

(v) क्लोरीन युक्त डाईफिनॉइल ईथर के औद्योगिक उत्पादन के दौरान

क्लोरीन युक्त डाईफिनॉइल ईथर और हेक्साक्लोरोबेंजीन के औद्योगिक उत्पादन के दौरान पी.सी.डी.डी. और पी.सी.डी.एफ. बनते हैं ।

(vi) व्यावसायिक उत्पादों में डाईऑक्सिन एंव अन्य प्रदूषक

उत्पादक उपकरणों का उपयोग अक्सर विभिन्न रसायनों या बैच के निर्माण के लिए किया जाता है। उपकरणों को ठीक से साफ नहीं करने पर जो अवशिष्ट रह जाते हैं, वह उत्पादक के गुणों को परिवर्तित कर देते हैं, जिसके फलस्वरूप डाईऑक्सिन और अन्य प्रदूषकों के बनने की संभावना बढ़ जाती है। उदाहरण के लिए– 2,4,5 ट्राईक्लोरोफेनोक्सी एसिटिक एसिड (2,4,5–टी) उत्पादन के लिए जिस उपकरण का प्रयोग किया गया, बाद में उसी उपकरण का प्रयोग 2,4 डाईक्लोरोफेनोक्सी एसिटिक एस्टर के उत्पादन के लिए किया गया, उपकरण की पूरी तरह से सफाई के बिना उपयोग में लिया गया, जिसके फलस्वरूप 2,4–डी की अशुद्धता देखने को मिली।

(vii) व्यावसायिक उत्पादों के तापमानीय परिर्वतन से

हवा की उपस्थिति में औद्योगिक पी.सी.बी. का तापीय

तालिका 2 : डाईऑक्सिन के अन्तरराष्ट्रीय विषाक्तता समानक टी ई क्यू में डाईऑक्सिन के सस्थानिकों में 7 संस्थानिका दर्शाये गये

डाईऑक्सिन के विषाक्त सस्थानिक	**I – टी ई एफ**
टेट्रा – क्लोरो सदस्य (4 क्लोरीन प्रतिस्थापन)	1.0
2,3,7,8 टी सी डी डी	
पेंटा – क्लोरो सदस्य (5 क्लोरीन प्रतिस्थापन)	
1,2,3,7,8, – पी सी डी डी	0.5
हेक्सा – क्लोरो सदस्य (6 क्लोरीन प्रतिस्थापन)	
1,2,3,4,7,8 एच सी डी डी	0.1
1,2,3,6,7,8 एच सी डी डी	0.1
1,2,3,7,8,9 एच सी डी डी	0.1
हेप्टा – क्लोरो सदस्य (7 क्लोरीन प्रतिस्थापन)	
1,2,3,4,6,7,8 एच सी डी डी	
ऑक्टा – क्लोरो सदस्य (8 क्लोरीन प्रतिस्थापन)	0.01
ओ सी डी डी	0.001

अपघटन सील क्वार्ट्ज सीरिंज में भी करने पर 30 मुख्य तथा 30 से अधिक सूक्ष्म प्रकार के पी.सी.डी.एफ. पाये गये हैं। पी.वी.सी. का दहन करने पर डाईऑक्सिन के हेक्सा और हेप्टा–क्लोरीन प्रतिस्थापित समूह और फ्यूरॉन के टेट्रा से हेप्टा–क्लोरीनयुक्त क्लोरीन प्रतिस्थापित समूह की अधिकता देखने को मिलती है।

(viii) औद्योगिक एंव नगरपालिका के ठोस अपशिष्टों को नष्ट करने में

औद्योगिक अपशिष्ट जैसे– खराब तैलीय पदार्थों को मिट्टी और तलछट में फेकने या नष्ट करने पर ये मिट्टी को दूषित करते हैं। तेल रिफाइनरी से जो चिपचिपा कीचड़, अपशिष्ट के रूप में निकलता है, उस में विभिन्न प्रकार के विषाक्त घटक जैसे– पी.सी.बी., पी.सी.डी.डी. और पी.सी.डी.एफ के रूप में रहते हैं। क्लोरीनयुक्त कार्बनिक यौगिकों के साथ–साथ डाईऑक्सिन और फ्यूरॉन भी फ्लाई ऐश और नीचे बचे अपशिष्टों में पाए जाते हैं। ये सभी यौगिक अपूर्ण तापीय प्रकिया, अपर्याप्त दहन और सान्द्र बनाने की क्रिया के समय वायु प्रदूषण नियंत्रण प्रणाली (APCs) में ठोस अपशिष्ट भट्ठी में बनते हैं।

(ix) मल कीचड़ : नगरपालिका ठोस अपशिष्ट / अस्पतालीय अपशिष्ट के भस्मीकरण में

एंफ्लुएंट ट्रीटमेंट प्लांट (ETP), सिवेज ट्रीटमेंट प्लांट (STPs), कॉमन एवं कंबाइंड एंफ्लुएंट ट्रीटमेंट प्लांट (CCETP) के जलविहीन कीचड़, के दहन के दौरान डाईऑक्सिन और फ्यूरॉन का उत्पादन हो सकता है। हालांकि पी.सी.डी.डी. और पी.सी.डी.एफ. का उत्सर्जन नगरपालिकीय ठोस अपशिष्टों के जलाए जाने पर अन्य अपशिष्टों की तुलना में कम निकलते हैं। चिकित्सिकीय अपशिष्ट (हैलोजन युक्त कार्बनिक), के अपूर्ण दहन से फ्लाई ऐश और निचली राख में पी.सी.डी.डी. और पी.सी.डी.एफ. का उच्च स्तर पर उत्पादन देखने को मिलता है।

(x) लुगदी और कागज उद्योग में

लुगदी और कागज उद्योग में, लुगदी के विरंजनकरण के लिये क्लोरीन और क्लोरीनयुक्त यौगिकों का उपयोग फिनॉल के पाचन के लिये किया जाता है, यह क्रिया उच्च दबाव और तापमान पर लुगदी बनाने के लिए उपयोग की जाती है , जिसके फलस्वरुप पी.सी.डी.डी. और पी.सी.डी.एफ. का भी उत्पादन होता है। पेन्टाक्लोरोफिनॉल का प्रयोग उद्योगों में कवकनाशी के रूप में किया जाता है, जो खुद डाईऑक्सिन में परिवर्तित हो जाता है।

(xi) डामर मिक्सिंग (हॉट मिक्स संयंत्र)

सड़क निर्माण गतिविधियों में प्रयोग किये जाने वाले हॉट मिक्स संयंत्रों के माध्यम से व्यापक डाईऑक्सिन के उत्सर्जन में योगदान हो रहा हैं। पिघलाने और डामर के मिश्रण के दौरान, पी.सी.डी.डी. और पी.सी.डी.एफ. का गठन हो रहा है और यह पर्यावरण में उत्सर्जित हो रहा है ।

(xii) प्रकाश रासायनिक प्रक्रियाओं के द्वारा

उच्च पी.सी.डी.डी. और पी.सी.डी.एफ. का प्रकाश रासायनिक प्रक्रियाओं के द्वारा डीक्लोरीनीकरण करने पर कम क्लोरीनयुक्त समस्थानिक का निर्माण होता है। उदाहरण के लिए – ऑक्टा सीडीडी और ऑक्टा सीडीएफ को हेप्टा, हेक्सा, पेन्टा और यहां तक कि टेट्रा में परिवर्तित किया जा सकता है – जो अपने जनित पदार्थों से ज्यादा जहरीले होते हैं। डाईऑक्सिन के अंतर्राष्ट्रीय विषाक्तता समानक संस्थानक (TEQ में), डाईऑक्सिन के सस्थानिकों में से 7 तालिका – 2 में दर्शाये गये हैं।

डाईऑक्सिन की विषाक्तता

डाईऑक्सिन के सभी सस्थानिक और डाईऑक्सिन के तरह के सभी यौगिक विषाक्त होते हैं, लेकिन उनकी विषाक्तता, उनके सस्थानिकों पर निर्भर करती है। डाईऑक्सिन के 75 सस्थानिकों में से 7 (तालिका–2) और फ्यूरॉन के 135 सस्थानिकों में से केवल 10, अपनी रासायनिक प्रकृति और गुणों के कारण बहुत ज्यादा विषाक्तता दर्शाते हैं।

2,3,7,8 टीसीडीडी, सबसे ज्यादा विषाक्त होने के कारण इसका प्रयोग विषाक्तता विज्ञान, कैन्सर और प्रतिक्रिया तंत्र के अन्वेषण में किया जाता है। यह एक

माइक्रोक्रिस्टलाइन ठोस, पानी में अघुलनशील, अन्य विलायकों में कम घुलनशील और तापीय स्थिर है। इसका तपीय अपघटन केवल 750°C के ऊपर ही होता है।

मनुष्यों में डाईऑक्सिन जोखिम के स्रोत

पर्यावरण में डाईऑक्सिन का उत्सर्जन दो प्रकार से होता है, पहला अपरोक्ष रूप से डाईऑक्सिन पर्यावरण में प्रवेश करते हैं, जहाँ से वे उत्सर्जित होते हैं, और दूसरा परोक्ष रूप से भूमि, जल और वायुवीय कणों में ये वाष्पीकरण के माध्यम से पहुँचते हैं। वातावरणीय तापमान और वाष्प दाब डाईऑक्सिन यौगिकों के लिए व्यापक स्थिति होती है, जो डाईऑक्सिन यौगिकों के प्रजातीकरण को नियंत्रित करते हैं।

यूरोपीय देशों में हुए शोध से मनुष्यों में डाईऑक्सिन के प्रमुख स्रोत के रूप में खाद्य पदार्थों की पहचान की गयी है। जनसंख्या के कुछ खंड जो नवजात शिशुओं और लोगों की सेवा करते हैं या वो लोग जो उच्च पशु वसा या दूषित भोजन का सेवन करते है, उन लोगो में औसत की तुलना में डाईऑक्सिन के उच्च स्तर देखने को मिले हैं। यूरोपीय आबादी में पशुओं से निर्मित भोज्य पदार्थ लगभग 90 प्रतिशत डाईऑक्सिन मात्रा के लिये जिम्मेदार होते हैं। उन्नत देशों की जनसंख्या में डाईऑक्सिन की 90–98 प्रतिशत मात्रा को बढ़ाने के लिये भोज्य पदार्थो की दैनिक खपत जिम्मेदार होती है।

यूरोपीय जनसंख्या में डाईऑक्सिन की औसत दैनिक खपत 0.9 – 3.0 पिकोग्राम/किलोग्राम के रूप में अनुमान लगाया गया है और औसत शारीरिक वजन के रूप में 70 किलो ग्राम माना गया है। वसारागी गुणों के कारण डाईऑक्सिन मछली, मांस और डेयरी उत्पादों की वसा ऊतकों में जमा हो जाता है।

इन दूषित भोज्य पदार्थों का लोगों द्वारा सेवन करने से ये मानव प्रणाली में प्रवेश करता है, जब लोग इन दूषित खाद्य पदार्थों का बार–बार सेवन करते हैं, तो इसकी मात्रा कई गुना ज्यादा मानव शरीर में एकत्रित होती रहती है, जिसे जैव आवर्धन कहते हैं। मनुष्यों में आसपास के वातावरण की तुलना में जैव आवर्धन के परिमाण स्वरूप डाईऑक्सिन की मात्रा 10,000 गुना ज्यादा होने का अनुमान लगाया गया है। विभिन्न उन्नत देशों की आबादी में डाईऑक्सिन की सूक्ष्म मात्रा मानव वसा ऊतकों में, रक्त और दूध में ज्ञात की गयी है।

पर्यावरणीय दृढ़ता और जैवसंचयन

डाईऑक्सिन की तरह के सभी यौगिकों के समूह वातावरण में स्थायी होते हैं। न तो मिट्टी के रोगाणु और न ही जानवर प्रभावी ढंग से पीसीडीडी एफ को पार्श्व क्लोरीन में तोड़ने के लिए सक्षम है (क्लोरीन स्थान 2,3,7, और 8)। यह बहुत ही धीमी गति से मनुष्यों के शरीर से निष्कासित होते हैं। पराबैंगनी प्रकाश धीरे–धीरे इन यौगिकों को तोड़ने मे सक्षम है। यह यौगिक वसारागी होने के कारण वसा की तरह के वातावरण के लिए तलाश प्रवृत्ति के होते हैं, लेकिन इनकी जलीय घुलनशीलता बहुत ही बुरी होती है, जिस कारण ये यौगिक जलीय वातावरण से जीवों की

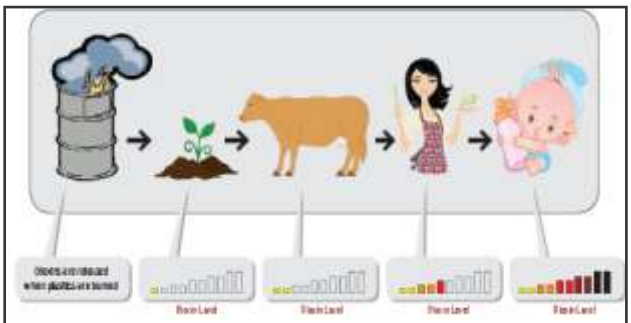

चित्र 4 : डाईऑक्सिन का जैवसंचयन और जैव आवर्धन

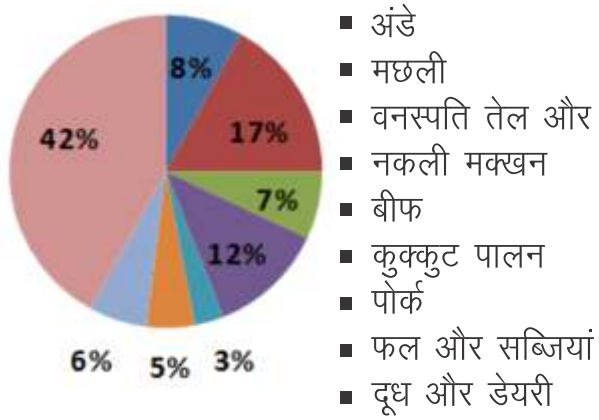

चित्र 5 : विभिन्न प्रकार के दैनिक भोज्य पदार्थों में डाइऑक्सिन की प्रतिशत मात्रा जो हम भोजन के साथ ग्रहण करते हैं।
स्रोतः Dioxins in Foods and Feeds- 2013- Institute of Food and Science technology] U-K-

लिपिड सेल संरचनाओं में प्रवेश करते हैं। इसे जैव संचय कहा जाता है। क्लोरीनीकरण की प्रकिया से इन यौगिकों की स्थिरता और वसारागी प्रवृति बढ़ जाती है। बहुत उच्च क्लोरीन की संख्या इन यौगिकों को जलीय वातावरण में खराब घुलनशीलता प्रदान करती है, हालांकि, इस से उनकी जैव संचय की प्रवृति भी प्रभावित होती है। जैव आवर्धन, जैवसंचयन का ही एक परिणाम होता है। लिपिड में घुलनशील यौगिक सबसे पहले सूक्ष्म जीवों (जैसे– प्लवक) में संचित होते हैं। पादप प्लवक को पशु प्लवक द्वारा, पशु प्लवक को अकशेरुकी द्वारा (जैसे– कीड़ों के रूप में), इनको छोटी मछलियों द्वारा और इन छोटी मछलियों को बड़ी मछलियों और सील मछली के द्वारा खाया जाता है । पौष्टिकता के हर स्तर पर, इन यौगिकों की मात्रा बढ़ती रहती है, क्योंकि यह स्थायी प्रवृति के रसायन 'बर्न ऑफ' नहीं होते हैं, जब उच्चस्तरीय जीव शिकार जीव की वसा का उपयोग ऊर्जा के उत्पादन के लिये करते हैं।

जैवसंचयन और जैव आवर्धन के कारण जो प्रजाति पौष्टिकता पिरामिड के शीर्ष पर होती है, उनमें डाईऑक्सिन की तरह के यौगिकों का सबसे ज्यादा प्रभाव देखने को मिलता है। यूरोप में, सफेद पूंछ वाले बाज और सील की कुछ प्रजातियाँ लगातार बढ़ते जैविक प्रदूषण की विषाक्तता के कारण विलुप्त होने के कगार पर खड़ी है। इसी तरह, अमेरिका में गंजे बाज की आबादी भी कम होती जा रही है क्योंकि जैविक प्रदूषण के कारण अंडे के छिलके पतले होते जा रहे हैं, जिसके कारण अंडों में बच्चे नहीं विकसित हो पा रहे हैं।

मनुष्य पौष्टिकता पिरामिड में सबसे शीर्ष पर रहता है, विशेष रूप से नवजात शिशु (चित्र–4) विशेष कर स्तनपान करने वाले नवजात शिशुओं में इन यौगिको की मात्रा 800 पिकोग्राम टिईक्यू/प्रतिदिन पायी गयी है, जबकि शरीर के वजन के आधार पर अनुमानित खुराक 242 पिकोग्राम/टिईक्यू किग्रा/प्रति दिन मानी गयी थी।

वयस्कों में भोजन के कई स्रोत होने के कारण डाईऑक्सिन के प्रसार का जोखिम बहुत ही कम होता है। वयस्कों में डाईऑक्सिन की मात्रा लगभग 10–100 पिकोग्राम/टिईक्यू किलोग्राम/प्रतिदिन होती है, अगर हम एक ही प्रकार का भोजन करने वालों से इसकी तुलना करे जैसे कि बाज और सील जो सिर्फ मछली खाते हैं, में डाईऑक्सिन की मात्रा ज्यादा 9000– 340,000 पिकोग्राम/टिईक्यू/किलोग्राम/प्रतिदिन होती है । विभिन्न प्रकार के दैनिक भोज्य पदार्थों में डाइऑक्सिन की प्रतिशत मात्रा जो हम भोजन के साथ ग्रहण करते हैं चित्र–5 में दिखाया गया है।

डाईऑक्सिन संदूषण की घटनाएँ

1949 में, पश्चिम वर्जीनिया के मोनसेंटो शाकनाशी उत्पादन संयंत्र, (2,4,5– टी नाइट्रो) का एक राहत वाल्व खोलने से 240 लोग प्रभावित हुये थे।

1963 में, एम्सटर्डम के पास एक फिलिप्स–डुफर संयंत्र (अब सोल्वे समूह) में विस्फोट से डाईऑक्सिन बादल बहुत अधिक मात्रा में बने जिसे बाद में विस्फोट करके हटाया गया। यह संयंत्र दुर्घटना के बाद डाईऑक्सिन से इतना ज्यादा प्रभावित हुआ कि इस संयंत्र को समाप्त करके इसकी अंतःस्थापित कंकरीट को भी समुद्र में फेंक दिया गया।

1976 में इटली की सेव्सो नामक रासायनिक कारखाने में 2,3,7,8 टेट्रा क्लोरो डाई बेंजो पैरा डाई आक्सिन दुर्घटना के कारण 15 किलोमीटर दूर क्षेत्रों में फैल गया था, जिससे 37000 लोग प्रभावित हुए थे, इस घटना के व्यापक अध्ययन के बाद मानव स्वास्थ पर इसके असर का पता चला। वियतनाम युद्ध में शाकनाशी के रूप में एजेंट ऑरेंज का प्रयोग डीफोलीयंट के रूप में किया गया, जो कि कैंसर व मधुमेह जैसी घातक बीमारी के लिए जिम्मेदार हैं।

1999 में बेल्जियम में भी उच्च स्तर पर मुर्गी के अंडे में डाईऑक्सिन पाया गया। इसके बाद दूषित पशु आधारित खाद्य पदार्थ (मुर्गी पालन, अंडे, सुअर की मांस) में कई अन्य देशों में भी इसकी उच्च सांद्रता दर्ज की गई, इन सब का मुख्य कारण पशुओं के चारे का डाईऑक्सिन से प्रदूषित होना था।

मानव विषाक्तता के कुछ मामलो को भी सूचित किया

तालिका 2 : जानवरों पर किये गये टीसीडीडी के अध्ययन के परिणाम		
परिणाम	**प्रभावित प्राणी**	**स्रोत**
जन्म दोष (टेराटेजेनिक)	चूहे, हेम्सटर और गिनी पिग पक्षी और मछली	Toxicology 229 (3):2125. doi:10.1016/j.tox.2006.10.019. Toxicol. Sci. 47 (1): 86–92. 92. doi:10.1093/toxsci/47.1.86.
कैंसर (स्तनधारी फेफड़ों में, मुख / नाक केविटी, थायराइड और अधिवृक्क ग्रंथि यकृत, स्क्वैमस सेल कार्सिनोमा, और विभिन्न पशु हेपेटो कार्सिनोमा	कृन्तक और मछली	National Toxicology Program technical report series (521): 4–232. Toxicol. Lett. 112–113: 289–301. doi: 10.1016/S0378-4274(99)00239-8.
यकृत विषाक्तता	कृन्तक मुर्गी, और मछली	Toxicologic pathology 25 (1): 72–9. doi:10.1177/019262339702500114. Toxicol. Pharmacol. 129 (4): 317–27. doi:10.1016/S1532-0456(01)00199-5
अंतःस्त्रावी विघटन	कृन्तक और मछली	Food additives and contaminants **17**(4): 27588. doi:10.1080/026520300283351. Toxicol. Sci. **90** (2): 490–9. doi:10.1 093 / toxsci/kfj085.
प्रतिरक्षादमन	कृन्तक और मछली	Environ. Health Perspect. (Environmental Health Perspectives). 107 Suppl 5: 687–91. doi:10.2307/3434328. Immunopathol. 12 (1–4):26380. doi:10.1016 /0165-2427(86)90130-3.

गया है। सबसे उल्लेखनीय घटना वर्ष 2004 की है, जब उक्रेन के राष्ट्रपति का चेहरा क्लोराकने द्वारा विकृत कर दिया गया था। लगभग सभी देश इस संदूषण की समस्या से प्रभवित हो रहे हैं, लेकिन ज्यादातर मामले औद्योगिक देशों से संबंधित है, लेकिन उनके पास पर्याप्त संदूषण की निगरानी के साधन, खतरे के प्रति जागरूकता, और बेहतर नियामक नियंत्रक डाई आक्सिन समस्याओं का पता लगाने के लिए उपलब्ध है ।

वर्ष 2005 उत्तर प्रदेश, लखनऊ के क्वीन्स मेरी अस्पताल के अपशिष्ट दहन के कारण, अस्पताल के आस पास के मुर्गी के अंडों में डाईऑक्सिन, पी.सी.बी. और हेक्साक्लोरोबेंजीन का स्तर 19.8 पिकोग्राम / ग्राम देखने को मिला ।

2008 में आयरलैंड में सूअर का मांस और पोर्क उत्पादों में डाई ऑक्सिन का स्तर सुरक्षित स्तर से 200 गुना अधिक पाया गया।

गुवाहाटी में जुलाई 2013 में, नगर निगम के कचरे अस्पताल के कचरे और ऑटोमोबाइल उत्सर्जन के दहन के माध्यम से हवा में डाईऑक्सिन निस्तारित हुई, जो राज्य में कैंसर के प्रसार के पीछे प्रमुख कारण थी।

डाईऑक्सिन का मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव

डाईऑक्सिन अत्यधिक विषाक्त होता है, जानवरों पर हुए अध्ययन के आधार से यह ज्ञात हुआ है कि,

डाईऑक्सिन, प्रजनन और विकास संबंधी समस्याओं को जन्म देता है, प्रतिरक्षा तंत्र को नुकसान पहुंचाता है, हार्मोन की अभिक्रिया में हस्तक्षेप करता है और कैंसर को जन्म देने में भी सक्षम माना गया है। सबसे अच्छा उदाहरण क्लोराक्ने है। औद्योगिक कारखानों में काम करने वाले व्यक्तियों में इसके कई लक्षण देखने को मिलते हैं, लेकिन यह बता पाना मुश्किल है कि ये लक्षण डाईऑक्सिन के कारण है या अन्य रसायनों जैसे–क्लोरोफिनॉल ,क्लोरोफिनॉक्सी एसिड और अन्य विलयकों के कारण है। वयस्कों में संदिग्ध प्रभाव जैसे– यकृत की क्षति, हीम चयापचय में परिवर्तन, सीरम लिपिड स्तर, थायराइड के कार्य में परिवर्तन और साथ ही मधुमेह और प्रतिरक्षा तंत्र को भी प्रभावित करता हैं।

जानवरों पर किये गये अध्ययन के अनुसार, वयस्कों की तुलना में बढ़ते बच्चों में अधिक घातक प्रभाव देखने को मिलते हैं। इनमे दांत के विकास की गड़बड़ी और यौन विकास के विकार शामिल हैं। प्रतिक्रियाओं में बदलाव का एक उदाहरण सेवोसों आपदा के बाद एक अध्ययन में देखा गया कि इस आपदा से प्रभावित पुरुषों में शुक्राणुओं की संख्या और उनकी गतिशीलता में कमी आयी है।

गर्भावस्था में पर्यावरण विष के रूप में डाईऑक्सिन और डाईऑक्सिन की तरह के यौगिकों के संपर्क में आने के कारण, यकृत की क्रियाशीलता में परिवर्तन, थायराइड हार्मोन के स्तर में कमी, सफेद रक्त कोशिका के स्तर में परिवर्तन, शामिल हैं। जिनके कारण नवजात शिशुओं के सीखने और बुद्धि के परीक्षणों के प्रदर्शन में भी कमी पायी गयी है।

"हाल के अध्ययनों से पता चला है कि डाईऑक्सिन के उच्च मात्रा के कारण मनुष्यों में जन्म लिंग अनुपात परिवर्तन देखने को मिला है। जिसके कारण पुरुषों की तुलना में अधिक महिलायें पैदा होती है।"

पशुओं में विषाक्त प्रभाव

मनुष्यों में नियंत्रित खुराक प्रयोगों की कमी के कारण

तालिका – 3 : खाद्य पदार्थों में डाईऑक्सिन की स्वीकृत टी ई क्यू सीमा

मानक टी ई क्यू या पी पी टी में	मछली और घोंघा	दूध और दूध उत्पादों में	पिग के मांस में में	अंडों में	गाय के मांस में
अमेरिका ई पी ऐ	5	–	–	1	–
यूरोपीय संघ	4	3	1	3	3
ऑस्ट्रेलिया	–	3	2	5	6

स्रोत : http://toxicslink.org/docs/DIOXIN-Factsheet44.pdf

तालिका–4 : डाईऑक्सिन की सहनीय दैनिक खपत (टीडीआई)

नियामक संस्था	टी.डी.आई. (पिकोग्राम/किलोग्राम शारीरिक वज़न/दिन)
डब्ल्यू.एच.ओ.	1–4
एफ.डी.ए.ई.पी.ए.	0.7
यूरोपीय संघ	1–4
जापान	4
कनाडा	2.3
ऑस्ट्रेलिया	2.3
संयुक्त एफ.ए.ओ./डब्ल्यू.एच.ओ. खाद्य और पेय विशेषज्ञ	2.3
भारत	कोई मानक नहीं है।

स्रोत :http://toxicslink.org/docs/DIOXIN-Factsheet44.pdf

भारत के लिए मुद्दे

- भोजन में डाईऑक्सिन सामग्री पर कोई मानक नहीं है (TEQ सीमा नहीं है)।
- डाईऑक्सिन के लिए कोई भी टीडीआई की सीमा नहीं निर्धारित की गयी है।
- भोजन सामग्री में डाईऑक्सिन का बहुत कम डेटा उपलब्ध है।
- इस मुद्दे से निपटने के लिए बहुत कम प्रयोगशाला उपलब्ध है।
- इस मुद्दे पर सार्वजनिक जागरूकता बहुत कम है।

इसका मनुष्यों के शरीर पर दुष्प्रभाव बता पाना मुश्किल होता है। वहीं पशुओं में किये गये अध्ययनों से यह पता चलता है, कि डाईऑक्सिन के कारण विभिन्न प्रकार के विषाक्त प्रभाव देखने को मिलते हैं, जिनमें टेराटोजेनिक, म्यूटाजेनिक, कैंसर, इम्यूनोटाक्सिक और यकृत विषाक्तता विशेष रूप से देखने को मिलती है । इसके अलावा, कई अंतः स्रावी और विकास के कारक सिस्टम में परिवर्तन पाया जाता है। सबसे ज्यादा संवेदनशील प्रभाव विभिन्न प्रजातियों के, प्रतिरक्षा तंत्र, प्रजनन तंत्र और विकास संबन्धित विकार देखने को मिले हैं।

डाईऑक्सिन की LD_{50} भी सबसे उल्लेखनीय असमानता हेम्सटर और गिनी पिग की प्रजातियों में देखने को मिलती है। गिनी पिग के लिए मौखिक LD_{50} मात्रा बहुत कम 0.5–2 माइक्रोग्राम/किग्रा शरीर के वजन के रूप में, जबकि हेम्सटर में मौखिक

भारतीय परिदृश्य

भारत में डाईऑक्सिन और फ्यूरेंस के निस्तार की वार्षिक अनुमानित मात्रा लगभग 8656.55 टी ई क्यू लगायी गयी है। देश में डाईऑक्सिन के निस्तार के लिये सबसे ज्यादा अपशिष्ट भट्टीयो का लगभग 66.7% तक योगदान है। मुंबई में लगभग प्रति वर्ष 10,000 ग्राम डाईऑक्सिन/फ्यूरेंस वातावरण में नगरपालिका ठोस अपशिष्ट (एमएसडब्ल्यू) और अपशिष्ट भराव क्षेत्रों में खुले में प्रदाह करने के कारण निस्तारित होते हैं। इन विवरणों से साफ पता चलता है कि डाईऑक्सिन का निस्तार महत्त्वपूर्ण मात्रा में भारत में भी व्याप्त होते हुए इसके कोई मानक नहीं निर्धारित किये गये हैं।

LD_{50} की मात्रा 1–5 मिलीग्राम/किग्रा शरीर के वजन के रूप में होती है, यह अन्तर हजार गुना या अधिक है, और यहां तक कि चूहे की प्रजातियों के बीच में भी हजार मतभेद हो सकते हैं।

खाद्य पदार्थों में डाईऑक्सिन के लिये अधिनियम

कई देशों में, खाद्य पदार्थों में डाईऑक्सिन की मात्रा को अच्छी तरह से विनियमित किया गया है। मानव स्वास्थ्य पर इसके प्रभाव से बचने के लिए खाद्य वस्तुओं में डाईऑक्सिन सामग्री के लिए सीमा निर्धारित कर दी गयी है। डाईऑक्सिन आमतौर पर विषाक्तता समकक्ष भागों के प्रति ट्रिलियन (ppt) या विषाक्तता बराबर मात्रा (टी ई क्यू एस) के रूप में मापा जाता है। विषाक्त समकक्ष रिपोर्ट, पी. सी. डी. डी. और पी. सी. डी. एफ. यौगिकों के मिश्रणों के आधार पर इनकी विषाक्तता मापी जाती है। खाद्य

तालिका 5 : डब्लू.एच.ओ. के अनुसार पीसीडीडी/एफएस का अंडों में स्तर

वसा के प्रतिग्राम			अंडों के ताजे वजन का प्रतिग्राम	
डबलू एच ओ– टी ई क्यू में पी सी डी डी/एफ एस का स्तर पिकोग्राम/ग्राम	मापन स्तर	यूरोपीय संघ की सीमा	मापन स्तर	यूरोपीय संघ की सीमा
केरल	13.91	3.0	1.82	1.0
लखनऊ	19.80	3.0	2.48	1.0

स्रोत : Arisawa K, Takeda H, Mikasa H. 2005. "Background exposure to PCDDs/PCDFs/PCBs and its potential health effects: a review of epidemiologic studies". J. Med. Invest. 52 (1–2): 10–21.

तालिका 6 : विश्व स्वास्थ्य संगठन मान विभिन्न देशों के अलग–अलग अंडों के पूल के नमूनों में डाईऑक्सिन का स्तर (पिकोग्राम/ग्राम)				
देश/स्थान	वर्ष	समूह	अंडों की सं./ मापित नमूने	वसा में मापी मात्रा पिकोग्राम/ग्राम (WHO-TEQ) में
ब्रिटेन, न्यूकैसल (पृष्ठभूमि स्तर)	2000	मुक्त सीमा	3/1 पूल	0.2
जर्मनी, लोअर सक्सोनी	1998	मुक्त सीमा	60/6 पूल	1.28
ब्रिटेन, न्यूकैसल (पूल के नमूनों से सबसे कम स्तर)	2000	मुक्त सीमा	3/1 पूल	1.5
चेक गणराज्य, उस्ती नाद लाबेम	2005	मुक्त सीमा	6/1 पूल	2.9
जर्मनी, बवेरिया	1992	मुक्त सीमा	370/37 पूल	3.2
चेक गणराज्य, क्लाटोवी	2003	मुक्त सीमा	12	3.4
बेलारूस, बोल्शोई ट्रोस्टेनेस	2005	मुक्त सीमा	6/1 पूल	3.91
चेक गणराज्य, लाये नाद लाबेम	2004	मुक्त सीमा	4	6.8
जर्मनी, रहेन्फेल्डेन (पूल के नमूनों से सबसे कम स्तर)	1996	मुक्त सीमा	–	10.6
स्लोवाकिया, कोकशॉव–बाक्सा और वालालिकी	2005	मुक्त सीमा	6/1 पूल	11.52
भारत, लखनऊ	2005	मुक्त सीमा	4/1 पूल	19.8
केन्या, देंडोरा	2004	मुक्त सीमा	6/1 पूल	22.92
ब्रिटेन, न्यूकैसल (पूल के नमूनों से उच्चतम स्तर)	2000	मुक्त सीमा	3/1 पूल	31

पदार्थों में डाईऑक्सिन संदूषण की जाँच करने के लिये इसकी अधिकतम सीमा (टी ई क्यू) निर्धारित कर दी गयी है। विभिन्न खाद्य वस्तुओं में डाईऑक्सिन सामग्री के लिए सीमा विषाक्तता समानक कारक (TEQ), खाद्य पदार्थों में डाईऑक्सिन संदूषण की जांच करने के लिए निर्धारित कर दी गयी है (तालिका – 3)।

सहनीय दैनिक खपत (Tolerable Daily Intake

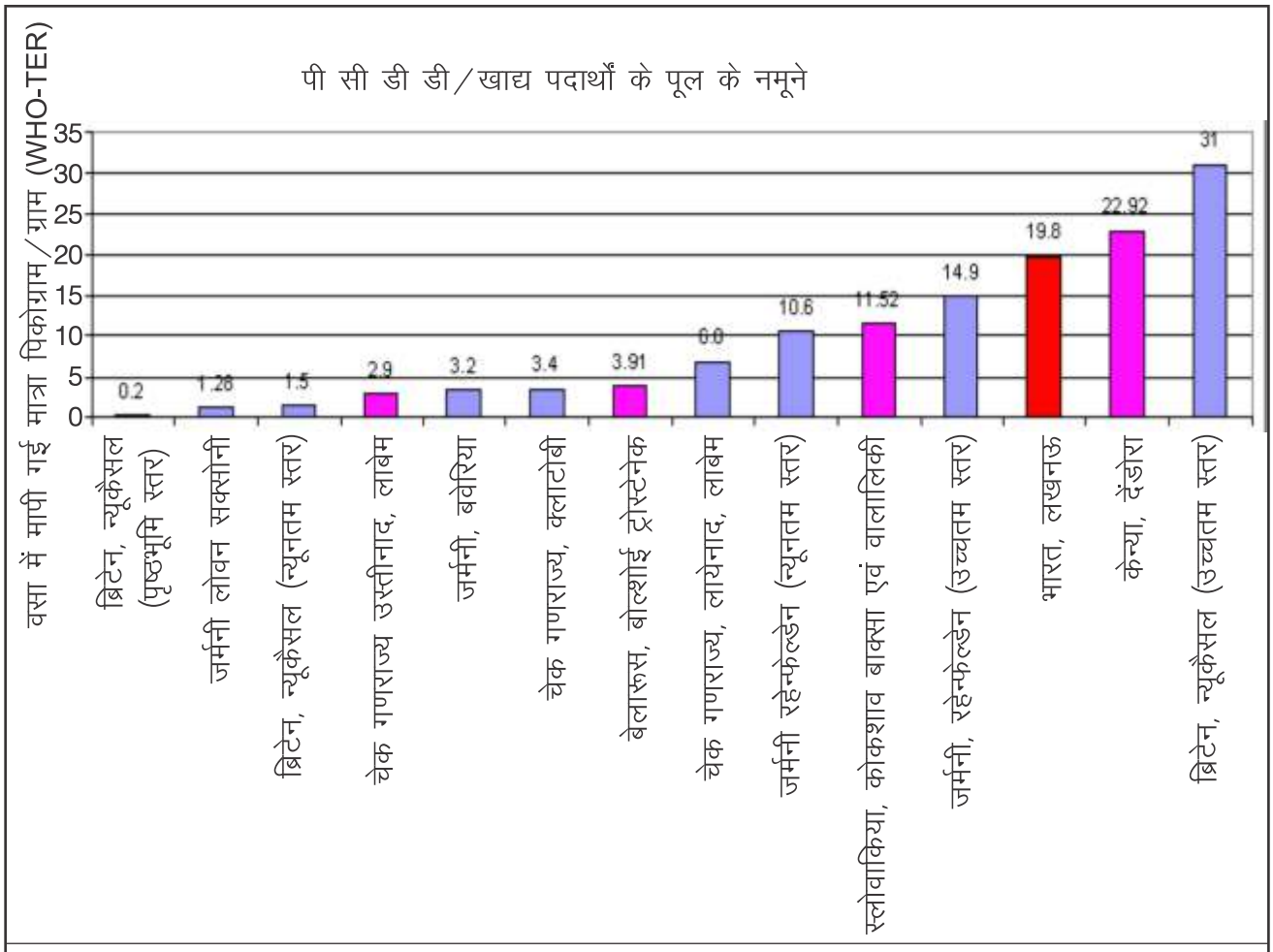

चित्र 6 : विभिन्न देशों के खाद्य पदार्थों में डाईऑक्सिन का स्तर (पिकोग्राम/ग्राम) दिखाया गया है।

(TDI),स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावो की गणना करने के लिये एक सूचकांक है, जो हम दैनिक रूप में अपने सम्पूर्ण जीवनकाल में लगातार लेते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन–एफएओ, कोडेक्स अलीमेंटरियस आयोग सहित बहुत सी अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों ने मनुष्य में डाईऑक्सिन सेवन के लिए टीडीआई सीमा (तालिका –4) निर्धारित की है। कई देशों ने अपने भोजन के माध्यम से विषाक्त पदार्थों के सेवन की अनुमति की जगह पर, इससे सम्बन्धित अधिनियम नियमन डाल दिये हैं।

भारतीय भोजन में डाईऑक्सिन पर शोध

2001 में जापान की संस्थान, पर्यावरण विज्ञान और प्रौद्योगिकी, योकोहामा राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के द्वारा भारतीय मछलियों, मांस और वन्य जीवों से लिये गये नमूनों में पी.सी.डी.डी. और पी.सी.डी.एफ. का स्तर इस क्रम में पाया गया :

देशी चिकन<बकरी/भेड़ के बच्चे<मछलियों<नदी <डाल्फिन<परभक्षी<पक्षी

मछलियों में कुल पी सी डी डी एस/पी सी डी एफ एस की सर्वोच्च एकाग्रता (वसा के 130 पिकोग्राम/ग्राम भार निहित) पायी गयी।

मांस उत्पादों में पी सी डी डी/पी सी डी एफ की सांद्रता औसतन मछलियों से 2–5 गुना कम पायी गयी है।

डॉल्फिन के यकृत ऊतकों में पी सी डी डी/पी सी डी एफ की सांद्रता लगभग तीन गुना अधिक देखने को मिली।

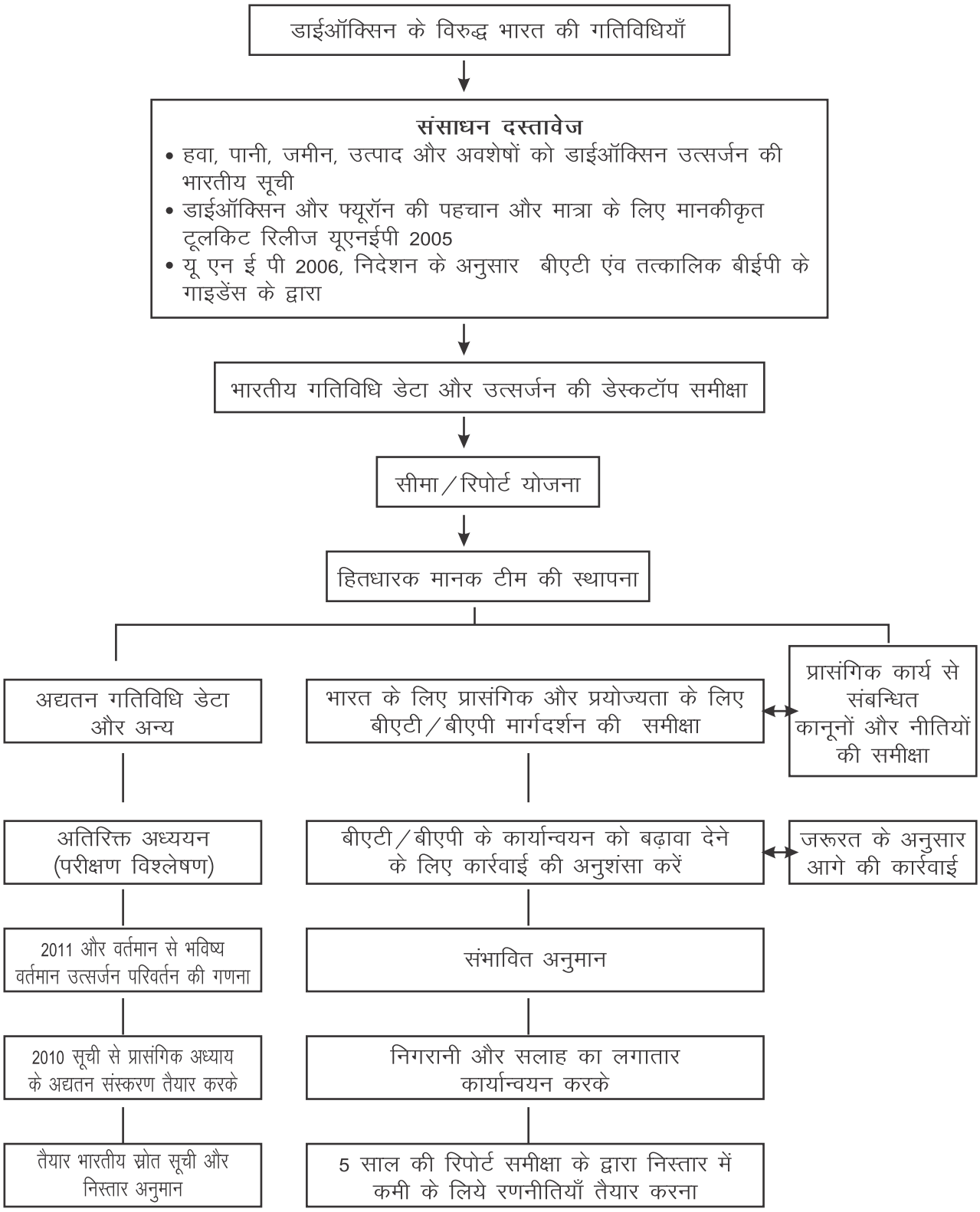

चित्र 7 : डाईआक्सिन के विरूद्ध भारत की गतिविधियाँ

स्रोतः National Environmental Engineering Research Institute, NEERI- Air Quality Assessment, Emissions Inventory and Source Apportionment Studies: Mumbai- New Delhi : Central Pollution Control Board (CPCB), 2010

अंतरराष्ट्रीय पीओ.पीएस. उन्मूलन तंत्र (आई पी ई एन), 2005

डाईऑक्सिन के संदूषण का स्तर अण्डों में यूरोपीय संघ के सीमा से 4 गुना ज्यादा देखने को मिला ।

अंडों में पीओपी का मापा स्तर तालिका – 5 व 6 में दिया गया है–

डबलू एच ओ–टी ई क्यू मान विभिन्न देशों के अलग–अलग अंडो के पूल के नमूनों में डाईऑक्सिन का स्तर (पिकोग्राम/ग्राम) तालिका – 6 और चित्र – 6 में दर्शाया गया है।

खाद्य डाईऑक्सिन जोखिम को कम करने के लिए कोडेक्स दिशानिर्देश

सबसे पहले उन कृषि क्षेत्रों की पहचान की जाये जहाँ डाईऑक्सिन का संदूषण स्थानीय उत्सर्जन, दुर्घटनाओं या दूषित सामग्री के अवैध प्रसार के कारण बढ़ रहा है।

मिट्टी के लिए और विशेष प्रकार की कृषि के लिये मार्गदर्शन मूल्यों की स्थापना (जैसे, चराई या उपयुक्त कृषि तकनीकों के उपयोग की सीमा)

संभवतः दूषित चारा और चारा अवयवों की पहचान करके राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित दिशानिर्देश के स्तर या अधिकतम सीमा, यदि उपलब्ध है, और कम से कम या विसंदूषित करके (जैसे, मछली के तेल के शोधन) गैर–अनुपालन चारा और चारा सामग्री, और महत्वपूर्ण खाद्य विनिर्माण प्रक्रियाओं (जैसे– कृत्रिम तरीके से प्रत्यक्ष ऊष्मा द्वारा सुखाने में) की पहचान और नियंत्रित करके ।

डाईआक्सिन रोकथाम और जोखिम नियंत्रण

वैश्विक स्तर पर डाईआक्सिन और फ्यूरेंस के उत्सर्जन का मुख्य स्रोत दहन प्रक्रिया को माना गया है। अभी तक ज्ञात डाईआक्सिन संदूषण के स्रोतों में दहन प्रक्रियाओं का योगदान 95 प्रतिशत से अधिक है। कार्बनिक यौगिकों का, संक्रमण धातुओं और क्लोरीनयुक्त यौगिकों की उपस्थिति में तापीय अपघटन करने पर डाईआक्सिन और फ्यूरेंस का गठन होता है। यह भी ज्ञात है कि डाईऑक्सिन रासायनिक प्रक्रिया के दौरान 200°C से ऊपर तापमान पर गठित होते हैं, और 800°C पर पूर्ण रूप से नष्ट हो जाते हैं । डाईआक्सिन का गठन तभी होता जब तापमान 200°C से 400°C के बीच स्थित होता है। क्लोरीन की उपलब्धता और प्रक्रिया का तापमान डाईआक्सिन गठन के लिए जिम्मेदार दो महत्वपूर्ण कारक होते हैं।

भठ्ठियों में डाईआक्सिन के उत्सर्जन को नियंत्रित करके

आधुनिक भट्ठी संयंत्र को इस तरह बनाया और संचालित किया जाता है कि सामान्य संचालन की शर्तों के तहत बहुत कम उत्सर्जन के साथ कचरे के दहनशील हिस्से का लगभग पूर्ण विनाश कर सकते हैं। नगरपालिका ठोस अपशिष्ट खतरनाक अपशिष्ट भट्ठी संयंत्र से डाईआक्सिन और फ्यूरेंस के उत्सर्जन को कम करने के लिए सामान्यतः निम्नलिखित व्यावहारिक उपायों को अपनाया गया है–.

- कचरे का उचित अलगाव करके कचरे में पीवीसी की मात्रा को नियंत्रित करके, क्योंकि पीवीसी डाईआक्सिन के गठन को प्रभावित करता है।
- क्लोरीन की डाईआक्सिन और फ्यूरेंस के गठन में एक निश्चित भूमिका होती है, इस कारण क्लोरीन की न्यूनतम मात्रा रखनी चाहिए।
- गीले कचरा के दहन से बचना चाहिए, क्योंकि गीला कचरा डाईऑक्सिन का अधिक उत्पादन करता है।
- कचरे के पूर्ण विनाश को प्राप्त करने लिए अधिक हवा की आपूर्ति की आवश्यकता होती है, जिसके लिये अच्छा दहन कक्ष होना चाहिये।
- नगर निगम के कचरे की दहन प्रक्रिया के समय कम से कम 2 सेकंड के लिए दहन भट्ठी के तापमान को 850°C तक बढाना चाहिए एवं खतरनाक अपशिष्टों के लिए दहन भट्ठी के तापमान को 1100°C तक बढ़ाना चाहिए,

क्योंकि इससे डाईऑक्सिन के यौगिक अपघटित हो जाते हैं।

- ग्रिप गैस को त्वरित ठंडा 200°C से 400°C के बीच करके डाईआक्सिन के पुनः बनने की प्रक्रिया को कम से कम किया जा सकता है।
- बायलर ट्यूब की नियमित सफाई करने से फ्लाई ऐश के निर्माण को रोका जा सकता है, जो डाईआक्सिन के निर्माण में एक उत्प्रेरक की भांति कार्य करते हैं।
- सक्रिय कार्बन को संचालित इंजेक्शन प्रणाली द्वारा पाउडर के रूप में अलार्म चेतावनी प्रणाली के साथ समानांतर में चलाया जाता है, जो किसी भी डाईआक्सिन पर कब्जा करके सुधार करता है।
- डाईआक्सिन उत्सर्जन सहित दहन उत्पादों की नियमित निगरानी करके।

रासायनिक अपशिष्ट के उपचार द्वारा डाईआक्सिन उत्सर्जन का नियंत्रण

रासायनिक अपशिष्ट के उपचार द्वारा डाईआक्सिन उत्सर्जन को नियंत्रित करने के लिये उपाय निम्नलिखित हैं –

- रोटरी भट्ठी पर 1000°C से अधिक तापमान पर काम करना चाहिए ।
- ग्रिप गैस परिचालन के माध्यमिक चैम्बर में कम से कम 2 सेकंड के लिए तापमान 1100°C से 1250°C बीच रखना चाहिए।
- गर्म बॉयलर में अपशिष्ट का तापमान 400°C बनाए रखना चाहिए ।
- गीले स्क्रबर की कार्यकुशलता का उपयोग (ग्रिप गैस से हाइड्रोजन क्लोराइड दूर करके) ग्रिप गैस का तापमान अचानक 200°C से नीचे करके डाईआक्सिन के निर्माण को कम किया जा सकता है।
- अलार्म चेतावनी प्रणाली के साथ समानांतर में चलाये जा रहे सक्रिय कार्बन इंजेक्शन प्रणाली, की नियमित मैनुअल जाँच करके ।
- संरचना फिल्टर प्रणाली द्वारा, ग्रिप गैस के साथ–साथ फ्लाई ऐश उत्सर्जन को भी नियंत्रित करके।

सीमेंट भट्ठों पर डाईआक्सिन उत्सर्जन नियंत्रण

सीमेंट भट्ठे संभावित रूप में डाईआक्सिन उत्सर्जन के स्रोत माने जाते हैं। सीमेंट उद्योगों के लिए कच्चे माल के रूप में उपयोग किये जाने वाले पदार्थ डाईआक्सिन और फ्यूरेंस की अत्यधिक विषाक्त उत्सर्जन के लिए जिम्मेदार होते है।

कच्चे माल में कुछ बदलाव करके कुछ संयंत्र से डाईआक्सिन और फ्यूरेंस उत्सर्जन को रोकने के लिए सफल उपाय किया गया है, लेकिन प्रस्तावित विकल्प भी डाईआक्सिन अग्रदूत से मुक्त नहीं होते हैं।

वायु प्रदूषण नियंत्रण उपकरण (ए पी सी डी) के प्रवेश पर तापमान नियंत्रण, डाईआक्सिन उत्सर्जन को रोकने के लिए एक विकल्प हो सकता है। डाईआक्सिन उत्सर्जन और ए पी सी डी इनलेट तापमान के बीच अनुक्रमोनुपाती संबंध होता है। उचित डिजाइन और रखरखाव ग्रिप गैस का तापमान को कम कर सकते हैं। अतिरिक्त पानी छिड़काव और हवा शमन डाईआक्सिन के गठन को रोकने के लिए, तापमान को नियंत्रण करने के लिए स्थापित किया जा सकता है ।

डाईआक्सिन के लिए हाल ही में कुछ अन्य नियंत्रण विकल्प स्थापित किये गये है, लेकिन ये भी महंगे और लागू करने के लिए समस्याग्रस्त हैं। गोर बैग्स (Remedia उत्प्रेरक फिल्टर प्रणाली) के द्वारा निकास गैसों के साथ विविक्त को भी साफ कर रहे है।इस प्रणाली से कथित तौर पर काफी डाईऑक्सिन उत्सर्जन (90 प्रतिशत से अधिक) को कम किया जा सकता है।

डाईऑक्सिन की निगरानी

खाद्य पदार्थों और मानव दूध में पी सी डी डी, पी सी डी एफ और पी सी बी की निगरानी करें। डब्ल्यूएचओ

को 1976 के बाद से इस तरह की निगरानी में शामिल किया गया है, और यह सुगठित तरह से अंतरराष्ट्रीय स्तर पर किया गया था। डाईऑक्सिन और इससे संबंधित यौगिकों की पहचान के लिये हाई रेसोल्यूशन गैस क्रोमैटोग्राफी/मास स्पेक्ट्रोमेट्री (एच आर जी सी /एच आर एम एस) का उपयोग करते है। डाईऑक्सिन के विरूद्ध भारत की गतिविधियाँ चित्र–7 में दी गयी हैं।

रोकथाम में सार्वजनिक भूमिका

आम नागरिक विषाक्त पदार्थों को कम करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। नागरिकों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है, जहां खुले में दहन, अपशिष्ट के दहन और बायोमास के दहन डाईऑक्सिन के स्रोत होते हैं। आम जनता को प्रोत्साहित किया जाये कि वह घरेलू अपशिष्टों का उपयोग जैविक खाद बनाने के लिये करें , घरेलू अपशिष्टों का जहाँ तक सम्भव हो पुनः उपयोग करे, जिससे इन अपशिष्टों के दहन में कमी लायी जा सके। स्कूलों में भी जागरूकता पैदा करके एक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी जा सकती है।

वैश्विक स्तर पर कार्बनिक प्रदूषण के विरुद्ध किये गये प्रयास (पीओपी)

दीर्घ स्थायी तथा कार्बनिक प्रदूषकों (पीओपी) को अधिकारी कार्बनिक पदार्थ श्रेणी में रखा गया है जो, विषाक्त विशेषताओं से ग्रस्त, दीर्घ स्थायी तथा जैवसंचयन की प्रवृति रखते हैं , लंबी दूरी की सीमा पार कर वायुमंडलीय परिवहन में प्रवेश करते हैं, और ये महत्वपूर्ण प्रतिकूल प्रभाव (मानव स्वास्थ्य और आस– पास के पर्यावरण) डालते हैं । डाईऑक्सिन और फ्यूरेंस दृढ़ संग्रही कार्बनिक प्रदूषक (पीओपी) के रूप में पहचान की गई है। मार्च 1998 के मसौदे के तहत संयुक्त राष्ट्र– ईसीई प्रोटोकॉल में 14 अन्य दृढ़ संग्रही कार्बनिक यौगिकों के साथ डाईऑक्सिन और फ्यूरेंस को शामिल किया गया था, जो 16 सबसे खतरनाक और दृढ़ संग्रही प्रदूषक के रूप में पहचाने जाते है।

आर्थिक संक्रमण (सीईटी) के तहत, यूक्रेन, पोलैंड, चेक गणराज्य, स्लोवाकिया, हंगरी, क्रोशिया और स्लोवेनिया के साथ कई देश ने पीओपी पदार्थों के सालाना उत्सर्जन को कम करने के लिए सहमत हो गए हैं, और अनुबंध III में सूचीबद्ध किये गये थे।

भारत भी बेसेल, स्टॉकहोम सम्मेलन में हस्ताक्षरकर्ता बन के खतरनाक कचरे के खिलाफ वैश्विक लड़ाई का एक हिस्सा बना। दक्षिण एशियाई देशों में लगातार बढ़ते दीर्घ स्थायी कार्बनिक प्रदूषक (पीओपी) की स्थिति के बारे में जानकारी एकत्रित करने के लिये संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के तहत एक क्षेत्रीय कार्यशाला, भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान (IITR), लखनऊ में वर्ष 1995 आयोजित की गयी। दृढ़ संग्रही कार्बनिक प्रदूषकों (पीओपी) और खतरनाक वायु प्रदूषण से निपटने के लिए इनकी व्यापक माप, उपचार प्रौद्योगिकी की जानकारी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। भविष्य की पीढ़ी को बेहतर पर्यावरण प्रदान करने के लिये इन घातक प्रदूषकों को रणनीति बनाकर चरणबद्ध तरीके से समाप्त किया जाना चाहिए।

डबल फॉरटीफाइड नमक : एक नई सोच

मुकुल दास एवं सुमिता दीक्षित

खाद्य विषविज्ञान प्रभाग, खाद्य, औषधि एवं रसायन विषविज्ञान विभाग
सी.एस.आई.आर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
विषविज्ञान भवन, 31 महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ, 226001, उत्तर प्रदेश, भारत

पिछले दो दशकों में वैश्विक कुपोषण तेजी से बढ़ा है। सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी मानव में बहुत सारी बीमारियों को जन्म देती है। इसलिए सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे विटामिन और खनिज, बहुत कम मात्रा में नियमित रूप से मानव शरीर के विकास के लिए आवश्यक हैं।

खनिज जैसे लौह (आयरन), आयोडीन, कैल्शियम और जस्ता की कमी से मानव शरीर में कई तरह की बीमारियाँ या विकार उत्पन्न हो सकते है। सूक्ष्म पोषक तत्व, विशेष रूप से आयोडीन और लौह की कमी दुनिया की आबादी के एक तिहाई से अधिक लोगों को गंभीर रूप से प्रभावित करते हैं। यद्यपि यह एक वैश्विक स्वास्थ्य समस्या है, पर गर्भवती महिलाएं एवं छोटे बच्चे इन कमियों से सबसे ज्यादा पीड़ित हैं।

आयोडीन

1999 में विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्लू एच ओ) ने यह अनुमान लगाया था कि दुनिया की 13% जनसंख्या आयोडीन की कमी से प्रभावित है। विश्व स्तर पर, यह मूल्यांकन किया गया है कि 2 अरब व्यक्ति वांछित आयोडीन का सेवन नही कर रहे हैं, जिनमे दक्षिण पूर्व एशियाई और उप सहारा अफ्रीका के देश प्रमुख हैं।

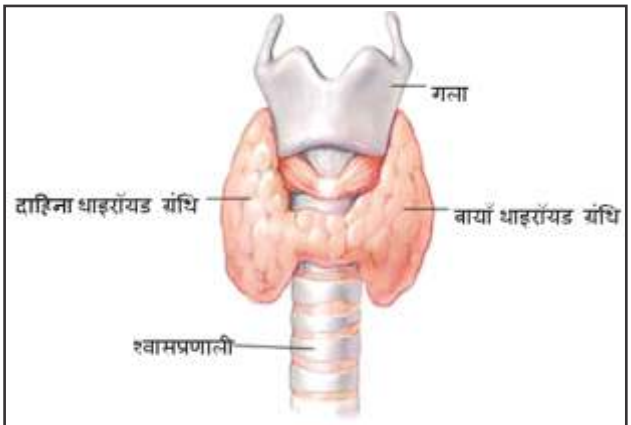

चित्र 1: मानव थाइरॉयड ग्रंथि
(सौजन्य से: Public Domain Pictures- net)

मानव शरीर में बहुत कम मात्रा में आयोडीन थायराइड ग्रंथि में पाया जाता है जो थायराइड हार्मोन (थॉयरोक्सिन और ट्राईआयोडोथायरोनिन) के उत्पादन के लिए जिम्मेदार है। ये हार्मोन चयापचय, और नियमित रूप से बौद्धिक एवं शारीरिक विकास के लिए अपरिहार्य हैं (चित्र 1)

भोजन में आयोडीन की कमी से गण्डमाला या घेंघा, बौद्धिक दोष, बौनापन, पक्षाघात, और बहरा–गूंगापन जैसे बीमारियाँ पैदा होती हैं। इसके अलावा आयोडीन की कमी से गर्भपात, मृत प्रसव, और शिशु मृत्यु भी हो सकती है (तालिका 1)। 20 माइक्रोग्राम/दिन से कम आयोडीन सेवन से गंभीर आयोडीन की कमी हो सकती है।

आयोडीन के प्रमुख स्रोत

आयोडीन स्वाभाविक रूप से मछली, समुद्री भोजन, समुद्री शैवाल, और आयोडीन पर्याप्त भूमि में उगाई गयी सब्जियों जैसे खाद्य पदार्थों की खपत के द्वारा या नमक से प्राप्त किया जा सकता है। गाय का दूध पशुचारे में आयोडीन और डेयरी उद्योग में आयोडोफोर (Iodophor) (थन साफ करने के लिए) के उपयोग के कारण आयोडीन का एक स्रोत है। समुद्री नमक में स्वाभाविक रूप से आयोडीन की एक छोटी मात्रा शामिल होती है। आहारीय आयोडीन, आयोडाइड के रूप में अवशोषित होता है और तेजी से बाह्य तरल पदार्थ में वितरित होता है जहां पहले से ही आयोडाइड के रूप में थायराइड ग्रंथि से स्रावित आयोडीन मौजूद रहता है। यहाँ से आयोडाइड परिवहन के द्वारा थायराइड में जाता है और मूत्र के द्वारा शरीर के बाहर उत्सर्जित होता है।

तालिका 1: आयोडीन की कमी से स्वास्थ्य में दुष्प्रभाव	
आयु वर्ग	**स्वास्थ्य के दुष्प्रभाव**
सभी आयु वर्गों में	घेंघा परमाणु विकिरण के प्रति थायरॉयड ग्रंथि की संवेदनशीलता में वृद्धि
भ्रूण	गर्भपात मृत प्रसव जन्मजात विसंगतियां प्रसवकालीन मृत्यु
नवजात शिशु	शिशु मृत्यु दर स्थानिक बौनापन
बच्चे और किशोर	बिगड़ी मानसिक स्थिति विलंबित शारीरिक विकास
वयस्क	बिगड़ी मानसिक स्थिति कम काम उत्पादकता विषाक्त गांठदार गण्डमाला आयोडीन प्रेरित अतिगलग्रंथिता
सौजन्य से: विश्व स्वास्थ्य संगठन (2007)	

विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्लू एच ओ) ने पांच वर्ष तक के शिशुओं और बच्चों के लिए दैनिक 90 माइक्रोग्राम, 6 से 12 साल बच्चों के लिए 120 माइक्रोग्राम, 12 साल से बड़े बच्चों और वयस्कों के लिए 150 माइक्रोग्राम, और गर्भावस्था और स्तनपान के दौरान महिलाओं के लिए 250 माइक्रोग्राम प्रतिदिन आयोडीन की सिफारिश की है।

लौह

लौह मानव स्वास्थ्य के रखरखाव के लिए आवश्यक तत्वों में से एक है। यह कई प्राकृतिक आक्सीडेकरण (oxidations) और परिवहन व्यवस्था में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हीमोग्लोबिन, साइटोक्रोम और कैटालेस कुछ महत्वपूर्ण कार्यात्मक प्रोटीन हैं जिनमे हीम समूह रहता है। हीम प्रोटीन जैसे हीमोग्लोबिन, मायोग्लोबिन, और साइटोक्रोम पी 450 लौह की सबसे महत्वपूर्ण जैवअकार्बनिक (bioinorganic) यौगिकों में से हैं, जो गैसों और इलेक्ट्रॉनों की परिवहन में, और एंजाइम निर्माण में, महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। लौह सभी प्रकार के कोशिकाओं में मौजूद है और कई महत्वपूर्ण जैविक कार्य करता है। निरामिष आहार में बहुत कम मात्रा में लौह रहता है, और लौह की निम्न स्तर की जैव उपलब्धता रहती है, इसलिए निरामिष आहार लौह की कमी उत्प्रेरण के लिए आंशिक रूप से जिम्मेदार है।

आहारीय लौह दो मुख्य रूप में मौजूद रहता है, हीम और नॉन हीम। पौधों और लौह–पौष्टिक आहार में केवल नॉन हीम लौह शामिल रहता है, जबकि समुद्री भोजन, मांस, और पोल्ट्री (poultry) में हीम और नॉन हीम लौह दोनों होते हैं। हीम लौह, पश्चिमी आबादी में कुल लौह सेवन में 10% से 15% योगदान देता है। वयस्कों में अधिकांश मौलिक (elemental) लौह (3 से 4 ग्राम) हीमोग्लोबिन में होता है। शेष भाग फेरिटिन (ferritin) या हेमोसिडेरिन (hemosiderin) के रूप में जिगर, तिल्ली और अस्थि मज्जा में जमा रहता है या मांसपेशियों के ऊतक मायोग्लोबिन में स्थित है। मनुष्य आम तौर पर मूत्र, मल, जठरांत्र पथ, और त्वचा के जरिये थोड़ी मात्रा में लौह को उत्सर्जित करता हैं, परंतु महिलाओं के मासिक धर्म के समय खून की कमी से अधिक मात्रा में लौह की कमी हो जाती हैं।

लौह के प्रमुख स्रोत

आहार में हीम लौह के सबसे प्रमुख स्रोत मांस और समुद्री भोजन हैं। नॉन हीम लौह के आहार स्रोतों में अखरोट, काजू, बादाम, मूँगफली, बीन्स, सब्जियाँ, और लौह युक्त अनाज उत्पाद शामिल हैं। संयुक्त

तालिका 2 : मनुष्य जीवन काल के विभिन्न स्तर पर लौह के लिए अनुशंसित आहार भत्ता	
उम्र	**मात्रा (मि.ग्रा.)**
जन्म से 6 महीने तक	0.27
7–12 महीने	11.0
1–3 वर्ष	7.0
4–8 वर्ष	10.0
9–13 वर्ष	8.0
14–18 वर्ष (पुरुष)	11.0
14–18 वर्ष (महिला)	15.0
19–50 वर्ष (पुरुष)	8.0
19–50 वर्ष (महिला)	18.0
50 वर्ष से अधिक	8.0
गर्भवती महिलाएं	27.0
स्तनपान कराने वाली महिलाएं	9.0
सौजन्य से : फूड एंड न्यूट्रीशन बोर्ड (2001)	

राज्य अमेरिका में, लगभग आधा आहारीय लौह रोटी, अनाज, और अन्य अनाज उत्पादों से आता है। मां के दूध में जो लौह रहता है वो 4 से 6 महीने से अधिक उम्र के शिशुओं की जरूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं है। इसलिए फूड एंड न्यूट्रीशन बोर्ड ने 2001 में लौह के लिए अनुशंसित आहार भत्ता (Recommended Dietary Allowances) स्थापित किया है (तालिका 2)।

लौह की कमी से एनीमिया हो जाता है जिससे कार्य क्षमता में कमी और बिगड़ी प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया उत्पन्न हो जाती है और उससे मातृ एवं भ्रूण रुग्णता तथा शारीरिक विकास में कमी जैसी कई परेशानियाँ पैदा हो जाती हैं। लौह की कमी से उत्पन्न, एनीमिया आज दुनिया में महत्वपूर्ण पोषक तत्वों की कमी से उत्पन्न बीमारियों में सबसे गंभीर और अग्रणी बना हुआ है एवं दुनिया भर में लाखों लोगों को प्रभावित कर रहा है। इनमें से अधिकांश लोग विकासशील देशों के है पर विकसित देशों में रहने वाले लोग भी इस परेशानी का सामना कर रहे हैं। शोधकर्ताओं के अनुसार न्यूट्रीशनल एनीमिया की व्यापकता विकासशील देशों में लगभग 20–50% और विकसित देशों में 2–28 % है।

संक्षेप में इन दो पोषक तत्वों के कमियों के संयुक्त प्रभाव से पूरी आबादी के सामाजिक और आर्थिक विकास में भारी कमी आ जाती है।

उपाय

भोजन में आयोडीन और लौह जैसे सूक्ष्म पोषक तत्व को संपुष्ट (fortify) कर एनीमिया और घेंघापन को काफी हद तक कम किया या रोका जा सकता है। हालांकि, यह महत्वपूर्ण है कि यह सूक्ष्म पोषक तत्व वाहक के रूप में पूरी आबादी के लिए उपलब्ध हों, और विशेष रूप से उन क्षेत्रों में जहाँ इनकी अत्यधिक कमी हो, इन तत्वों का प्रत्येक उपभोक्ता द्वारा निरंतर रूप में सेवन किया जाए।

कोडेक्स एलीमेंटरियस आयोग के अनुसार, संपुष्टि करण (fortification) भोजन में एक या एक से अधिक आवश्यक पोषक तत्वों के मिश्रण को कहते हैं जिससे किसी भी आबादी में पोषक तत्वों की कमी से हुए विकारों को दूर करने में मदद मिले। खाद्य संपुष्टिकरण कुछ महत्वपूर्ण सूक्ष्म पोषक तत्वों के साथ पोषक तत्व सेवन को बढ़ावा देने के लिए सबसे प्रभावी और तकनीकी रूप से उपयोगी तरीकों में से एक है।

मुख्य भोजन में संपुष्टिकरण की अवधारणा को 19 वीं सदी में विकसित किया गया था जब 1918 में

तालिका 3 : विकासशील देशों में संपुष्ट वाहन के रूप में प्रयोग होने वाले खाद्य पदार्थ	
खाद्य पदार्थ	**फोर्टिफिकैंटस (संपुष्टिकारक)**
चीनी	विटामिन ए
एमएसजी	विटामिन ए
नमक	आयोडीन, आयोडीन, लौह
मक्के का आटा	विटामिन ए, लौह, थायामीन, नियासीन, रिबोफ्लाविन
गेहूं का आटा	थायामीन, नियासीन, रिबोफ्लाविन, लौह, फॉलिक एसिड
मार्गरिन	विटामिन ए और डी
तेल	विटामिन ए, विटामिन ए एवं ई
घी	विटामिन ए
दूध	विटामिन ए और डी
नूडल्स	विटामिन ए, लौह, बी कॉम्प्लेक्स

स्विट्जरलैंड में नमक को आयोडीनयुक्त किया गया था और डेनमार्क में मार्गारिन को विटामिन ए के साथ संपुष्ट किया गया था। 1994 में डब्ल्यूएचओ/यूनिसेफ/आइसीसीआइडीडी ने आयोडीन की कमी को कम करने के लिए लक्षित क्षेत्रों में विश्व स्तर पर नमक आयोडाइजेशन (iodization) की सिफारिश की। संपुष्टिकरण विधि अन्य विधियों के तुलना में बेहतर है क्योंकि यह लोगों के आहार की आदतों में ज्यादा परिवर्तन नहीं लाता है। विश्व बैंक ने खाद्य संपुष्टिकरण को विकसित देशों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के नियंत्रण में मुख्य रूप में पहचान की है। खाद्य संपुष्टिकरण कार्यक्रम में एक उचित भोजन वाहन का चयन एक महत्वपूर्ण कदम है, हालांकि यह उन देशों के लिए एक चुनौती हो सकती है जहां छोटे पैमाने पर खाद्य उद्योग, मुख्य रूप से ग्रामीण आबादी और प्रसंस्कृत खाद्य वस्तुओं का सीमित सेवन हो।

एक वाहन का चयन करते समय कुछ कारकों पर विचार किया जाना चाहिएः–

खाद्य प्रसंस्कृत और गुणवत्ता नियंत्रित हो।

यह लागत प्रभावी हो और लक्ष्य समूह एक नियमित आधार पर उपभोग करने के लिए तैयार रहे।

यह उचित रूप से संग्रहीत हो और उचित जैव उपलब्धता और स्थिरता के साथ आसानी से उपयोग हो।

सूक्ष्म पोषक तत्वों के डालने से स्वाद, या रूप रंग में कोई बदलाव न हो।

संपुष्ट पोषक तत्व इष्टतम मात्रा में उपलब्ध होना चाहिए जिससे कि अत्यधिक सेवन या विषाक्त प्रभाव की संभावना न रहे।

उपरोक्त बातों को मद्देनजर रखते हुए चीनी, नमक और गेहूं के आटे को संपुष्ट वाहक के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। इसके अलावा कुछ अन्य खाद्य पदार्थ भी आमतौर पर संपुष्ट वाहन के रूप में इस्तेमाल किया जाता है (तालिका 3)।

निष्कर्ष

नमक आयोडाइजेशन लागत प्रभावी और आसानी से लागू होने के साथ अपेक्षाकृत कम समय में किया गया एक अपार सफल कार्यक्रम है। नमक आयोडाइजेशन की सफलता, लौह संपुष्टिकरण के लिए और विशेष रूप से लौह और आयोडीन के साथ दोहरी संपुष्टिकरण के लिए नमक को एक वाहन के रूप में सोचने के लिए कई देशों को प्रेरित किया है।

नमक अपनी सार्वभौमिक खपत के कारण सूक्ष्म पोषक तत्वों के प्रावधान का एक आकर्षक जरिया है। नमक को आयोडीन युक्त करना स्थानिक गण्डमाला और अन्य आयोडीन की कमी से जुड़ी समस्याओं को दूर करने का एक संभव, सस्ता, और अत्यधिक प्रभावी साधन है जो कि 50 से अधिक देशों द्वारा अपनाया गया है। इसके अलावा, डब्ल्यूएचओ, यूनिसेफ और विश्व बैंक के लिए अंतरराष्ट्रीय परिषद, आयोडीन की

तालिका 4 : कुछ आम आयरन यौगिक जो संपुष्टिकारक (फोर्टिफिकेंट्स) के लिए प्रयोग होते है

यौगिक	आयरन (%)	जैव उपलब्धता
फेरस फ्यूमरेट	33	अच्छा
फेरिक आर्थोफास्फेट	28	खराब
फेरिक पाइरोफास्फेट	25	खराब
फेरस सिट्रेट	24	साधारण
फेरस सल्फेट हेप्टा हाईड्रेट	20	अच्छा
फेरस लाकटेट	19	अच्छा
फेरिक सिट्रेट	17	खराब
सोडियम आयरन पाइरोफास्फेट	15	खराब
फेरिक ग्लिसेरोंफास्फेट	15	अच्छा
फेरिक एमोनियम सल्फेट	14	–
सोडियम आयरन इ डी टि ए	13	अच्छा

कमी विकार का नियंत्रण के लिए उन देशों के लिए नमक का आयोडाइजेशन के विस्तार का बहुत सक्रिय रूप से समर्थन कर रहे हैं, जहां गण्डमाला अभी भी एक सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या के रूप में बनी हुई है। आयोडीन युक्त नमक लंबे समय से विकसित देशों में उपलब्ध है और इस कारण उत्तरी अमेरिका और अधिकांश यूरोपीय देशों में आयोडीन की कमी की समस्या का वस्तुतः सफाया हो गया है। एक ठोस अंतरराष्ट्रीय प्रयास के परिणाम स्वरूप, 70% इस्तेमाल होने वाली नमक आयोडिन युक्त है। इस प्रगति से उत्साहित होकर नमक को आयोडीन और आयरन युक्त बनाने के प्रयास किए गए।

पिछले 25 वर्षों के दौरान, डबल फोर्टिफाइड नमक का उत्पादन करने के लिए कई प्रयास किए गए जिसमे भारतीय वैज्ञानिकों का प्रयास प्रमुख है। एनआईएन (NIN) हैदराबाद के वार्षिक प्रगति रिपोर्ट में नमक में लौह का अकेले या आयोडीन के साथ संपुष्टिकरण में नियोजित करने का एक व्यावहारिक साधन विकसित करने का प्रयास निहित है। एनआईएन द्वारा कई दृष्टिकोण का पता लगाया है और फील्ड परीक्षण किए गए है। खाद्य एवं पोषण बुलेटिन में डॉ नरसिंगा राव का पहला पूर्ण वैज्ञानिक रिपोर्ट प्रकाशित है जिसमे उन्होंने नमक में लौह और आयोडीन दोहरा संपुष्टिकरण करने की प्रभावी प्रक्रिया का जिक्र किया है। यह लौह की कमी के नियंत्रण में एक बहुत बड़ी सफलता का प्रतीक है।

नमक संपुष्टिकरण के कई प्रयास किए गए जिससे कि इन दोनों सूक्ष्म पोषक तत्व के अभाव से पूरे विश्व में जो एक अरब लोग प्रभावित हैं उनसे निपटा जा सके। इस दिशा में एक बड़ी चुनौती यह थी कि एक ऐसा फॉर्मूला विकसित किया जाए जिसमे यह दोनों पोषक तत्व अपनी स्थिरता और जैव उपलब्धता बनाए

तालिका 5 : आम आयोडीन यौगिक जो संपुष्टिकारक (फोर्टिफाई) के लिए प्रयोग होते हैं।

यौगिक	आयरन (%)	आणविक भार
आयोडीन	100	254
कैल्शियम आयोडाइड	86.9	294
कैल्शियम आयोडेट	65	390
पोटेशियम आयोडाइड	76.5	166
पोटेशियम आयोडेट	59.5	214
सोडियम आयोडाइड	85	150
सोडियम आयोडेट	64	198

रखे। क्योंकि प्राय यह देखा गया है कि आयोडिन युक्त नमक में छः महीनो के बाद आयोडिन का स्तर गिर जाता है।

तकनीकी तौर पर भोजन में आयरन संपुष्ट करना थोड़ा मुश्किल है क्योंकि आयरन भोजन के साथ प्रतिक्रिया करके कई बार कुछ अवांछित तत्व पैदा करते है। हालांकि जैव उपलब्धता और ओरगैनोलेपटिक विशेषताओं के आधार पर उचित आयरन फोर्टिफिकेंट्स का चयन किया जा सकता है। आयरन संपुष्टिकरण को मुख्य तीन भागों में बांटा जा सकता है। सबसे पहले समूह में पानी में घुलनशील, आमाशय रस में अच्छी घुलनशीलता और अधिकतम जैव उपलब्धता वाले फोर्टिफिकेंट्स आते है। परंतु कभी कभी इन लौह फोर्टिफिकेंट्स का भोजन के ओरगैनोलेपटिक गुण, रंग और विशेष रूप से स्वाद पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। दूसरी श्रेणी में पानी में कम घुलनशील वाले यौगिक शामिल हैं। इनकी पेट में मौजूद आमाशय रस में अच्छी घुलनशीलता के कारण भोजन से आसानी से अवशोषित किया जा सकता है। तीसरी श्रेणी में पानी में अघुलनशील यौगिक शामिल है। इन फोर्टिफिकेंट्स से लौह अवशोषण बहुत कम है, लेकिन ये भोजन का संवेदी विशेषताओं में केवल मामूली परिवर्तन करते है और घुलनशील यौगिक से सस्ते होते है। उपरोक्त तीनों समूहों में से जैव उपलब्धता और ओरगैनोलेपटिक विशेषताओं के आधार पर उचित आयरन फोर्टिफिकेंट्स का चयन किया जाता है।

तालिका 4 में कुछ आम आयरन यौगिक जो फोर्टिफिकेंट्स के रूप में प्रयोग होते है उनकी सूची दी जा रही है।

आयोडेट्स और आयोडाइड्स, आयोडीन यौगिक के दो मुख्य प्रकार है जो फोर्टिफिकेशन के लिए डाले जाते हैं (तालिका 5)। ज्यादातर ये पोटेशियम नमक के साथ प्रयोग किये जाते हैं पर कैल्शियम या सोडियम नमक के साथ भी इनका इस्तेमाल किया जाता है। ब्रेड और नमक में फोर्टिफिकेशन के लिए पोटेशियम आयोडाइड का 80 साल से और पोटेशियम आयोडेट का 50 साल से इस्तेमाल होता है। यद्यपि पोटेशियम आयोडेट अपेक्षाकृत महंगा है तथापि गर्म और उमस मौसम वाले देशों में इसी का इस्तेमाल हो रहा है।

हालांकि नमक, आयोडीन और लौह संपुष्टिकरण के लिए एक उत्कृष्ट वाहक साबित हुआ है, फिर भी नमक में दोहरा संपुष्टिकरण मुश्किल है क्योंकि नमक की भौतिक और रासायनिक परिस्थिति आयोडीन और लौह सह–अस्तित्व के पक्ष में नहीं है। लौह अम्ल pH पर स्थिर है जबकि आयोडीन को क्षार pH की जरूरत है। डबल संपुष्टिकरण के लिए जब आयोडेट और फेरस यौगिक डाला जाता है तब आयोडेट मौलिक आयोडीन में बदल जाता है और उदात्त होकर खत्म हो जाता है। यही प्रक्रिया फेरस सल्फेट युक्त नमक में ज्यादा तेजी से होती है क्योंकि वो अन्य लौह फोर्टिफिकेंट्स से ज्यादा घुलनशील है।

इस परिस्थिति से बचने के लिए या तो नमक में स्टेबलाइजर डाला जाता है या किसी भी एक पोषक तत्व का संपुटीकरण करके आयोडीन को स्थिर रखा जा सकता है और डबल फोर्टिफाइड नमक को एक उपभोक्ता स्वीकार्य रंग दिया जा सकता है। सोडियम हेक्सामेटाफास्फेट की अच्छी चीलेटिंग प्रकृति होने के कारण अगर यह 10 ग्राम प्रति किलो की मात्रा में नमक में डाला जाए तो यह एक अच्छे स्टेबलाइजर की तरह आयोडीन और लौह प्रतिक्रिया को रोकने में उपयुक्त हो सकता है। लौह यौगिक को एक उपयुक्त संपुष्टिकरण कारक के साथ संपुष्टिकरण कराकर भी आयोडीन और लौह प्रतिक्रिया को कम किया जा सकता है और आयोडीन को एक लंबे समय तक स्थिर रखा जा सकता है।

भारतीय भोजन में लौह की मात्रा पर्याप्त होती है पर सामाजिक विविधता और गेहूँ और चावल में फाइटेट्स की उपलब्धता (जो कि लौह के अवशोषण को बाधित करता है) के कारण केवल 2 से 5% लौह ही शरीर में अवशोषित होता है। लौह की कमी से उत्पन्न होने वाली बीमारी एनीमिया दुनिया भर में प्रचलित है और, एनीमिया और गण्डमाला एक साथ दुनिया के अन्य विकासशील देशों की तरह भारत में दो प्रमुख पोषक तत्वों की कमी से उत्पन्न रोग के रूप

में विद्यमान हैं। घेंघा भारत के विशेषतः उप–हिमालयी क्षेत्र और कुछ अन्य क्षेत्रों लगभग 170 मिलियन लोगों को प्रभावित करता है। हालांकि, 1960 के बाद से आयोडीन युक्त नमक वितरित करने के लिए एक कार्यक्रम चलाया जा रहा है परंतु कुछ परिचालन कारकों जैसे कम आपूर्ति और स्थानिक क्षेत्रों में नमक का वितरण न हो पाने के कारण इसका वांछित प्रभाव नहीं पड़ा है। इसलिए, सरकार ने देश में सभी खाद्य नमक को आयोडीन युक्त किया जाना एक कानूनी आवश्यकता बना दिया है।

खाद्य नमक को लौह युक्त बनाने का एक सफल तरीका भारत में विकसित किया गया है, जो कि एनीमिया के प्रसार को कम करने में प्रभावित पाया गया है। भारत में हाल ही में हुए तकनीकी विकास के अन्तर्गत सोया स्टिएयरिन कोट के साथ फेरस फ्यूमरेट का माइक्रो संपुटीकरण करके डबल फोर्टिफाइड नमक को कम लागत में तैयार किया गया है, जो कि लौह के साथ आयोडीन के भंडारण में उष्णकटिबंधीय स्थिति में स्थिरता बनाए रखते हुए इन दोनों की रासयानिक प्रक्रिया को रोकने का उल्लेखनीय प्रयास है।

सारांश

हालांकि शरीर में सूक्ष्म पोषक तत्वों की बहुत ही कम मात्रा में जरूरत पड़ती है, तथापि यह मानव शरीर पर व्यापक प्रभाव डालते हैं। नमक हमारे दैनिक आहार का हिस्सा होने के साथ ही मानव शरीर में सूक्ष्म पोषक तत्वों का एक उत्कृष्ट वाहक साबित हुआ है। आयरन और आयोडीन युक्त नमक के सेवन से हमारी आबादी के एक बड़े हिस्से में इनकी कमी से उत्पन्न बीमारियों में कमी हो सकती है। इस तरह से डबल फोर्टिफाइड नमक का उपयोग आयरन और आयोडीन की कमी से उत्पन्न बीमारियों को नियंत्रित करने में एक प्रभावी रणनीति हो सकती है। तथापि खाद्य वस्तुओं मे डाले गए सूक्ष्म पोषक तत्वों के संदर्भ में उनकी जैव उपलब्धता, संभावित विषाक्तता, अन्य पोषक तत्वों के साथ प्रतिक्रिया, खाद्य वस्तुओं के रंग, स्वाद, गुणवत्ता पर प्रभाव आदि का विश्लेषण करने की जरूरत है।

क्रिस्पर/कैस 9 जीनोम संपादन– नयी तकनीक, व्यापक आयाम

मोहन कमठान

पर्यावरण विषविज्ञान प्रभाग, खाद्य, औषधि एवं रसायन विषविज्ञान विभाग
सी.एस.आई.आर.–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
विषविज्ञान भवन, 31 महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ, 226001, उत्तर प्रदेश, भारत

पृष्ठभूमि

मानव शरीर की प्रत्येक कोशिका में 25000–30000 जीन होते हैं। जीन प्रोटीन बनाने के लिए निर्देश प्रदान करते हैं, और प्रोटीन शरीर में प्रत्येक कोशिका की संरचना और कार्यों का निर्धारण करते हैं। जीन के कार्य या भूमिका समझने के लिए, शोधकर्ताओं ने जीनोम संपादन रणनीतियों के माध्यम से जीन अनुक्रम (sequence) को संशोधित कर जीन प्रकटन को सक्रिय या उसका दमन किया है। हाल में विकसित लक्षित जिनोम संपादन तकनीक का प्रयोगशाला जीवों और संबन्धित कोशिकाओं में आनुवंशिक कोड के संपादन में, जैव चिकित्सा, कृषि, पर्यावरण विज्ञान आदि क्षेत्रों में कई उपयोग हैं। इससे पहले, कई जीनोम संपादन के तरीके विकसित किए गए थे लेकिन वे विशिष्टता की कमी, आणविक घटकों की संयोजन (assembly) में समस्या अथवा ऑफ टार्गेट इफैक्ट के कारण पूर्ण रूप से सफल नहीं हो पाये। सीआरआइएसपीआर (CRISPR) (Clustered regularly interspaced short palindromic repeats) पर आधारित लक्षित जीनोमिक संपादन जीवित कोशिकाओं और जीवों में बदलाव के लिए, जैविक अनुसंधान के लिए एक शक्तिशाली उपकरण बन गया है। क्रिस्पर और अनुकूलित न्यूक्लिएस (कैस–9) द्वारा लक्षित जीनोम संपादन विभिन्न प्रकार के जीवों और कोशिकायों में विलोपन, सम्मिलन और डीएनए मे लक्षीत बदलाव का एक सामान्य तरीका बन गया है। सीआरआइएसपीआर/कैस–9 पर आधारित जीनोम संपादन तकनीक को प्रतिष्ठित साइन्स (Science) पत्रिका द्वारा वर्ष 2015 की महत्वपूर्ण खोज के रूप में मान्यता दी गई है ।

सीआरआइएसपीआर/कैस–9 पर आधारित प्रणाली सर्वप्रथम बैक्टीरिया में खोजी गयी थी। यह आरएनए द्वारा संचालित रक्षा प्रणाली है जो जीवों की हमलावर वायरस और प्लाज्मिड (plasmids) से रक्षा करता है। यह रक्षा प्रणाली डीएनए के विशिष्ट अनुक्रम को पहचानने और विदेशी न्यूक्लिक एसिड के दमन के लिए, छोटे आरएनएस (RNAs) पर निर्भर होती है। सीआरआइएसपीआर/कैस–9 सिस्टम में कैस जीन होते हैं जो ओपेरोन और सीआरआइएसपीआर एरे (array) के रूप में संगठित रहते हैं। इसमे जीनोम लक्षित डीएनए अनुक्रम (spacers) एक समान आवृत्ति के बीच में व्यवस्थित रहते हैं।

बैक्टीरिया और आर्किया (archea) में सीआरआइएसपीआर/कैस–9 द्वारा संचालित रक्षाप्रणाली में तीन चरण होते हैं। अनुकूलीचरण (adaptive phase), अभिव्यक्ति चरण (expression phase) और अंतिम हस्तक्षेप चरण (interference phase)। पहले चरण में एक या अधिक सीआरआइएसपीआर लोसाइ (loci) वाले जीव, वाइरस या प्लास्मिड आक्रमण के विरोध में अपने डीएनए के छोटे हिस्सों के प्रोटोस्पेसरस (protospacers) को मेजबान के गुणसूत्र में क्रिस्पर (CRISPR) सारणी के मूल में डाल देते है। दूसरे चरण में रिपीट स्पेसर तत्व (repeat spacer element) प्रीकर्सर सीआरआइएसपीआर आरएनए (pre-crRNA) में प्रतिलेखित (Transcribed) हो जाता है। इसके बाद एंजाइमी प्रक्रिया द्वारा छोटे crRNA बनते हैं जोकि वायरल या प्लाज्मिड में उपस्थित पूरक प्रोटोस्पेसरस अनुक्रम (sequences) के साथ जुड़ सकते हैं। अंतिम चरण में सी आर आर एन ए (crRNA) द्वारा लक्ष्य की पहचान के बाद कैस प्रोटीन और सी आर आर एन एस के द्वारा विदेशी अनुक्रम को नीरव कर दिया जाता है। बैक्टीरिया में सीआरआइएसपीआर/कैस सिस्टम के तीन प्रकार होते हैं टाइप–I, टाइप–II और टाइप–III । जीनोम संपादन के लिए टाइप–II

सीआरआइएसपीआर/कैस–9 प्रणाली का इस्तेमाल किया जाता है। इस प्रणाली में प्रत्येक सी–आर–आरएनए (crRNA), दूसरे आरएनए के साथ जुड़ता है जिसे ट्रान्स–एक्टिवेटिंग (trans-activating) सीआरआइएसपीआर आरएनए (tracrRNA) कहते हैं। ये दोनों आरएनए कैस–9 न्यूक्लिएस के साथ कॉम्प्लेक्स बना कर डबल स्ट्रेंड ब्रेक (DSBs) के माध्यम से लक्षित डीएनए को काट देते हैं। लक्षित डीएनए को काटने की प्रक्रिया सी–र–आरएनए और लक्ष्य प्रोटोस्पेसरस डीएनए के बीच बेस पेयर (basepair) पूरकता और एक छोटे मोटिफ प्रोटोस्पेसरस संलग्न (adjacent) मोटिफ (motif)(PAM) पर निर्भर होती है।

शोधकर्ताओं ने दिखाया है कि कैस–9 न्यूक्लिएस के एक आरएनए अणु के उपयोग से मानव सहित विभिन्न प्रकार की कोशिकाओं में साइट विशिष्ट अनुभेद उत्पन्न किए जा सकते हैं। अतः सीआरआइएसपीआर (CRISPR)/कैस–9 डबल स्ट्रेंड ब्रेक द्वारा जीनोम संपादन संचालित करने वाली एक सरल, विशिष्ट और बहुमुखी तकनीक है। प्रारम्भ में कैस–9 तकनीक का उपयोग बैक्टीरिया, मानव कैंसर सेल लाइंस, मानव स्टेम कोशिकाओं तथा सम्पूर्ण जीव जैसे जेब्रा फिश (zebra fish) के जींस के विरुद्ध किया गया था। बाद में, कैस–9 को खमीर (yeast), फसलों जैसे चावल, गेहूं और ज्वार तथा, चूहे, खरगोश एवं फल मक्खियों में जीनों को परिवर्तित करने के लिए भी इस्तेमाल किया गया है।

क्रिस्पर (CRISPR) के घटक

एस पाईरोजींस (S-pyogenes) बैक्टीरिया का टाइप–II सीआरआइएसपीआर सिस्टम सरल और सबसे अधिक इस्तेमाल किया जाने वाला है। इसमें, जीनोम संपादन के लिए सीआरआइएसपीआर के दो घटक, कोशिकाओं में व्यक्त किए जाने चाहिएः कैस–9 न्यूक्लियस और एक जी आरएनए (gRNA) (चित्र 1ए)। इस प्रणाली की मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित हैंः

जी आरएनए (gRNA)– यह एक परिवर्तनशील सीआरआरएनए (crRNA) और एक निश्चित ट्रेसर आरएनए (tracrRNA) का संलयन है (चित्र1 बी)। सीआरआरएनए कम से कम बीस न्यूक्लियोटाइड से मिलकर बनता है और जीआरएनए (gRNA) के 5'' सिरे पर उपस्थित होता है। सीआरआरएनए डीएनए–आरएनए (CasRNADNA-RNA) की पूरकता के नियमों के आधार पर कैस–9को विशेष लक्ष्य डीएनए साइट पर निर्देशित करता है। परिपक्व सीआरआरएनए अकेले लक्षित साइट के लिए कैस–9 का निर्देशन नहीं कर सकता है। तय tracrRNA सीक्वेंस जोकि सीआरआरएनए के आवृति अनुक्रम (repeat sequence) के साथ जोड़ी बनाता है और यह लक्ष्य डीएनए की पहचान के लिए आवश्यक होता है। ये सीआरआरएनए को लक्ष्य डीएनए के पूरक स्ट्रेंड से जुड़ने के लिए सही तरीके से व्यवस्थित करता है। शोधकर्ताओं द्वारा सूचित किया गया है कि कैस 9 के किसी भी लोकस (locus) पर कार्य करने की दक्षता जीआरएनए (gRNA) की संरचना से प्रभावित होती है। सामान्यतः जीनोम संपादन में प्रयोग होने वाला जीआरएनए , सीआरआरएनए और ट्रेआरएनए (tracr RNA) के हिस्सों का एक संलयन होता है। पिछले अध्ययनों में एक 'दोहरे जीआरएनए' का इस्तेमाल किया गया जिसमें सीआरआरएनए और ट्रेआरएनए को अलग से व्यक्त किया गया है। लेकिन एकल जीआरएनएस सिस्टम से दोहरे जीआरएनएस की तुलना में अधिक संपादन दर प्राप्त हुआ है। इसके अलावा, कुछ शोधकर्ताओं द्वारा एकल जीआरएनएस जिनके 3 सिरों पर विभिन्न लंबाई के ट्रेआरएनए अनुक्रम का विश्लेषण भी किया है। लंबे एकल जीआरएनएस (जिनमें ट्रेआरएनए अनुक्रम के 3 भाग का अधिक हिस्सा है) छोटे एकल जीआरएनएस की तुलना में अधिक संपादन दर प्रदर्शित करते हैं। आज तक का सबसे अधिक इस्तेमाल किया जाने वाले एकल जीआरएनए की लंबाई लगभग 100 न्यूकलियोटाइड होती है।

कैस प्रोटीन और पैम (PAM) डीएनए अनुक्रम

कैस प्रोटीन आनुवंशिक रूप से बहुरूपी और कार्यात्मक रूप से विविध परिवार का सदस्य है, जो कि सीआरआइएसपीआर द्वारा संचालित रक्षा प्रणाली में सम्मिलित है। विभिन्न प्रकार के कैस प्रोटीन परिवारों को स्थापित किया गया है, उनकी संख्या, घटना, वितरण, और संगठन में अत्यधिक भिन्नता हैं।

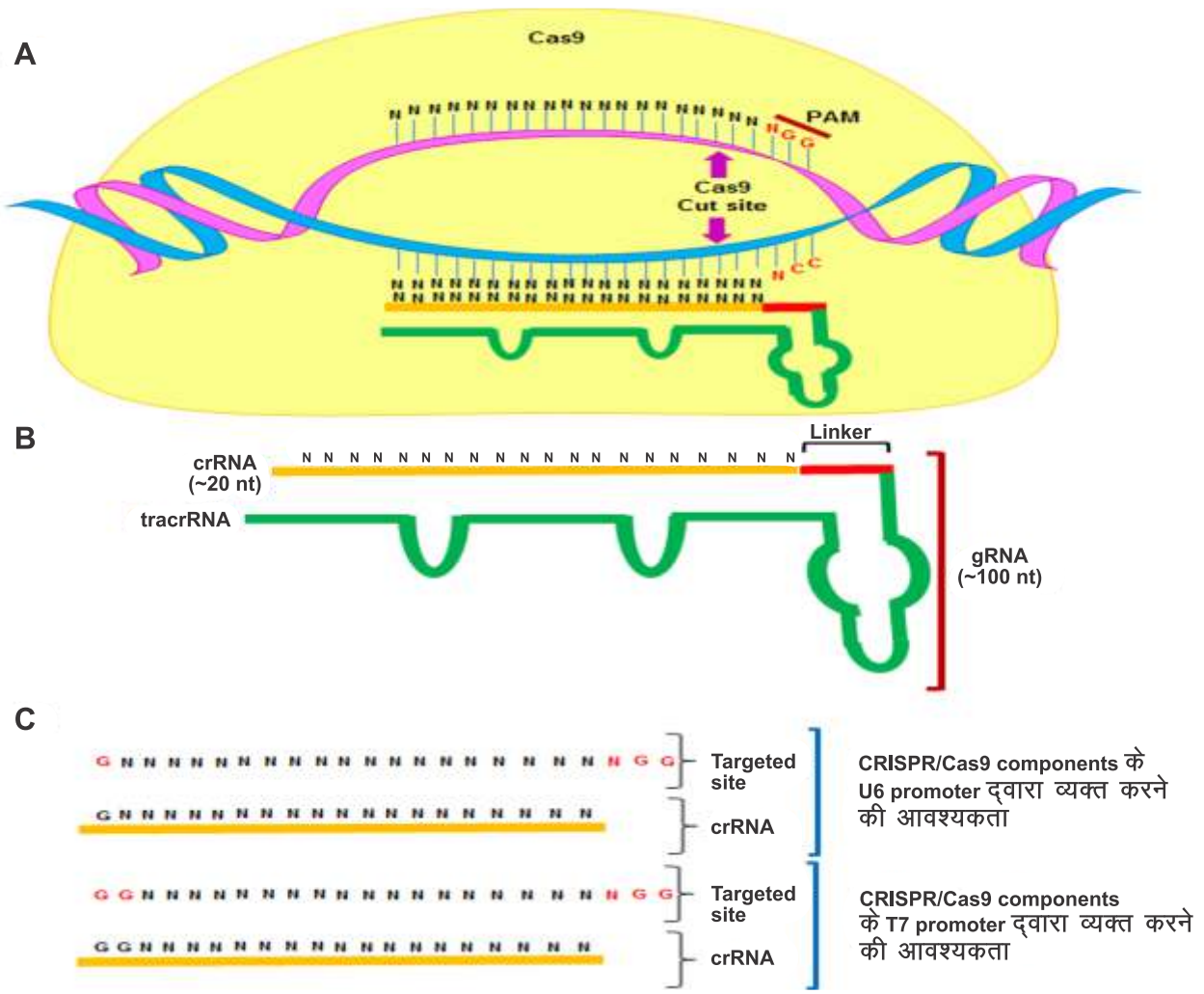

चित्र 1. सीआरआइएसपीआर–कैस–9 प्रणाली के घटक और डिजाइन)

सीआरआइएसपीआर –कैस–9 प्रणाली के अवयव

स्ट्रैपटोकोकस पयोजेन्स (S- Pyogenes) कैस–9 (SpCas9) का इमेरिक एकल गाइड आरएनए (sgRNA) के साथ कॉम्प्लेक्स बनाता है जिसमे एक स्पेसर जो कि जीनोमिक लक्ष्य साइट के साथ और एक स्केफोल्ड आरएनए (tracrRNA) के साथ जुड़ा होता है। जीनोमिक डीएनए के खिलाफ कैस–9 की मध्यस्थता वाले एंडो न्यूक्लिएस गतिविधि के अनुक्रम विशिष्टता के लिए प्रोटोस्पेसर संलग्न मोटिफ (PAM) की आवश्यकता होती है। बी crRNA डिजाइन। विभिन्न प्रमोटरों से व्यक्त gRNAs के लिए लक्ष्य सीमा के अनुक्रम की सीमाएं AU6 प्रमोटर के लिए लक्ष्य डीएनए अनुक्रम प्रतिबंध डीएनए साइट के लिए लक्षित gRNA (लाल अक्षरों) के पहले 5′–न्यूक्लियोटाइड पर (एक U6 प्रमोटर से कुशल अभिव्यक्ति के लिए आवश्यक) और लक्ष्य साइट की पूरकता क्षेत्र से सटे एक NGG (पीएएम अनुक्रमय लाल अक्षरों) की आवश्यकता के द्वारा लगाया जाता है। T7 प्रमोटर केलिए लक्ष्य डीएनए अनुक्रम प्रतिबंध डीएनए साइट के लिए लक्षित gRNA के पहले दो न्यूक्लियोटाइड में एक GG (T7 प्रमोटर से कुशल अभिव्यक्ति के लिए आवश्यक) और पूरक क्षेत्रलक्ष्य साइट से सटे एक NGG की आवश्यकता के द्वारा लगाया जाता है।

बैक्टीरिया में कैस जीन सीआरआइएसपीआर लोसाइ (loci) से बहुत कस कर जुड़े होते हैं। कैस 1 और कैस 2 दोनो प्रकार के सीआरआइएसपीआर/कैस सिस्टम में सार्वभौमिक रूप से वितरित हैं, एवं स्पेसर प्राप्ति (spacer acquisition) की प्रक्रिया में संलग्न हैं। इन दो सार्वभौमिक कैस जीनों के अलावा,

तीन मुख्य सीआरआइएसपीआर कैस प्रकार टाइप I टाइप II टाइप III को हस्ताक्षर जीन कैस–3, कैस–9 और कैस–10 क्रमशः परिभाषित करते हैं। कैस–9 लक्ष्य स्थान को तभी काटता है जब इसके 5′ अंत में सीआरआरएनए अनुक्रम के अनूरूप एक पैम अनुक्रम हो। एस पाईरोजींस के लिए विद्यित पैम अनुक्रम 5′–NGG होता है (जहां एन कोई भी न्यूकलोब्स हो सकता है)। हालांकि कम कुशल दरों पर वैकल्पिक पैम अनुक्रम जैसे 5′– एनएजी (NAG) भी इस्तेमाल हुए हैं।

जीनोम संपादन के लिए लक्षित साइट

जीआरएनएस व्यक्त करने के लिए प्रमोटर का चुनाव कोशिकाओं या जीवो में संभावित लक्ष्य डीएनए साइटों के लिए विकल्पों को सीमित कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, आरएनए पोलीमेरेस III पर आधारित U6 प्रमोटर या T7 प्रमोटर उन आरएनए को प्रतिलेखित करते हैं जिनके 5′ अंत में, क्रमशः G या GG हो (चित्र 1सी)। नतीजतन, इन प्रमोटरों से व्यक्त जीआरएनएस की लंबाई लक्षित साइटों पर जीएन19– एनजीजी या जीजीएन 18– एनजीजी तक सीमित हो जाती है। ऐसी साइटों या दृच्छिक मानव डीएनए अनुक्रम में क्रमशः 1 हर 32 बेस पेयर तथा 1 हर 128 बेस पेयर, होती है। इन प्रतिबंधों को बायपास करने के लिए जीआरएनए के 5′ अंत पर जी या जी जी संलग्न किया जा रहा है, जिससे जीआरएनए की लंबाई 1 या 2 बेस पेयर बड़ी होती हैं। कई वैज्ञानिक समूहों ने वेब आधारित सॉफ्टवेयर बनाए है जो संभावित सीआरआइएसपीआर/कैस–9 लक्ष्य साइटों को पहचानने की सुविधा प्रदान करते है जैसे, जीफिट (ZiFiT Targeter) सॉफ्टवेयर (http://zifit-partners-org) और CRISPR डिजाइन उपकरण (http : //crispr-mit-edu)।

क्रिस्पर/डिएसएल–9 घटकों की डिलिवरी

क्रिस्पर/कैस–9 घटकों को विभिन्न तरीकों से कई प्रकार की कोशिकाओं और जीवों में पहुंचाया जा सकता है। परंपरागत जीन थेरेपी के विपरीत, जहां आम तौर पर रचनात्मक (constitutive) ट्रांसजीन (transgene) की अभिव्यक्ति आवश्यक होती है, जीनोम संपादन कैस–9 के क्षणिक अभिव्यक्ति के साथ प्राप्त किया जा सकता है। वर्तमान में सीआरआइएसपीआर कैस–9 को कोशिका में पहुंचाने के लिए वायरल और गैर वायरल वितरण दृष्टिकोण अपनाए जा रहे है। शोधकर्ता कलचर्ड स्तनधारी कोशिकाओं में, कैस–9 और जीआरएनए युक्त नानरेप्लिकेटिंग प्लास्मिड डीएनए को इलेक्ट्रोपोरेशन, न्यूकलियोफेक्शन और लिपोफेक्टामीन रणनीतियों द्वारा ट्रांसफेक्ट कर रहे हैं। कलचर्ड स्तनधारी और माउस कोशिकाओं में कैस–9 और/या जीआरएनएस के रचनात्मक अभिव्यक्ति के लिए लेंटीवाइरल (Lentiviral) वेक्टर्स (Vectors) उपयोग में लाए जा रहे हैं। इसके अलावा, सीआरआइएसपीआर/कैस–9 घटकों को कृत्रिम परिवेशीय अनुलेख (transcribe) करके जेबराफिश, फल मक्खियों, चूहों, और चूहों के भ्रूण में सीधे इंजेक्ट किया गया है। पौधों में सीआरआइएसपीआर/कैस–9 घटकों का पहुंचाने के लिए मानक तरीकों जैसे पेग (PEG) की मध्यस्थता में प्रोटोप्लास्ट ट्रांसफोरमेशन, भ्रूण और पत्ती में एग्रोबैक्टीरियम की मध्यस्थता से ट्रांस्फर, या कैलस में प्लास्मिड डीएनए का बाम्बार्डमेंट का इस्तेमाल किया जा रहा है।

सीआरआइएसपीआर क्रिस्पर/कैस 9 तंत्र

सीआरआइएसपीआर द्वारा लक्षित जीनोम संपादन के लिये सबसे पहले कैस–9 की मदद से डीएनए डबल स्ट्रेंडेड ब्रेक (DSBs) बनाए जाते है। कैस 9 में दो तरह की एंडोन्यूक्लिएस डोमेन होती है क्रमशः आरयूवीसी 1 (RuvC1) और एचएनएच 1 (HNH1)। जो लक्षित जीनोमसाइट पर डबल स्ट्रेंडेड ब्रेक बनाते है। कैस–9 प्रेरित DSBs दो तरीको से जुड़ते है। यह तरीके लगभग सभी प्रकार की कोशिकाओं और जीवों में संचालित है। यह तरीके हैं नानहोमोलोगस एंड जॉइनिंग (NHEJ) और होमोलोजी डाइरेक्टेड रिपेयरिंग (HDR) (चित्र. 2)। नानहोमोलोगस एंड जॉइनिंग की वजह से इनर्सशन/डिलीशन म्यूटेशन (indels) उत्पन्न होते है। जिससे ओपेन रीडिंग फ्रेम मे फ्रेमशिफ्ट म्यूटेशन हो जाते हैं और जीन का प्रकार्य नष्ट हो जाता है। नानहोमोलोगस एंड जॉइनिंग द्वारा प्रमोटरों या एनहांसर (Enhancer) पर ट्रांस एक्टिंग फैक्टर बाइंडिंग साइट को भी परिवर्तित किया जा सकता है। होमोलोजी डाइरेक्टेड रिपेयरिंग लक्षित

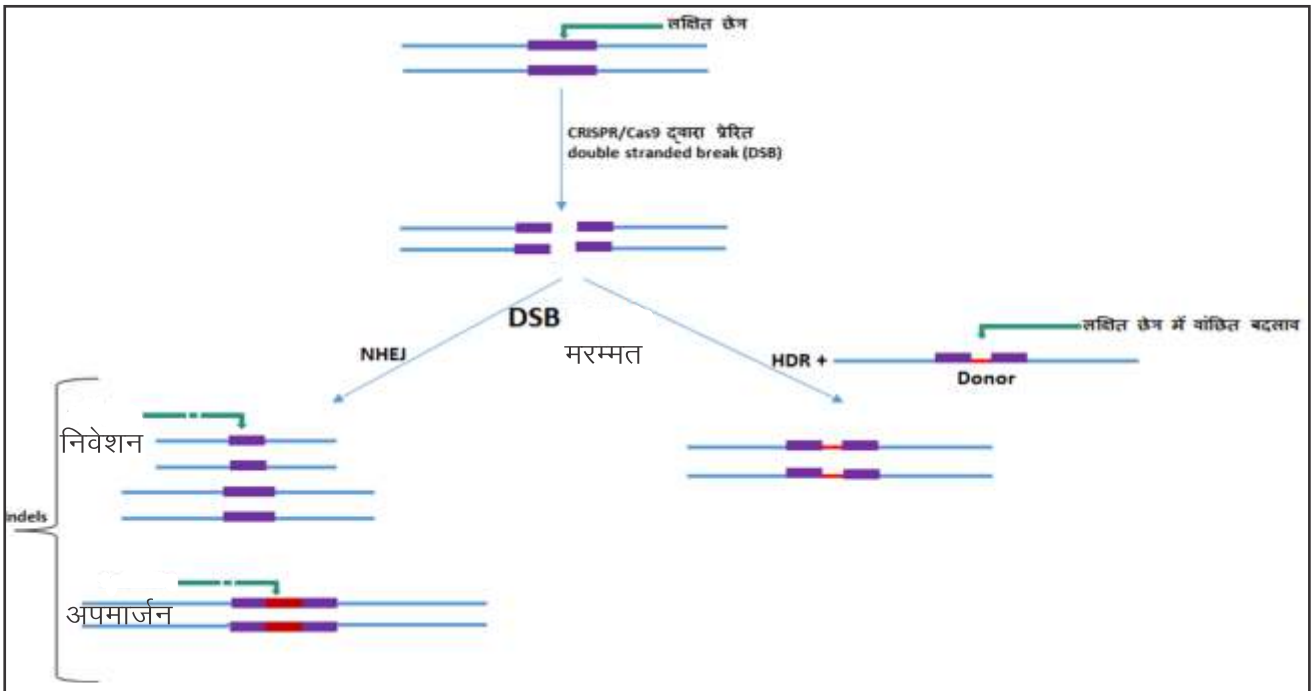

चित्र 2. न्यूक्लियेज प्रेरित जीनोम संपादन। न्यूक्लेयस प्रेरित डबल स्ट्रांडेड ब्रेक (DSBs) की नानहोमोलोगस एंड जॉइनिंग (NHEJ) या होमोलोजी डाइरेक्टेड रिपेर (HDR) द्वारा मरम्मत की जा सकती है। असंक्षिप्त NHEJ की मध्यस्थता वाले मरम्मत में डीएसबी के स्थल पर परिवर्तनशील लंबाई के (indels के रूप में जाना जाता है) निवेशन और या अपमार्जन म्यूटेशन उत्पन्न होता है। एचडीआर द्वारा मध्यस्थ मरम्मत में एक सिंगल स्ट्रांडेड या डबल स्ट्रांडेड डीएनए दाता टेम्पलेट में सटीक बिंदु उत्परिवर्तन या निवेशन उत्पन्न कर सकते हैं।

जीनोम साइट पर विशिष्ट पॉइंट म्यूटेशन तथा इनर्सशन करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। इस प्रक्रिया में सीआरआइएसपीआर तंत्र के साथ एक टेम्पलेट डीएनए (donor template) भी ट्रांसफार्म किया जाता है। जो होमोलोगस रीकोम्बीनेशन द्वारा लक्षित जीनोमसाइट पर बदलाव लाने के लिये आवश्यक होता है। होमोलोजी डाइरेक्टेड रिपेयरिंग द्वारा लक्षित जीनोमसाइट पर बदलाव लाने की प्रक्रिया की आवृति लगभग 1% होती है। कुछ दुर्लभ मामलों मे शोधकर्ताओं ने होमोलोजी डाइरेक्टेड रिपेयरिंग की आवृति 50% तक बतायी है। वांछित म्यूटेशन किसी भी दवा प्रतिरोध मार्कर चयन के उपयोग के बिना, सरल पीसीआर स्क्रीनिंग से पहचाना जा सकता है।

सीआरआइएसपीआर द्वारा लक्षित जीनोम संपादन के लिये कैस–9 वेरिएंटस (जिन्हें 'Nickase' के रूप में जाना जाता है) भी उपयोग मे लाये जा रहे है। कैस–9 वेरिएंटस आरयूवीसी 1 या एचएनएच एंडोन्यूकलीएस डोमेन को म्यूटेट कर के बनाए जाते है। यह वेरिएंटस लक्ष्य डीएनए साइट पर दो के बजाए एक ब्रेक कोम्प्लीमेंटरी या नॉनकोम्प्लीमेंटरी स्ट्रेंड पर उत्पन्न करते है। कैस–9 निकेसेस (NIckases) कुछ डीएनए साइट पर एचडीआर के साथ बहुत कम आवृति में एनएचईजे इंडेल्स (NHEJ indels) भी उत्पन्न करते हैं। हालांकि कुछ डीएनए साइटस पर कैस–9निकेसेस द्वारा एचडीआर की आवृति सामान्य कैस–9 जैसी होती हैं, पर ज्यादातर यह आवृति बहुत कम रहती है। हालांकि कैस–9 निकेसेस द्वारा उत्पन्न डबल स्ट्रेंडेड डीएनए ब्रेक के सटीक रास्ते अभी तक अपरिभाषित हैं, पर यह माना जाता है कि जब रेप्लीकेशन फोर्क, न्यूकलीएस (nuclease) प्रेरित निक साइट से गुजरता है तो डीएनए में डबल स्ट्रेंड ब्रेक (DSBs) उत्पन्न होते हैं।

क्रिस्पर/कैस तकनीक के उपयोग

कार्यात्मक विषविज्ञान

कार्यात्मक विषविज्ञान द्वारा, वांछित कोशिका में किसी

पाथवे में संलग्न जीन या प्रोटीन के सिस्टेमिक नॉक आउट (Systemic knock) या नॉकडाउन के बाद, उन कोशिकाओं का किसी विषाक्त यौगिक के संपर्क में आने के बाद विषाक्तता फीनोटाइप मापा जा सकता है, जैसे लीथालिटी, वायाबिलिटी (Viabilty) या फिटनेस। चूंकि इस प्रक्रिया से सीधे फीनोटाइप को मापा जाता है, इसलिए यह किसी विशेष जीन के अभाव में एक विषाक्त यौगिक के प्रति सेलुलर रेस्पोंस में उसके लॉस ऑफ फंकशन के बारे में सूचना प्रदान करते हैं। इस प्रकार के, कार्यात्मक विषविज्ञान स्क्रीनिंग के तरीकों को उन जीनों की पहचान करने के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं जो विषैले पदार्थ से प्रतिरोध या संवेदनशीलता प्रदान करते हैं अथवा यह मार्ग विश्लेषण के माध्यम से, विषाक्तता के पाथवे (Pathway) को प्रकट करने के लिए भी उपयोग में लाया जा सकता है। कार्यात्मक विषविज्ञान के विश्लेषण जो की बडिंग और फिशन (fission) ईस्ट (yeast), बैक्टीरिया, निमेटोड, फल और मक्खियों और जेबराफिश (Zebrafish)में किये गए है, बताते हैं कि विषैले पदार्थ कैसे कार्य करते हैं, अधिक विशेष विषाक्त एंड पॉइंट्स को परिभाषित करते हैं, और यंत्रवत आधारित ऐसेस (assays) को सूचित भी करते हैं। इन जीवों में उत्परिवर्ती क्लोनो की उपलब्धता से तथा जीनोम संपादन के तरीके की वजह से हाइ (high) थ्रौपुट (throughput) स्क्रीनिंग अच्छी तरह से स्थापित है। लेकिन स्तनधारीयों के जीन के साथ अधूरी अनुरूपता के कारण, इन का मानव विषाक्तता के लिए उपयोग अप्रासंगिक है।

मनुष्यों में विषैले पदार्थों के लिए संवेदनशीलता में बहुत भिन्नता होती है। वर्तमान में विषाक्त पदार्थों में जोखिम मूल्यांकन की रणनीतियाँ, अंतर–व्यक्तिगत परिवर्तन के लिए अनिश्चितता कारकों पर निर्भर है, जोकि किसी व्यक्ति या आबादी के लिए जोखिम को अतिप्राक्कलन (overestimate) या अवप्राक्कलन (underestimate) करते हैं। जैसे आनुवंशिक परिवर्तन व्यक्तिगत भिन्नता के कारण होता है, विषैले पदार्थ से उत्पन्न प्रतिक्रिया के आनुवंशिक परिवर्तनशीलता की बढ़ती समझ से अधिक सटीक तरीके से रासायनिक जोखिम का मूल्यांकन हो सकेगा। वर्तमान में कार्यात्मक विषविज्ञान में रासायनिक विषाक्तता का मूल्यांकन करने के लिए व्यापक पशु आधारित ऐसेस का उपयोग किया जा रहा है जोकि एक भारी और बेहद महंगा दृष्टिकोण है और आम तौर पर एंड पॉइंट्स की एक सीमित संख्या का आंकलन ही करता है। अभी हजारों उपयोग में लाये जाने वाले रसायनों के बारे में पर्याप्त विषाक्तता डेटा की कमी है, विचार किया जा रहा है कि पारंपरिक तरीकों द्वारा इस डेटा को भरने का प्रयास अनुचित है। अतः इस प्रकार की स्थिति में इस तरह के रासायनिक विषाक्तता परीक्षणों के लिए क्रियाविधिक (mechanistically) आधारित उच्च थ्रौपुट (throughput) के सेलुलर इन विट्रो ऐसे (assay) की जरूरत है। पशु सेल लाइनों या नॉकआउट जानवरों की पीढ़ी में जीनोम संपादन के लिए पारंपरिक तरीकों का उपयोग एक समय लेने वाली और महंगी प्रक्रिया बनी हुई है जिस कारण विश्लेषण करने के लिए कार्यात्मक विष विज्ञान में इसकी उपयोगिता सीमित है। इसके अलावा द्विगुणित कोशिकाओं जैसे चूहों, मनुष्य आदि में जीन के दोनों गुणसूत्र की प्रतियों को लक्षित किया जाना चाहिए जिससे जीन फंकशन पूर्ण रूप से खत्म हो सके जो एक अक्षम और श्रमसाध्य कार्य है।

सीआरआइएसपीआर/कैस–9 जीनोम संपादन प्रणाली से, अन्य पहले से विकसित तकनीकों के साथ जुड़ी सीमाओं को दूर कर सकते हैं। ये विभिन्न प्रकार के ट्रांसफेक्टेबल कोशिकायों और जीवों पर लागू की जा सकती हैं। ये अत्यधिक विशिष्ट, कुशल, आसानी से डिजाइन की जाने वाली और उच्च थ्रौपुट (throughput) और मल्टिप्लेक्स जीन संपादन के लिए अनुकूल तकनीक हैं। सीआरआइएसपीआर/कैस–9 द्वारा जीनोम के अधिकांश क्षेत्रों पर लक्षित नॉकआउट उत्पादन किए जा सकते हैं। इस रणनीति में एक एकल गाइड आरएनए (sgRNA), कैस–9 नूक्लेयसेस को लक्ष्य डीएनए को काटने के लिए निर्देशित करता है। एक अध्ययन में कैंसर की कोशिकाओं में जीवन क्षमता के लिए आवश्यक जीन को पहचाना गया तथा एक मानव जीन की पहचान की गई है जो वेमुराफेनिब (Vemurafenib) में अस्तित्व के लिए आवश्यक है, जो एक aRAF अवरोधक होता है। कुछ वैज्ञानिकों नें मानव कोशिका लाइनों में इस विधि का उपयोग कर उन जीनों की पहचान की जो न्यूक्लियोटाइड एनालोग 6–थायोगुआनिन (analog6-thioguanine)

और डीएनए टोपोइसोमरेस II (topoisomeraseII) का अवरोध करने वाले एटोप्साइड (etoposide) को कोड करते हैं। स्तनधारी सेल लाइनों में सरलीकरण और विलोपन प्रक्रियाओं की स्क्रीनिंग के अभियान का निस्संदेह कार्यात्मक विषविज्ञान पर काफी असर पड़ेगा। इसलिए, सीआरआइएसपीआर/कैस–9 आधुनिक विषविज्ञान के क्षेत्र में अभूतपूर्व यंत्रवत अंतर्दृष्टि प्रदान करेगा क्योंकि यह एक शक्तिशाली कार्यात्मक जीनोमिक स्क्रीनिंग दृष्टिकोण है।

न्यूरोसाइंस

कार्यात्मक जीनोमिक्स द्वारा हमारी सेलुलर और सर्किट स्तर पर मस्तिष्क समारोह की समझ को बहुत उन्नत किया है। विभिन्न आनुवंशिक तकनीकों की उपलब्धता से गैर स्तनधारी और स्तनधारी जीवों में न्यूरोनल विविधता और मानव मस्तिष्क विकारों को समझना आसान हो गया है। जिससे कि रासायनिक डीएनए उत्परिवर्तजन और आरएनए इंटरफेरेंस (आरएनएआई) के विकास के कारण आनुवंशिकी और विकासात्मक जीव विज्ञान के क्षेत्र में बदलाव आया है। इसके लिए मुख्य रूप से मक्खियों, कीड़े और मछली जैसे गैर स्तनधारी जीवों में अनुसंधान जिम्मेदार है। होमोलोगस रिकोंविनेशन के द्वारा भ्रूण स्टेम कोशिकाओं (ESCs) में सटीक आनुवंशिक संशोधन के द्वारा स्तनधारी मस्तिष्क का अध्ययन और चूहों में मानव रोगों की मॉडलिंग के लिए मार्ग प्रशस्त हुआ है। उदाहरण के लिए, कई तंत्रिका संबंधी विकार जैसे अल्जाइमर रोग, कई आनुवंशिक जोखिम कारकों के साथ जुड़े है, जिनका अध्ययन पशु मॉडल में किया जा सकता है। इसके अलावा, मानव ESCs और प्रेरित स्टेम कोशिकाओं (IPSCs) पर आधारित दृष्टिकोण से हमारे सेलुलर प्रक्रिया को सामान्य और रोग जनक कंडीशन में समझने के लिए इन विट्रो मॉडल के तरीके बदल रहे हैं।

उदाहरण के लिए जटिल मस्तिष्क के विकारों के आणविक तंत्र को इन विट्रो समझने के लिए मानव स्टेम कोशिकायों को न्यूरॉन्स या ग्लिया (glia) में परिवर्तित किया जा सकता है। जीनोम संपादन प्रौद्योगिकियों, शोधकर्ताओं को पशुओं और सेलुलर मॉडल दोनों का पूरा फायदा उठाने के लिए और तंत्रिका विज्ञान अनुसंधान के लिए गैर परंपरागत मॉडल जीवों के साथ और अधिक आसानी से काम करने के लिए अनुमति दे रहे हैं।

सीआरआइएसपीआर/कैस–9 जीनोम संपादन तकनीक साइट विशेष जीनोमिक संशोधनों की सुविधा के लिए विकसित की गयी है। तंत्रिका तंत्र का अध्ययन करने के लिए सीआरआइएसपीआर कैस सिस्टम का उपयोग कर जानवरों की विभिन्न प्रजातियों में साइनेपटिक (synaptic) और सर्किट कार्यों, न्यूरोनल विकास और रोगों के बारे में पता लगाया गया है। इस प्रकार, जीनोम संपादन विशेष रूप से सीआरआइएसपीआर कैस एंजाइमों पर आधारित तकनीक से इन वाईवो और इनविट्रो में, नए मॉडल सिस्टम के द्वारा न्यूरोंसाईंटिफिक और जैवचिकित्सा अनुसंधानों के लिए नए रास्ते खोल दिए हैं।

जीन थेरेपी

सीआरआइएसपीआर/कैस–9 प्रणाली द्वारा जीन थेरेपी क्षमता का पता लगाने के लिए सर्वप्रथम उदाहरणों में से एक में, एचआईवी –1 के लॉन्गटर्मिनल रिपीट (LTR) अनुक्रम को सीआरआइएसपीआर का उपयोग कर इन विट्रो मॉडल में उत्परिवर्तित किया गया था। इससे एकीकृत प्रोवाइरल डीएनए मेजबान कोशिकाओं से हट गया और वायरस की अभिव्यक्ति में उल्लेखनीय गिरावट हुई। क्रोनिक हेपेटाइटिस बी जो दुनिया भर में सबसे आम संक्रामक रोगों में से एक है, लीवर सिरोसिस और कैंसर को भी जन्म दे सकता है। हेपेटाइटिस बी वायरस (HBV) का संक्रमण एचबीवी (HBV) के कोवलेंटली क्लोज्ड सरकुलर डीएनए (cccDNAs) के इंट्राहिपेटिक अस्तित्व के कारण है जोकि वर्तमान चिकित्सा विज्ञान द्वारा समाप्त नहीं किए जा सकते और एचबीवी पुर्नसक्रियन के लिए एक रिजर्वोयर (reservoir) के रूप में कार्य करते हैं। हाल के एक अध्ययन में बताया गया है की सीसीसीडीएनए (cccDNA) लक्ष्य सीआरआइएसपीआर/कैस–9 प्रणाली को हेपजी2 (HepG2) कोशिकाओं में डालने पर हेपेटाइटिस बी कोर प्रतिजन अभिव्यक्ति और उत्परिवर्तित सीसीसीडीएनएस (cccDNAs) में कमी पायी गयी है । इससे सीआरआइएसपीआर – कैस 9 द्वारा मध्यस्थत सीसीसीडीएनए निकासी में आगे शोध

की संभावना बनती है।

मोनोजेनेटिक (Monogenetic) विकार एकल जीन दोष के कारण होता है। कैंसर जैसे पॉलीजेनिक (polygenic) रोगों की तुलना में, मोनोजेनेटिक विकारों को जीन उपचार के द्वारा ठीक करना आसान है। वर्तमान में, मोनोजेनेटिक विकारों के सुधार के लिए सीआरआइएसपीआर/कैस–9 की मध्यस्थता वाली जीन थेरेपी का महत्वपूर्ण उपयोग है। पशु जर्म लाइन में जीन सुधार, जीन थेरेपी के अध्ययन के लिए एक पारंपरिक तरीका है हालांकि,यह वर्तमान में मनुष्य के लिए लागू नहीं है। डुचेन्ने (Duchenne) पेशी डिस्ट्रोफी (dystrophy) जोकि एक्स गुणसूत्र से जुड़े मोनोजेनेटिक आनुवंशिक रोगों में से एक है, इस रोग के माउस मॉडल (डीएमडी) के जर्म लाइन में सीआरआइएसपीआर/कैस–9 की मध्यस्थता वाले जीन संपादन से 2–100% दैहिक कोशिकाओं के साथ मोजाक (mosaic) सन्तान उत्पन्न होती हैं जिनमें दोषी जीन का सही संस्करण होता है। माउस के क्रायजीसी (Crygc) जीन (crystallin गामा सी) के एक्सॉन–3 में एक बेस पेयर के विलोपन से फ्रेमशिफ्ट उत्परिवर्तन के परिणामस्वरूप मोतियाबिंद रोग होता है। सीआरआइएसपीआर/कैस–9 प्रणाली के द्वारा माऊस मोडेल में जर्मलाइन हेर फेर से उत्परिवर्ती जीन (Crygc) और मोतियाबिंद फेनोटाइप को कुछ संतानों में ठीक किया गया है । संक्षेप में, कैस–9 एमआरएनए (mRNA) और एक एसजीआरएनए (sgRNA) (दोषी Crygc जीन को निशाना बनाने के लिए) को व्यक्त करने वाले प्लास्मिडों को, क्रायीजीसी उत्परिवर्तन वाले म्यूरीन (murine) युग्मनजों में इंजेक्ट किया गया। 22 जीवित संतानों में से, 10 में दोषी जीन में बदलाव या तो एचडीआर द्वारा (एन = 4) या एनएचईजे द्वारा (एन = 6) पाये गये (संपादन दक्षता 45.45%) है। जैसी कि उम्मीद थी, चार संतान एचडीआर की मध्यस्थता वाले जीन सुधार के कारण मोतियाबिंद से मुक्त थे। हालांकि, एनएचईजे के दौर से गुजरी छह संतानों में से दो एनएचईजे प्रेरित इंडेल म्यूटेशन से उत्पन्न संयोगात्मक फ्रेमशिफ्टम्यूटेशन के कारण मोतियाबिंद फीनोटाइप से मुक्त थे।

शोधकर्ताओं ने मानव भ्रूण में सीआरआइएसपीआर/कैस–9 की मध्यस्थता द्वारा युग्मनज संपादन की संभावना को भी प्रदर्शन किया है। एक शोध में ट्राइप्रोन्यूकलियर (tripronuclear) मानव युग्मनजों को रक्तविकार थैलेसीमिया के लिए जिम्मेदार जीन हीमोग्लोबिन बीटा को संशोधित करने के लिए इस्तेमाल किया गया। शोधकर्ताओं ने हालांकि पाया कि इस प्रक्रिया से कई अवांछित संशोधन हो जाते हैं जो मौजूदा तकनीक के क्लिनिकल इस्तेमाल के खिलाफ तर्क है। जन्म के पूर्व निदान में मौजूदा तरीकों जैसे इन विट्रो निषेचन के बाद आनुवंशिक प्रोफाइलिंग जो जन्म रोग ग्रसित संतानों को चुनने के लिए कम जोखिम भरा विकल्प प्रदान करते हैं। अतः जर्मलाइन सम्पादन से उन अभिभावकों को लाभ होगा जो अपने शिशु में गैर–चिकित्सकीय प्रासंगिक गुण चाहते हैं।

कैंसर जीव विज्ञान

कैंसर की बीमारी ओंकोजीन और ट्यूमर शमन जीन में कई आनुवंशिक और एपीजिनैटिक (epigenetic) परिवर्तन के कारण होती है। इसलिए, सामान्य कोशिकाओं और कैंसर कोशिकाओं में बदलाव करने के लिए प्रयोगात्मक दृष्टिकोण जीनोम रोग मॉडलिंग और इस प्रक्रिया में शामिल कई जीनों के अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण हैं। दशकों के अनुसंधान और जीनोम इंजीनियरिंग प्रौद्योगिकियों के विकास से कलचर्ड कोशिकाओं में या पशु मॉडलों की कोशिकाओं के जीनोम में विशेष डीएनए अनुक्रम को हटाना या बदलना संभव हो पाया है। जिससे कैंसर के आरंभ, फैलने और चिकित्सीय प्रतिक्रिया में संलग्न जींस के कार्यों को पता किया जा सकता है। हाल ही में वर्णित प्रोकार्योटिक सीआरआइएसपीआर कैस सिस्टम तेजी से पहले के तरीकों की सीमाओं पर काबू पा कर जीनोम इंजीनियरिंग के परिदृश्य को बदल दिया है।

सीआरआइएसपीआर/कैस–9 प्रणाली के लचीलेपन और प्रतिरूपकता ने कोशिका कल्चर प्रणालियों में सफलतापूर्वक कई जीनोम इंजीनियरिंग अनुप्रयोगों के विकास को प्रेरित किया है। इनमें से कई शोधकर्ताओ ने इन विवो उपयोग भी अनु कूलित किये हैं। इस तकनीक की शक्ति को तेजी से ट्यूमर शमन जीन, ओंकोजीन और सेलुलर परिवर्तन या दवा की प्रतिक्रिया के अन्य माड्युलेटर्स में लास आफ फंक्शन (LOF) और गेन ऑफ फंक्शन (GOF) म्यूटेशन

इंजीनियरिंग के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। उदाहरण के लिए हाल ही में व्यवस्थित मानव कोलोरेक्टल कैंसर (सीआरसी) को मॉडल करने के क्रम में अनट्रांसफार्म मानव आंतों के ओरगानोइड्स में दोनों लास आफ फंक्शन (LOF) और गेन ऑफ फंक्शन। म्यूटेशन इंजीनियरिंग के लिए सीआरआइएसपीआर/कैस–9 प्रणाली के उपयोग का प्रदर्शन किया। उल्लेखनीय है कि सीआरसी के साथ जुड़े (तीन LOF म्यूटेशन और दो GOF म्यूटेशन) पांच स्वतंत्र म्यूटेशन के सिरियल प्रस्तुति से मानव रोग के ट्यूमरोजेनिक (tumorigenic) और मेटास्टेटिक विशेषताओं की पुनरावृत्ति नहीं हो पायी। इससे यह पता चलता हैं कि पूर्ण मलिग्नेंसी (malignancy) के लिए अतिरिक्त द्वितीयक अनुवांशिक और या एपीजेनेटिक घटना आवश्यक हैं। इसके अलावा, सीआरआइएसपीआर/कैस–9 सिस्टम को मल्टीप्लेक्स करने की क्षमता, कैंसर की कोशिकाओं में मिश्रित कमजोरियों की जांच करने के लिए अवसर भी प्रदान करता है।साथ ही व्यवस्थित एपिस्टाटिक रिश्ते और कृत्रिम घातक पारस्परिक प्रभाव के विश्लेषण का भी अवसर देते हैं।

हाल ही में शोधकर्ताओं ने 73,000 एकल गाइड आरएनएस (sgRNAs) की लाइब्रेरी का निर्माण और इस्तेमाल उन मानव जीन को छांटने के लिए किया है जो न्यूक्लियोटाइड एनालॉग 6–थायोगुअनिन ने (thioguanine) की उपस्थिति में डीएनए मिसमेच रिपेयर में संलग्न हैं और उन जीन के लिए किया है जिनके व्यवधान से टोपोइसोमरेस 2 (TOP2A) जहर एटोप्सईड के लिए प्रतिरोध उत्पन्न होता है। आश्चर्यजनक रूप से, दोनों सीआरआइएसपीआर स्क्रीन उच्च संकेत शोर अनुपात का प्रदर्शन करते हैं। प्रत्येक स्क्रीन से शीर्ष स्कोरिंग एसजीआरएनएस (sgRNAs) क्रमशः एमएमआर मार्ग और टॉप (TOP) 2ए में शामिल हैं। एक अन्य समानांतर अध्ययन में शोधकर्ताओं ने 65,000 मानव जीन के एसजीआरएनएस की लाइब्रेरी का निर्माण और स्क्रीनिंग की और सफलतापूर्वक कैंसर कोशिका लाइनों और प्लुरिपोटेंट (pluripotent) स्टेम कोशिकाओं दोनों में अनिवार्य जींस के पहचान की। इसके अलावा, मेलेनोमा सेल लाइनों में एक सकारात्मक चयन स्क्रीन प्रदर्शन के लिए इस लाइब्रेरी का इस्तेमाल उन जींस को उजागर करने के लिए किया गया जिनके विलोपन से ब्राफ– वी 600 ई (BRAF-V600E) अवरोध करने वाला वेमुराफेनिब (vemurafenib) के लिए प्रतिरोध उत्पन्न होता है। इसके अतिरिक्त शोधकर्ताओं ने सफलतापूर्वक सीआरआइएसपीआर आधारित स्क्रीनिंग प्रौद्योगिकियों के व्यापक प्रयोज्यता का प्रदर्शन किया है जैसे क्रमशः माउस भ्रूणीय स्टेम कोशिकाओं और मानव कोशिकाओं में मेजबान कारकों द्वारा मध्यस्थ विष संवेदनशीलता की पहचान करने के लिए। इन विट्रो स्क्रीन के अलावा, शोधकर्ताओं ने हाल ही में ट्यूमर प्रगति और मेटास्टेसिस में शामिल जीनों को उजागर करने के लिए, इन विवो स्क्रीन में पूरे जीनोम में प्रदर्शन के लिए सीआरआइएसपीआर/कैस–9 प्रणाली की उपयोगिता का प्रदर्शन किया है।

सीआरआइएसपीआर द्वारा जीनोम इंजीनियरिंग से भ्रूण स्टेम सेल कोशिकाओं (ES) या आनुवांशिक इंजीनियर्ड माउस मॉडल (GMEM) से उत्पन्न ईएस (ES) कोशिकाओं को तेजी से कई आनुवांशिक परिवर्तन वाले नवीन कैंसर जीईएमएमस (GEMMs) या कैंसर के गैर जर्मलाइन जीईएमएमस (nGEMMs) पैदा करने के लिए उपयोग किया जा सकता है। इन परिवर्तनों में कंडीशनल या रचनात्मक नॉकआउट या नॉकइन युग्मविकल्पी, अंतर्जात सिंथेटिक टैग या रिपोर्टर, गैर–कोडिंग एकल न्यूकलियोटायिड बहुरूपताओं (SNPs) और जीनोमिक पुर्नव्यवस्थान शामिल है। साथ ही मल्टीप्लेक्स सीआरआइएसपीआर की मध्यस्थता वाले जीनोम इंजीनियरिंग के माध्यम से या ईएस (ES) कोशिकाओं की फिर से इंजीनियरिंग से इन सभी का जेनॉमिक व्यवस्था या संयोजन शामिल है। सीआरआइएसपीआर की मध्यस्थता वाले सोमैटिक जीनोम इंजीनियरिंग को इन विवों ट्यूमर वाले चूहों के दल उत्पन्न करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है जिनमें कैंसर जीव विज्ञान के दोनों बुनियादी और ट्रांसलेशनल पहलुओं का अध्ययन किया जा सके।

आसवनी अपशिष्ट को अनॉक्सीकृत प्रक्रिया द्वारा शोधनोपरान्त पर्यावरण मे सुरक्षात्मक निस्तारण की चुनौतियाँ

विनीत कुमार एवं राम चन्द्रा

पर्यावरणीय सूक्ष्मजैविकी प्रभाग, पर्यावरण विषविज्ञान विभाग
सी.एस.आई.आर.–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
विषविज्ञान भवन, 31 महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ, 226001, उत्तर प्रदेश, भारत

1.प्रस्तावना

आसवनी उद्योग भारत के मुख्य 17 प्रदूषण फैलाने वाले उद्योगों में एक है तथा इन आसवनी उद्योगों का एल्कोहल उत्पादन में एशिया में प्रथम स्थान है। एल्कोहल को मुख्यतः शीरे के किण्वन द्वारा यीस्ट कोशिकाओं (खमीर) की सहायता से 50 से 55 घंटे में 25 से 30 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान पर बनाया जाता है जिसमें एल्कोहल की मात्रा लगभग 8 से 10 प्रतिशत होती है। किण्वनोपरान्त एल्कोहल युक्त इस विलयन को आसवन विधि द्वारा एल्कोहल तथा सह उत्पादकों जैसे मिथेनाल, ब्यूटेनाल, प्रोपेनाल आदि मे अलग कर दिया जाता है। आसवनोपरान्त जो गाढ़े भूरे रंग का द्रवीय पदार्थ बचता है उसे स्पेन्टवास/वेस्टवाटर कहा जाता है। सामान्यतः 1 लीटर एल्कोहल बनाने मे लगभग 8 से 10 किलोग्राम शीरा का उपयोग होता है जिसके फलस्वरूप 12 से 15 लीटर स्पेन्टवास का उत्पादन होता है। एल्कोहल तथा वेस्टवाटर बनने की प्रक्रिया को चित्र 1 द्वारा दर्शाया गया है।

अखिल भारतीय आसवनी उद्यमी संगठन के आंकड़ों (2005) के अनुसार हमारे देश मे लगभग 319 आसवनी उद्योग प्रतिवर्ष लगभग 3.25×10^{9} लीटर एल्कोहल का उत्पादन करते हैं जिसके फलस्वरूप 40.4×10^{10} लीटर स्पेन्टवास उत्प्रवाह के रूप में विसर्जित होता है। यह स्पेन्टवास अम्लीय प्रकृति का होता है जिसमे मुख्यतः मिलेन्वाइडिन्स, फिनोलिक्स, कैरामल, सल्फाइड तथा भारी धातुएँ पायी जाती हैं जो कि स्पेन्टवास के गाढ़े भूरे रंग के लिए उत्तरदायी होते हैं। स्पेन्टवास की जैविक तथा रासायनिक ऑक्सीजन माँग की मात्रा अधिक होने के कारण आसवनी उद्योगों मे इसका शोधन मुख्य रूप से अनॉक्सीकृत प्रक्रम द्वारा मिथेन गैस के उत्पादन के लिए किया जाता है चित्र 2क। इस प्रक्रिया में मिथेन गैस के साथ कार्बन–डाई–ऑक्साइड गैस का

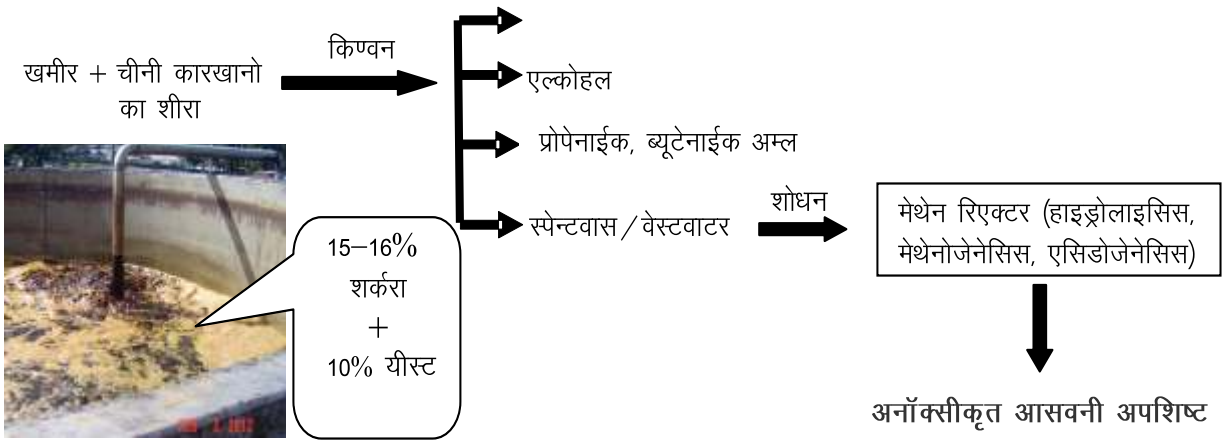

चित्र 1 : एल्कोहल तथा अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट के बनने की प्रक्रिया

चित्र 2 : उद्योग मे मेथेन रिएक्टर द्वारा स्पेन्टवास का शोधन (क) शोधनोपरान्त उद्योग से निकलता हुआ अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट (ख) ऐरेटर द्वारा शोधन (ग) अनॉक्सीकृत आसवनी **अपशिष्ट के साथ घुलित ठोस (स्लज) (घ) आसवनी** अपशिष्ट से **बाहर निकला हुआ ठोस** अपशिष्ट **(स्लज) (च)**

उत्पादन भी होता है जिसके फलस्वरूप स्पेन्टवास का पीएच 4.5 से 8.5 तक पहुँच जाता है और अन्त में इसे अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट कहा जाता है। यह अपशिष्ट गाढ़े काले रंग के जटिल द्रवीय पदार्थ के रूप में दिखता है चित्र (2ख)। अनॉक्सीकृत प्रक्रम द्वारा लगभग 50 प्रतिशत रासायनिक ऑक्सीजन माँग की मात्रा को मिथेन गैस में परिवर्तित कर दिया जाता है।

भौतिक–रासायनिक विश्लेषण द्वारा यह पता चल गया है कि अनॉक्सीकृत प्रक्रम द्वारा आसवनी अपशिष्ट को उपचारित करने के बाद भी आसवनी अपशिष्ट की विषाक्ता तथा इसमें उपस्थित प्रदूषकों मे कोई खास परिवर्तन नही आ पाता है जैसा कि तालिका (1) मे दिखाया गया है। इसकी विषाक्तता को कम करने के लिए इसे पुनः उपचारित करने की आवश्यकता होती है। अतः उद्योगों में इसके पुनः उपचार के लिए ऐक्टीवेटेड स्लज प्रक्रिया अथवा अपफ्लो अनॉक्सीकृत स्लज बलैंक्ट (यू0ए0एस0बी0) रिएक्टर प्रक्रिया को उपयोग मे लाया जाता है (चित्र 2ग)। औद्योगिक इकाईयों द्वारा मिथेन रिएक्टर तथा ऐक्टिवेटेड स्लज प्रक्रिया में जटिल द्रवीय पदार्थ के साथ कुछ ठोस अपशिष्ट भी बाहर निकलता है जिसे स्लज कहा जाता है चित्र (2घ,च)। परन्तु इन प्रक्रियायों द्वारा उपचारित करने के पश्चात भी अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट में कुछ अन्तः स्त्रावी ग्रन्थियों को प्रभावित करने वाले तत्व तथा मिलेन्वाइडिन्स आदि प्रदूषक बचे रह जाते हैं। अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट को इसी दशा मे पर्यावरण में उत्सर्जित किया जाता है। यह आसवनी अपशिष्ट मृदा तथा नदियों के जल में पहुँचकर पेड़–पौधों तथा जीव–जन्तुओं के जीवन चक्र तथा इनकी कोशिकाओं पर दुष्प्रभाव डालते हैं। यही प्रदूषक पेड़–पौधों तथा जीव–जन्तुओं के खाद्य श्रृंखला के साथ मनुष्य के शरीर में पहुँचकर इन्हें हानि पहुँचाते हैं। वर्तमान में प्रयोगशाला स्तर पर किये गये

तालिका 1 – अनुपचारित तथा उपचारित आसवनी अपशिष्ट का भौतिक–रासायनिक विश्लेषण

क्र0सं0	प्रदूषक के विभिन्न मापदंड	आसवनी अपशिष्ट शोधन से पूर्व	आसवनी अपशिष्ट शोधनोपरान्त	अनुमेय सीमाएँ (यू0एस0इ0पी0ए0 के अनुसार)
1.	पीएच	4.07	8.01	––
2.	रंग	गहरा भूरा	गहरा काला	––
3.	जैविक ऑक्सीजन माँग	42,000	13,800	40.0
4.	रासायनिक ऑक्सीजन माँग	90,000	29,000	120.0
5.	कुल घुलित ठोस	77,776	16,542	––
6.	सोडियम	800	305	––
7.	क्लोराइड	2,200	1,300	750.0
8.	फिनाल	4.20	3.2	0.50
9.	सल्फेट	5,760	2,654	750.0
10	फास्फैट	5.36		
11.	भारी धातुएँ			
क	कैडमियम	बी. डी. एल.	बी. डी. एल.	0.01
ख	मैगनीज	4.556	0.98	0.20
ग	आयरन	163.947	35.967	2.00
घ	जिंक	2.487	3.11	2.00
ण	निकिल	1.175	1.233	0.10
च	लेड़	बी. डी. एल.	बी. डी. एल.	0.05
छ	क्रोमियम	1.05	4.124	0.05

सभी मानकों की मात्रा मिलीग्राम/लीटर है पीएच एवं रंग के अलावा (स्रोत–चन्द्र व अन्य, 2006, 2008, 2009)

बी.डी.एल. = Below Detection Limit

शोधकार्यों से यह पता चला है कि यदि अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट को पर्यावरण में पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवों जैसे जीवाणु, कवक, शैवाल/साइनोबैक्टीरिया आदि से उचित पर्यावरणीय दशाओं में उपचारित किया जाये तो ये सूक्ष्मजीव अपशिष्ट में उपस्थित जटिल प्रदूषकों को विघटित करके इसकी विषाक्तता को खत्म कर देते हैं क्योकि सूक्ष्मजीवों के अन्दर प्रदूषकों को विघटित करने में सक्षम एंजाइम्स जैसे मैग्नीज परऑक्सीडेस, लिग्नीन परऑक्सीडेस तथा लैकेस आदि पाये जाते हैं जो कि प्रदूषकों को सरल पदार्थों मे विघटित करके इन्हें खाद्य पदार्थ के रूप में ग्रहण करते हैं। अतः इस वैज्ञानिक लेख का प्रमुख उद्देश्य आसवनी उद्योगों से निकलने वाले अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट से पर्यावरण में होने वाले दुष्प्रभाव तथा इसकी विषाक्ता को कम करने के लिए किए जा रहे नवीन शोधकार्यों तथा उपचारित आसवनी अपशिष्ट के जैवप्रौद्योगिक उपयोग से छात्रों, वैज्ञानिकों तथा जनमानस को अवगत कराना

तालिका 2 – अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट मे उपस्थित मुख्य प्रदूषक तथा इनकी विशेषताएँ	
प्रदूषक	**विशेषताएँ**
मिलेन्वाइडिन्स	यह ऋणावेशित काले भूरे रंग के बहुलक होते है जो कि शर्करा (ग्लूकोज, फ्रक्टोस) एवं अमीनो अम्ल (एस्पारटिक अम्ल, ग्लूटामिक अम्ल आदि) के उच्चताप पर अभिक्रिया (मैलार्ड अभिक्रिया) करने पर बनता है। यह अपशिष्ट को हठधर्मी तथा गहरा काले रंग का बना देता है। मिलेन्वाइडिन्स सूक्ष्मजीवो के लिए एंटीआक्सीडेन्ट का कार्य करते हैं।
फिनोलिक्स	बहुफिनोलिक क्षारीय दशा में शर्करा से बनते हैं इनका रंग नारंगी से पीला होता है। एन्जाइम के ऑक्सीकरण द्वारा बहुफिनोलिक अणु आयरन अणुओं उच्च अणुभार वाले गहरे भूरे रंग का उत्पादन करते हैं। ये मुख्यतः गैलिक अम्ल, जैनटिसिक अम्ल तथा 2 मिथाईल 3,4 डाई मिथाक्सी नेफथाल पाये जाते है जो कि सूक्ष्मजीवों के लिए विषाक्त का कार्य करते हैं।
कैरामल	कैरामल उच्चताप पर शर्कराओं के अपघटन एवं संघनन द्वारा बनते हैं । इसका रंग मिलेन्वाइडिन्स की अपेक्षा कम भूरा होता है।
भारी धातुएँ	कैडमियम, मैगनीज, आयरन, जिंक, निकिल, क्रोमियम तथा लेड़ आदि भारी धातुएँ विभिन्न सल्फेट तथा सल्फाइड के साथ क्रिया करके जटिल हठधर्मी यौगिको का निर्माण करती हैं।
सल्फाइड	विभिन्न धातुओं के सल्फेट तथा सल्फाइड अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट मे दुर्गन्ध का कारण बनते हैं। ये सल्फाइड सूक्ष्मजीवो के लिए विषाक्तता का कार्य करते हैं।

है।

2.आसवनी अपशिष्ट मे घुलित जटिल एवं रंगीन यौगिक का संश्लेषण एवं उसमे उपस्थित अन्य विषैले प्रदूषक–

अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट का गहरा काला रंग मुख्य रूप से मिलेन्वाइडिन्स बहुलक की उपस्थिति के कारण होता है। मिलेन्वाइडिन्स बहुलक >50 डिग्री से0ग्रे0 तापमान तथा 4 से 7 पीएच पर शर्करा व अमीनो अम्ल के आपस में अभिक्रिया से बनता है। इस अभिक्रिया को मैलार्ड अभिक्रिया कहा जाता है। इस बहुलक में पाये जाने वाले कार्बन = कार्बन बंध अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट के गहरे काले रंग के लिए उत्तरदायी हैं। मिलेन्वाइडिन्स का आणविक सूत्र सी$_{17}$एच$_{26-27}$ओ$_{10}$एन तथा अणुभार 5,000 डाल्टन से लेकर 40,000 डाल्टन तक होता है। इसका अणुभार मुख्यतः शीरा में उपस्थित शर्करा की मात्रा पर निर्भर करता है। मिलेन्वाइडिन्स बनने की रासायनिक संश्लेषण प्रक्रिया को चित्र (3) द्वारा दर्शाया गया है। अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट में मिलेन्वाइडिन्स की मात्रा लगभग दो से पाँच प्रतिशत तक होती है। आसवनी अपशिष्ट में कार्बनिक तथा अकार्बनिक रसायन बहुतायत मात्रा में पाये जाने के कारण अपशिष्ट में जैविक तथा रासायनिक ऑक्सीजन माँग की मात्रा बहुत अधिक होती है। इसके अतिरिक्त इसमें भारी धातुएँ जैसे कैडमियम, मैगनीज, आयरन, जिंक, निकिल तथा लेड आदि भी पाये जाते हैं। अनॉक्सीकृत प्रक्रम के द्वारा इस अपशिष्ट में विभिन्न जैविक रासायनिक परिवर्तन होते हैं जिसके परिणामस्वरूप गंधक यौगिको के ऑक्सीकरण के कारण हाइड्रोजन सल्फाइड बनते हैं। ये हाइड्रोजन सल्फाइड उत्प्रवाह में उपस्थित भारी धातुओ को बाँधकर धातु सल्फाइड का कोलाइड द्रव बनाते हैं। इसके अतिरिक्त सल्फाइड, फिनोलिक्स तथा मिलेन्वाइडिन्स के साथ अभिक्रिया कर अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट को बहुत अधिक विषैला, रंगयुक्त, क्षारीय तथा जटिल बनाते हैं जिसके फलस्वरूप अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट का रंग गहरा काला

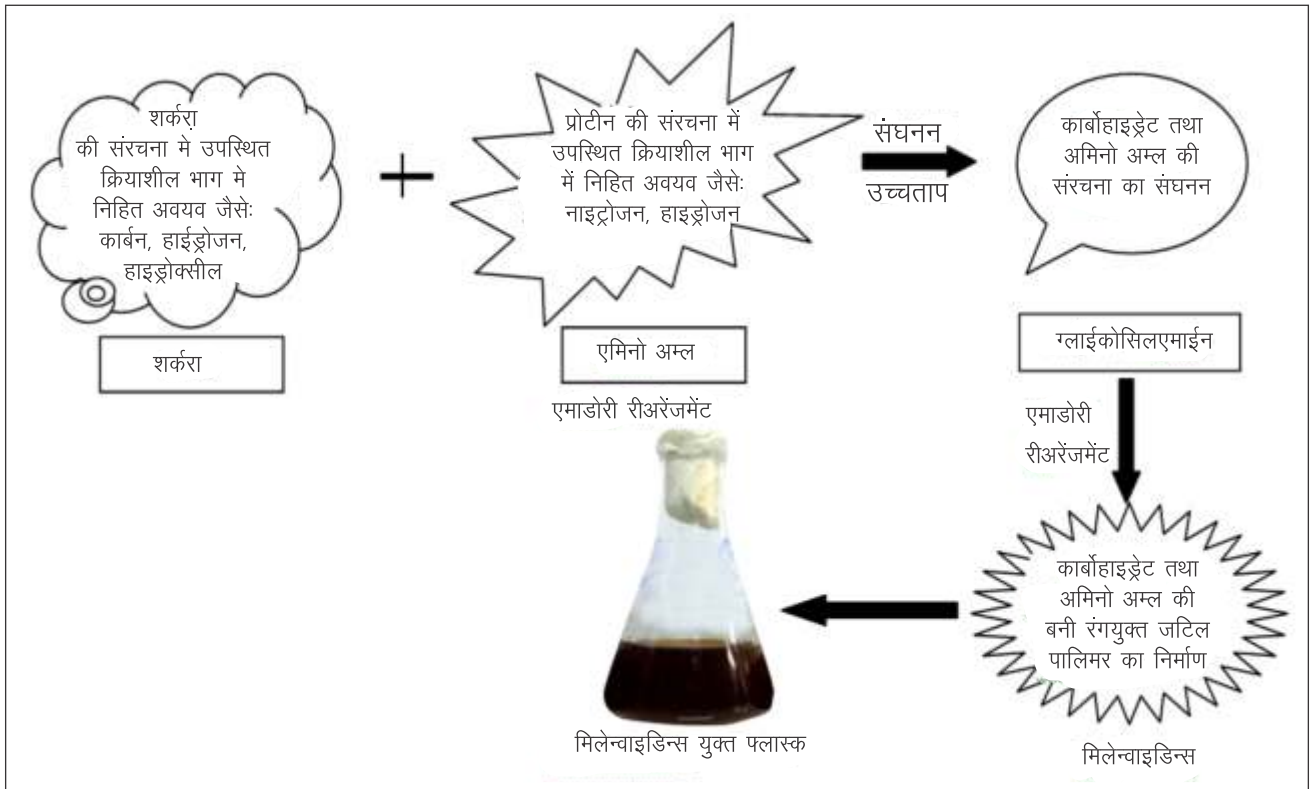

चित्र 3 : मिलेन्वाइडिन्स का साधारण रासायनिक संश्लेषण की प्रक्रिया

हो जाता है। आसवनी अपशिष्ट में उपस्थित प्रदूषकों तथा इनकी प्रमुख विशेषताओं को तालिका (2) द्वारा दर्शाया गया है।

3.अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट का प्रचलित जैविक विधियों द्वारा शोधन –

अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट को भौतिक–रासायनिक विधियों द्वारा उपचारित किया जाता है। इन विधियों में मुख्य रूप से ऐक्टिवेटेड कार्बन एडजोर्वसन, प्लाज्मा कला, ओजोनेशन तथा फ्लोकोलेशन आदि विधियों का प्रयोग किया जाता है परन्तु इन विधियों से आसवनी अपशिष्ट को कुछ सीमा तक ही शोधित किया जा सकता है तथा इन विधियों के प्रयोग में लाने से अधिक मात्रा में स्लज तथा द्वितीय स्तर के प्रदूषकों का उत्पादन होता है। ये विधियाँ अधिक समय लगने तथा खर्चीली होने के कारण वृहद स्तर पर प्रयोग नही की जाती हैं। इन विधियों द्वारा उपचारित करने के पश्चात भी अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट का खतरा पर्यावरण में पूरी तरह दूर नहीं होता है। अतः इनके पूर्ण निदान के लिए जैविक विधियों का प्रयोग प्रमुख रुप से किया जा रहा है। जैविक विधियों की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित है।

(1) जैविक विधियों मे कम पूँजी तथा कम समय लगने के कारण ये भौतिक रासायनिक विधियों से अधिक उपयोगी है।

(2) विभिन्न कार्बनिक यौगिकों का ऑक्सीकरण सरलता से हो जाता है।

(3) जलीय विषाक्तता को कम करता है।

(4) डिनाइट्रीफिकेशन प्रक्रिया के द्वारा अकार्बनिक यौगिक जैसे सल्फाइड, अमोनिया तथा कुल नाइट्रोजन सरलता से रिड्यूस हो जाते हैं।

जैविक विधियों में प्रयोग किये जाने वाले बैक्टीरिया, कवक, शैवाल तथा पैड़–पौधो आसवनी अपशिष्ट में

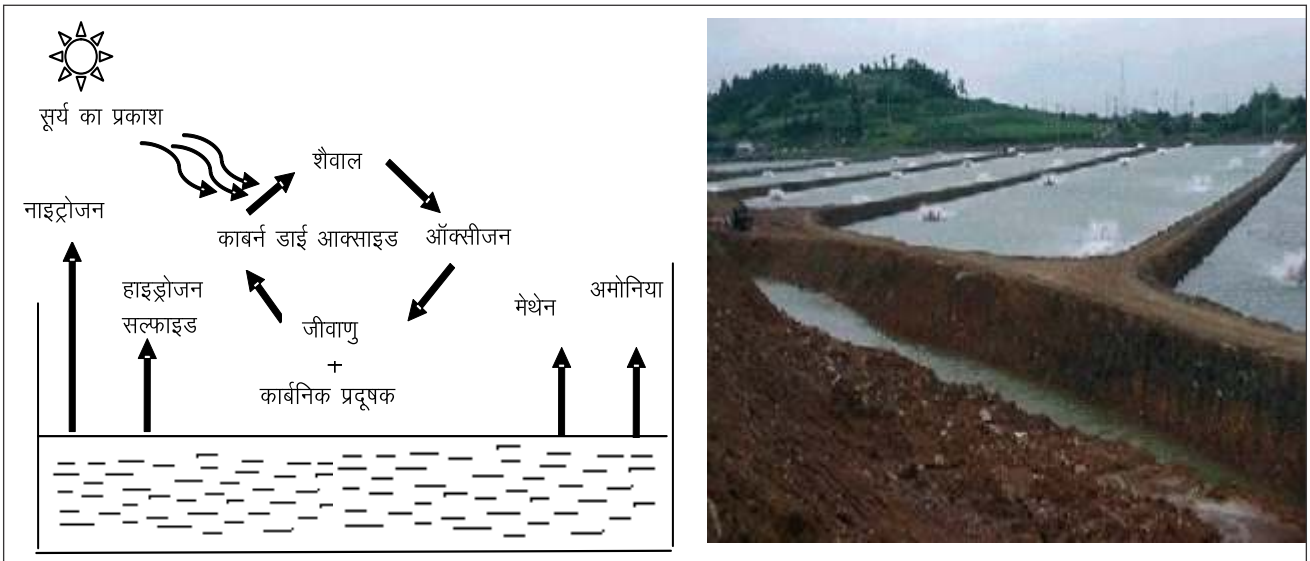

चित्र 4: आक्सीकरण तालाब मे हाने वाली प्रक्रिया (क) आक्सीकरण तालाब का दृश्य (ख)

उपस्थित प्रदूषकों को सरल पदार्थों में तोड़कर इनके हानिकारक प्रभाव को खत्म कर देते हैं। इन विधियों से उपचारित करने के पश्चात आसवनी अपशिष्ट को नदियों, तालाबों तथा अन्य जल स्त्रोतों में गिरा दिया जाता है, जिसके फलस्वरूप पर्यावरण में आसवनी अपशिष्ट का खतरा कम हो जाता है। प्रायः

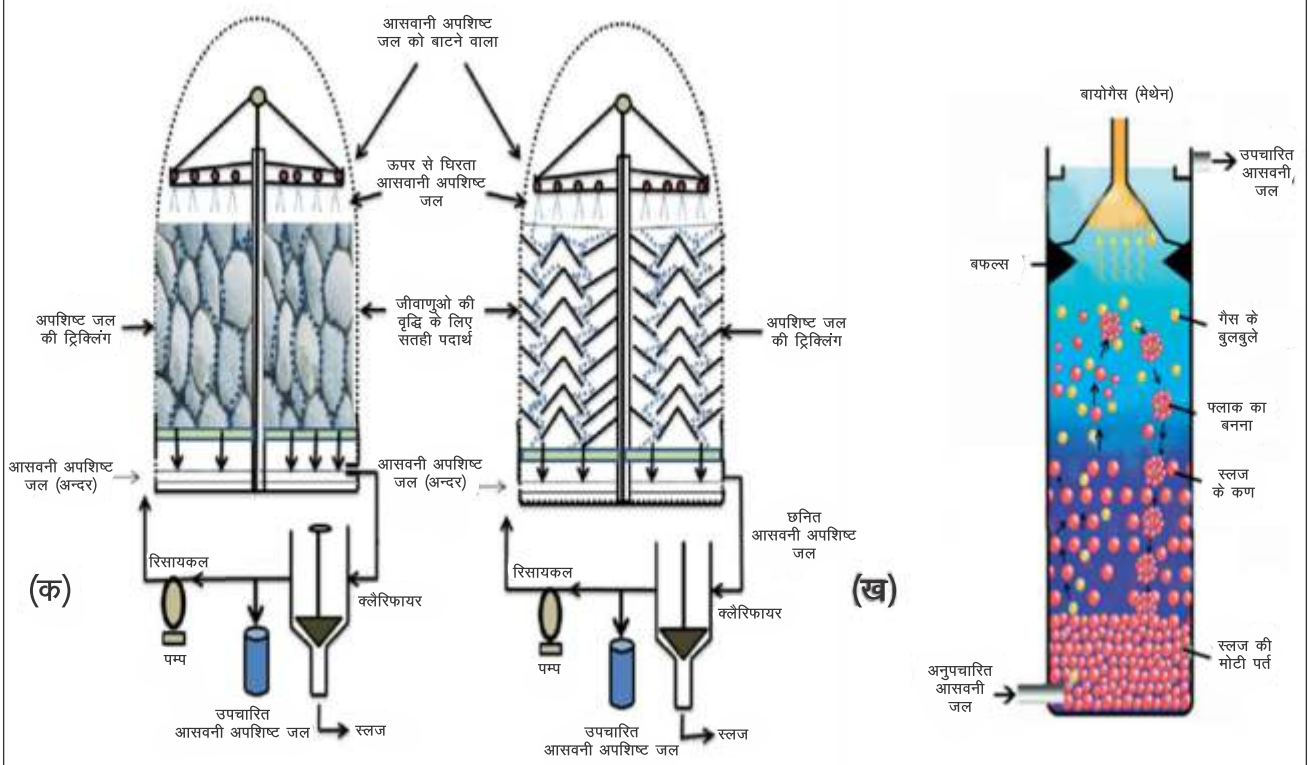

चित्र 5 : एक सम्पूर्ण ट्रिक्लिंग फिल्टर प्रकिया (क) अपफ्लो अनॉक्सीकृत स्लज बलैंकेट (यू.ए.एस.बी.) **रिएक्टर (ख)**

ऑक्सीकृत प्रक्रिया में लगभग 5 प्रतिशत तथा अनॉक्सीकृत प्रक्रिया में लगभग 40 प्रतिशत जैविक ऑक्सीजन माँग सूक्ष्मजीवों की उपापचय क्रिया द्वारा स्लज मे परिवर्तित होती है। आसवनी अपशिष्ट के शोधन के लिये मुख्य रूप से निम्नलिखित जैविक विधियाँ प्रयोग में लायी जाती हैं।

3.1.इक्सटेंडेट ऑक्सीकरण/ऐक्टिवेटेड स्लज प्रक्रिया– आसवनी अपशिष्ट को अनॉक्सीकृत प्रक्रिया द्वारा शोधनोपरान्त प्रायः इक्सटेंडेट ऑक्सीकरण या ऐक्टिवेटेड स्लज प्रक्रिया द्वारा उपचारित किया जाता है। यह हानिकारक आसवनी अपशिष्ट को शोधित करने के लिए उपयोग में लायी जाने वाली मुख्य विधि है, परन्तु इस प्रक्रिया द्वारा आसवनी अपशिष्ट में निहित प्रदूषकों में कोई खास परिवर्तन नहीं आ पाता है। क्योकि, यह सूक्ष्मजीवाणुओं द्वारा संचालित एक जैविक प्रक्रिया है, जोकि आसवनी अपशिष्ट के भौतिक एवं रासायनिक मानकों पर कोई भी सूक्ष्मजीव विकास करने में सक्षम नही हो पाते हैं। सैद्धान्तिक रूप से ऐक्टिवेटेड स्लज प्रक्रिया में जीवाणु आसवनी अपशिष्ट में उपस्थित कार्बनिक रासायनों को ऑक्सीजन की उपस्थिति में विघटित करके अपने खाद्य के रूप में ग्रहण करते हैं जिसके फलस्वरूप ये अपने जैविक भार में वृद्धि करते हैं। इसीलिए इस प्रक्रिया में वायु (ऑक्सीजन) का प्रवाह उपयोग में लाकर जीवाणुओं की वृद्धि की जाती हैं। इस प्रक्रम में प्रथम अवस्था में सूक्ष्म जीवाणु कुछ विशेष रसायनों का उत्सर्जन करते हैं जिनको हम एन्जाइम कहते हैं। यही एन्जाइम अपशिष्ट में उपस्थित कार्बनिक रसायनों को विघटित करके जीवाणुओं की कोशिका के अन्दर खाद्य के रूप में अवशोषित करके जीवाणु की वृद्धि में सहायता करते हैं। इसके उपरान्त खाद्य पदार्थो के विभिन्न यौगिक जीवाणु कोशिका के विभिन्न भागों के संश्लेषण में उपयोग किये जाते हैं। तृतीय चरण में जीवाणु की परिपक्व कोशिका अपने चारो तरफ कुछ चिपचिपे पदार्थों का संश्लेषण करते है। जीवाणु की कोशिका भित्ति में उपस्थित पालिसैकराइड के कारण जीवाणु की कोशिकाएँ आपस में चिपक कर कोशिका का गुच्छा बनाती है जिन्हें हम फ्लाक कहते हैं। ऑक्सीकरण प्रक्रिया में इन जीवाणुओं के फ्लाक के ऑक्सीकरण टैंक मे बार–बार ऊपर नीचे आने के कारण इनके अन्दर की ऊर्जा समाप्त हो जाती है। अंततः ये ऑक्सीकरण टैंक की सतह मे जाकर बैठ जाती है जिनको हम स्लज या ऐक्टीवेटीड स्लज कहते हैं परन्तु आसवनी अपशिष्ट के शोधन में तभी सफल हो पाती है जब जीवाणुओं की वृद्धि के लिए उचित पोषण तथा जैविक भार एक निश्चित अनुपात में होते हैं। पोषण तथा जैविक भार का एक निश्चित अनुपात बनाये रखने के लिए इसमे एक निश्चित समयान्तराल पर ताजे आसवनी अपशिष्ट को मिलाते हैं व पुराने ऐक्टिवेटेड स्लज भार को बाहर निकालते रहते हैं जिससे कि एक चक्रीय क्रम मे जीवाणुओं की वृद्धि होती है और आने वाले आसवनी अपशिष्ट का निम्नीकरण होता रहता है। परन्तु आसवनी अपशिष्ट में जैविक तथा रासायनिक ऑक्सीजन माँग, तथा कुल घुलित ठोस की मात्रा अधिक होने के कारण जीवाणुओं की वृद्धि नहीं हो पाती है जिसके कारण उद्योगों में आसवनी अपशिष्ट के शोधनोपरान्त पर भी इसकी विषाक्तता मे कमी नही आती है और ये पर्यावरण के लिए घातक बने रहते हैं। ऐक्टिवेटेड स्लज प्रक्रिया मे सूक्ष्मजीवों का पोषण तथा जैविक भार एक निश्चित अनुपात में होने पर ही सक्रिय स्लज बनता है। अतः इस अनुपात को बनाये रखने के लिए इसमें बार–बार आसवनी अपशिष्ट को मिलाना पड़ता है जिसमें अधिक समय तथा ऊर्जा की खपत होती है।

3.2.ऑक्सीकरण तालाब/लैगून प्रक्रिया– बहुत से उद्योगों द्वारा ऑक्सीकरण तालाब/लैगून प्रक्रिया को जल के शोधन हेतु उपयोग में लाया जाता है। लैगून प्रक्रिया मुख्यतः दो अवस्थाओं, प्राथमिक तथा द्वितीय मे कार्य करता है। प्राथमिक अवस्था अनॉक्सीकृत होती है तथा इसमें स्लज नीचे बैठ जाता है। द्वितीय अवस्था में आसवनी अपशिष्ट के द्रवीय भाग को एक पम्प की सहायता से दूसरे लैगून में डालते है तथा इसमे लगातार वायु दी जाती है जिसके कारण यह अवस्था पूर्णतः ऑक्सीकृत होती है। आसवनी अपशिष्ट में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा अधिक होने के कारण सूक्ष्मजीव इन्हें सरल पदार्थों में तोड़कर कार्बन–डाइ–आक्साइड गैस उत्पन्न करते

चित्र 6 : अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट का पर्यावरण पर प्रभाव, (क) जलीय जीव जन्तुओं पर प्रभाव, (ख) पेड़–पौधो पर प्रभाव

चित्र 7: अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट का पर्यावरण पर प्रभाव, (क) जानवरों पर प्रभाव, (ख)

हैं। लैगून में उपस्थित शैवाल कार्बन–डाई–ऑक्साइड गैस को प्रकाश संश्लेषण की क्रिया द्वारा अपना भोजन बनाने मे उपयोग में लाते हैं और आॅक्सीजन गैस बाहर निकालते हैं। इस आॅक्सीजन का उपयोग बैक्टीरिया अपनी संख्या बढ़ाने में करते हैं। आक्सीकरण तालाब मे होने वाली प्रक्रिया तथा इसके दृश्य को चित्र (4) द्वारा दर्शाया गया है। परन्तु अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट में मिलेन्वाइडिन्स बहुलक की मात्रा इतनी ज्यादा होती है कि कोई भी सूक्ष्मजीव इसमें जीवित नहीं रह पाता है। अतः इसकी विषाक्तता को कम करने के लिए इसमे जल मिलाकर इसको पतला करके लैगून प्रक्रिया द्वारा उपचारित करने लायक तैयार किया जाता है। लेकिन लैगून प्रक्रिया के लिए बड़े भू–भाग, अधिक समय लगने तथा आसवनी अपशिष्ट में निहित प्रदूषकों में कोई खास परिवर्तन नहीं आ पाने के कारण इसका उपयोग कम किया जाता है।

3.3 ट्रिकलिंग फिल्टर प्रक्रिया–

इस प्रक्रिया को जैविक फिल्टर, बायोटावर, ट्रिकलिंग जैविक फिल्टर आदि नामों से भी जाना जाता है। ट्रिक्लिंग फिल्टर मे मुख्यतः कंकर–पत्थर, चटट्ानों आदि का प्रयोग करके एक उच्च सतह क्षेत्र का निर्माण किया जाता है जिसके ऊपर जीवाणुओं की एक सूक्ष्मपरत होती है। ये जीवाणु मुख्यतः अवशोषण तथा सोखने की प्रक्रिया द्वारा प्रदूषकों को अपशिष्ट जल धारा से हटाते हैं। इस उच्चसतह क्षेत्र पर आॅक्सीजन की उपस्थिति में अपशिष्ट जल धारा को

तालिका 3 : आसवनी अपशिष्ट मे उपस्थित हठधर्मी रासायन तथा इनका पर्यावरण एवं स्वास्थ्य पर हानिकारक दुष्प्रभाव

क0सं0	हानिकारक रसायन का नाम	पर्यावरण एवं स्वास्थ्य पर हानिकारक दुष्प्रभाव
1.	बीटा सिटोस्टीरोल	अंतः स्त्रावी तंत्र
2.	स्टिगमास्टीरोल	अंतः स्त्रावी तंत्र
3.	आक्टाडेकेनाईक अम्ल	ग्रोथ अवरोधक
4.	टेट्राडेकेनाईक अम्ल	डी. एन. ए. फ्रैग्मेंट इन्डयूसर (उत्परिवर्तक)
5.	हेप्टाकोसेन	त्वचा (स्किन ईरिटेटर)
6.	डोट्राईकोनटेन लेनोसटा–8,24 डाईन–3–आन	त्वचा (स्किन ईरिटेटर)
7.	हेक्साडेकेनाईक अम्ल	डी. एन. ए. फ्रैग्मेंट इन्डयूसर (उत्परिवर्तक)
8.	मिलेन्वाइडिन्स	एंटीमाईक्रोबियल, ग्रोथ अवरोधक तथा अन्य

गिराया जाता है। सतह क्षेत्र पर उपस्थित जीवाणुओं की सूक्ष्मपरत अपशिष्ट में उपस्थित कार्बनिक पदार्थों को आक्सीकृत उपापचय क्रिया द्वारा कार्बन–डाई–आक्साइड, जल तथा अन्य आक्सीकृत पदार्थों में विघटित कर देती है। ट्रिकलिंग फिल्टर प्रक्रिया को चित्र (5क) द्वारा दर्शाया गया है। परन्तु अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट में मिलेन्वाइडिन्स की सान्द्रता इतनी ज्यादा होती है कि कोई भी सूक्ष्मजीव इसकी उपस्थिति में जीवित नहीं रह पाता है। इस प्रक्रिया में अधिक समय तथा आसवनी अपशिष्ट में कोई परिवर्तन नहीं आ पाने के कारण इसका उपयोग उपचार के लिए नहीं किया जाता है।

3.4 अपफ्लो अनॉक्सीकृत स्लज बलैंकेट (यू.ए.एस.बी.) रिएक्टरः–

यह प्रक्रिया मुख्यतः अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट में उपस्थित कार्बनिक प्रदूषकों को विघटित करके जैविक तथा रासायनिक ऑक्सीजन की माँग को कम करने के लिए प्रयोग में लायी जाती है। इस प्रक्रिया में रिएक्टर में उपस्थित अनॉक्सीकृत जीवाणु (मेथेनोजंस) आसवनी अपशिष्ट के कार्बनिक यौगिकों को विघटित करके इन्हें मिथेन गैस में परिवर्तित कर देते हैं। वैज्ञानिकों द्वारा किये गये शोधकार्यों से पता चला है कि यू0ए0एस0बी0 से उपचारित करने के पश्चात लगभग 90 प्रतिशत तक अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट में उपस्थित रासायनिक आक्सीजन की माँग कम हो जाती है परन्तु इस प्रक्रिया में प्रयोग किये जाने वाले मेथेनोजंस जैसे मिथेनोबैक्टीरियम, मिथेनोबैवीबेक्टर, मिथेनोथ्रीक्स, मिथेनोसारसीना आदि की ग्रोथ कम होने के कारण तथा अवधारण समय अधिक लगने के कारण अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट को उपचारित करने में अधिक समय लगता है और साथ ही इस प्रक्रिया द्वारा उपचारित करने के पश्चात आसवनी अपशिष्ट में निहित प्रदूषकों में कोई खास परिवर्तन नही आ पाता है। यू0ए0एस0बी0को रिएक्टर चित्र (5ख) द्वारा दर्शाया गया है।

4. अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट का पर्यावरण पर प्रभाव–

आसवनी अपशिष्ट को ऐक्टिवेटेड स्लज प्रक्रिया, लैगून प्रक्रिया, ट्रिकलिंग फिल्टर प्रक्रिया आदि प्रचलित विधियों के द्वारा शोधनोपरान्त भी पर्यावरण में इसकी विषाक्तता कम नहीं हो पाती है। पर्यावरण में पहुँचकर इस आसवनी अपशिष्ट में उपस्थित हानिकारक तत्व जलीय वनस्पतियों एवं जीव–जन्तुओं के जीवन चक्र एवं इनकी जैव–विविधता को प्रभावित करते हैं। ये हानिकारक तत्व इन जलीय वनस्पतियों एवं जीव जन्तुओं द्वारा सोख लिये जाते हैं लेकिन जब ये भोजन के साथ मनुष्य के शरीर में पहुँचते हैं तो मनुष्य के स्वास्थ्य को हानि पहुँचाते हैं। विकासशील देशों (भारत, जापान आदि) मे फसलों की सिंचाई के लिए पानी का जहां पर कोई उचित स्त्रोत नहीं होते हैं ज्यादातर किसान

तालिका 4 – अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट को रंगहीन करने वाले सूक्ष्मजीव

क्र0सं0	सूक्ष्मजीव	विशेषताएँ	अपशिष्ट को रंगहीन करने की क्षमता (प्रतिशत मे)
1.	*स्यूडोमोनास एरिजिनोसा*	ये जीवाणु लवण तथा ग्लूकोज शर्करा की उपस्थिति में अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट को अविरंजित करते हैं।	67.00
2.	*स्यूडोमोनास फलोरिसेन्स*	ये सैलूलोज की उपस्थिति में अपशिष्ट को अविरंजित करते हैं।	94.00
3.	*बैसिलस स्मिथी*	ये जीवाणु आसवनी अपशिष्ट को 55 डिग्री सेन्टीग्रेट तापमान पर पेप्टोन तथा यीस्ट ऐक्सट्रेक्ट की उपस्थिति मे 20 दिन में अनाक्सीकृत अवस्था मे अविरंजित करते हैं।	35.50
4.	*बैसिलस थूरिन्जाइनसिस*	ये जीवाणु 1 प्रतिशत ग्लूकोज को कार्बन स्त्रोत के रूप में उपयोग करके अपशिष्ट को अविरंजित करते हैं।	22.00
5.	*लैक्टोबैसिलस हिलगरडी*	ये जीवाणु आक्सीकृत अवस्था में अपशिष्ट को 4 दिन में अविरंजित करते हैं।	40.00
6.	*जैन्थोमोनास फ्रेगेरी*	ये जीवाणु ग्लूकोज को कार्बन तथा अमोनियम क्लोराइड को नाइट्रोजन स्त्रोत के रूप में उपयोग करते हैं।	76.00
7.	*एसिटोबैक्टर एसिटाई*	ये जीवाणु ग्लूकोज तथा फ्रक्टोस शर्करा का उपयोग अपशिष्ट को अविरंजित करने के लिए करते हैं।	76.40
8.	*एस्परजिलस निवयस*	ये शर्करा तथा अन्य पोषण का उपयोग करके अपशिष्ट को अविरंजित करते हैं।	80.00
9.	*कोरियोलस हिरसूटस*	ग्लूकोज तथा पेप्टोन का उपयोग मिलेन्वाइडिन्स को विघटित करने के लिए करते हैं।	80.00
10.	*माइसिलिया स्टिरिलिया*	अपशिष्ट को अविरंजित करने के लिए कार्बन स्त्रोत की आवश्यकता होती है।	93.00

आसवनी अपशिष्ट को ही फसलों की सिंचाई के लिए उपयोग में लाते हैं। वैज्ञानिक अध्ययनों से पता चला है, कि यदि आसवनी अपशिष्ट को फसलों की सिंचाई हेतु मनमाने ढंग से उपयोग में लाया जाये तो अपशिष्ट में उपस्थित कार्बनिक तथा अकार्बनिक पदार्थो की मात्रा अधिक होने के कारण ये पदार्थ पेड़–पौधों की जड़ों के चारों तरफ धीरे–धीरे एकत्रित होने लगते हैं तथा यह भूमिगत जल को भी प्रदूषित करने के साथ–साथ इसमे उपस्थित भारी धातुएँ पौधों के विभिन्न भागों में एकत्रित हो जाती हैं। जिसके फलस्वरूप पेड़–पौधों की कार्य की तथा जीवन–चक्र पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इन भारी धातुओं का मनुष्य तथा जीव–जन्तुओं के स्वास्थ्य पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है चित्र (6)।

आसवनी अपशिष्ट मृदा में पहुँचकर बीजों को अंकुरित करने से रोकता है व साथ ही मृदा की क्षारीयता तथा मैग्नीज की उपस्थिति को धीरे–धीरे कम करता है जिसके फलस्वरूप मृदा धीरे–धीरे बंजर होने लगती है। शोधकार्यों से यह भी पता चला है कि आसवनी अपशिष्ट मृदा में रहने वाले सूक्ष्मजीवों के विकास पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालता है जिसके फलस्वरूप मृदा में सूक्ष्मजीवों की संख्या धीरे–धीरे कम होने लगती है। हाल ही मे प्रो0 राम चन्द्रा द्वारा फैसियोलस मुंगो के बीजों पर किये गये शोधकार्य से पता चला है कि 40 प्रतिशत तक अउपचारित आसवनी अपशिष्ट बीजों के अंकुरण पर कोई दुष्प्रभाव नहीं डालता परन्तु 60, 80 तथा 100 प्रतिशत अपशिष्ट बीजो के अंकुरण को क्रमशः लगभग 20, 40 तथा 60 प्रतिशत रोकता है। साथ ही यह भी देखा गया है कि 60 तथा 80 प्रतिशत अउपचारित अपशिष्ट बीजों में पाये जाने वाली अंकुरण हेतु मुख्य एन्जाइम एल्फा एमाइलेज की क्रियाशीलता को कम कर देता है। अन्य वैज्ञानिकों द्वारा किये गये शोधकार्यों से यह भी पता चला है कि यदि अपशिष्ट को जल के साथ मिलाकर इसकी सान्द्रता कम करके फसलो की सिंचाई हेतु उपयोग मे लाया जाये तो यह घुलित अपशिष्ट पेड़–पौधों के लिए पोषण का कार्य करते हैं। जिसके फलस्वरूप फसल की पैदावार प्रतिवर्ष बढ़ जाती है। अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट का गहरा काला रंग जलीय तंत्र में उपस्थित घुलित ऑक्सीजन की मात्रा को भी कम कर देता है जिसके कारण जलीय जीव–जन्तुओं के श्वसन एवं पाचन तंत्र पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। वैज्ञानिक अध्ययन से यह भी पता चला है कि अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट में अंतःस्त्रावी ग्रन्थियों को प्रभावित करने वाले रसायनिक तत्व भी बहुतायत मात्रा मे पाये जाते हैं जोकि पर्यावरण में रहने वाले जीव–जन्तुओं के अंतःस्त्रावी तंत्र को प्रभावित करते हैं।

आसवनी अपशिष्ट में रंगयुक्त मिलेन्वाइडिन्स, कैरामल एव फिनोलिक्स की उपस्थिति के कारण सूर्य का प्रकाश जल के भीतर प्रवेश नहीं कर पाता है। जिससे जलीय पेड़–पौधों एवं शैवालों मे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया नहीं हो पाती है, और वो धीरे–धीरे पानी के भीतर ही मरने लगते हैं। पानी में रहने वाले सूक्ष्मजीवों द्वारा कार्बनिक पदार्थो जैसे इण्डोल तथा सल्फर के यौगिकों को सड़ाने के कारण तालाबों के पानी में दुर्गन्ध आने लगती है जिसके फलस्वरूप जलीय तंत्र में यूट्रोफिकेशन होने लगता है। शोधकार्यो से यह भी पता चला है कि आसवनी अपशिष्ट से स्वच्छ जल में रहने वाली मछलियों के श्वसन तंत्र तथा उपापचय क्रिया पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है जिसके फलस्वरूप मछलियाँ जल में मरने लगती हैं। अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट द्वारा पर्यावरण पर होने वाले प्रभाव को चित्र (6 व 7) द्वारा दर्शाया गया है।

5. अनॉक्सीकृत प्रकिया के उपरान्त विषैले आसवनी अपशिष्ट को विषरहित करके पर्यावरण मे सुरक्षात्मक निस्तारण हेतु महत्वपूर्ण शोधकार्य एवं चुनौतियाँ–

उद्योगों से निकलने वाले अपशिष्ट शोधनोपरान्त भी पर्यावरण में सुरक्षात्मक निस्तारण के नियमों को पूरा नहीं करते हैं जिससे उससे निकलने वाले ठोस एवं जलीय अपशिष्ट पर्यावरण पर दुष्प्रभाव डालते हैं। आसवनी अपशिष्ट में उपस्थित प्रदूषक बहुत जटिल तथा हठधर्मी प्रवृत्ति के होते हैं जो मिथेन उत्पादन के समय अपशिष्ट में उपस्थित अन्य यौगिकों के साथ उच्चताप पर बहुलीकरण प्रक्रिया द्वारा आपस में

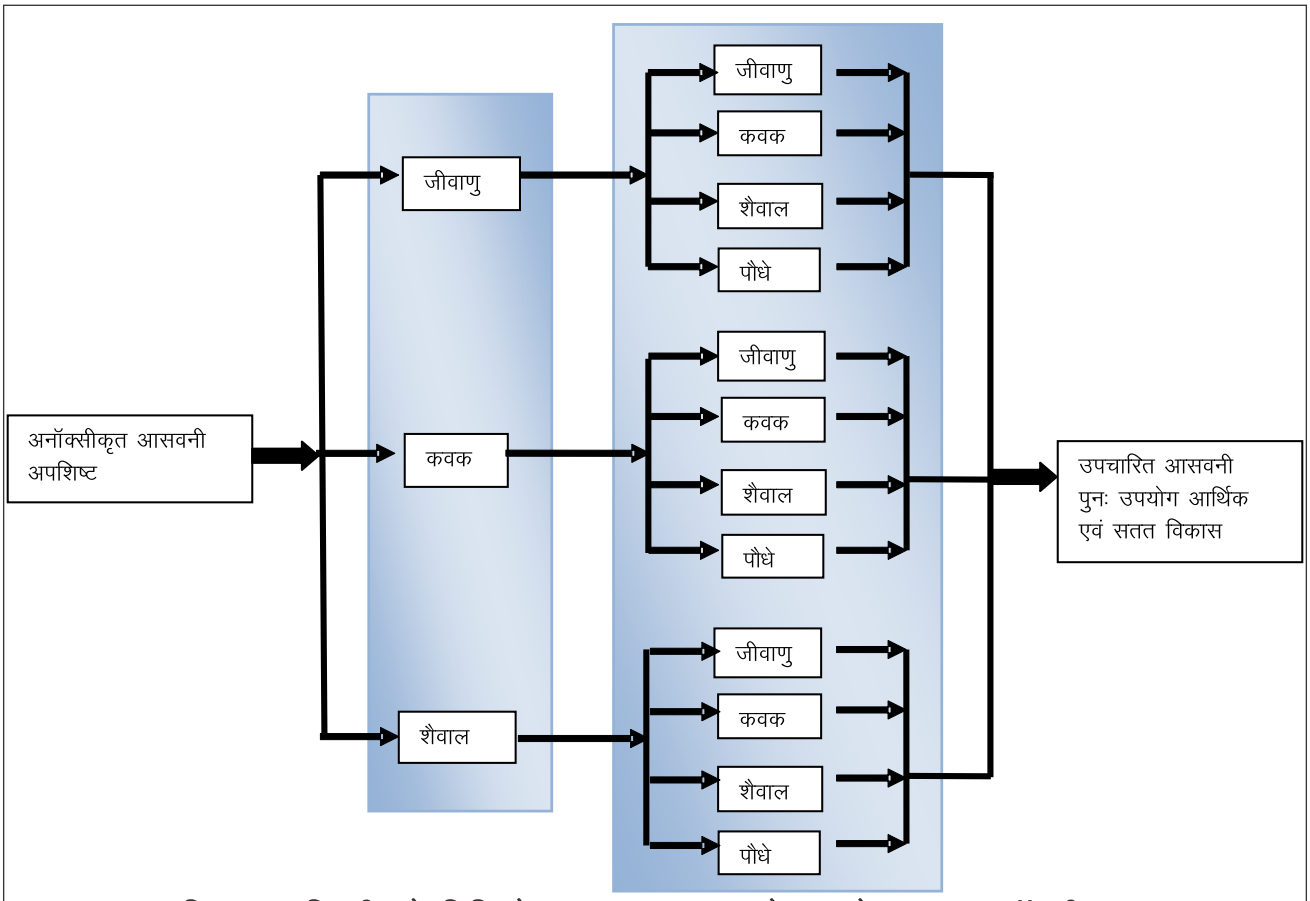

चित्र 8 : किन्ही दो विधियों का क्रमबद्ध रूप में उपयोग द्वारा अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट का शोधन

संगठित हो जाते हैं। ये यौगिक आपस में मुख्यतः कार्बन = कार्बन, कार्बन = नाइट्रोजन, कार्बन = आक्सीजन बन्धों से जुड़े होते हैं। आसवनी अपशिष्ट उपापचय क्रिया के दौरान विघटित होने की बजाय बहुत अधिक गाढ़ा, गहरा काला तथा क्षारीय हो जाता है। जिसके कारण आसवनी अपशिष्ट का भौतिक–रासायनिक तथा जैविक विधियों द्वारा शोधन कठिन हो जाता है। इसी कारण अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट का पर्यावरण में सुरक्षात्मक निस्तारण एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। प्रयोगशाला स्तर पर किये गये शोधकार्यों से यह पता चला है कि अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट में उपस्थित रंगयुक्त यौगिको की संरचना बहुत जटिल तथा आणविक भार अधिक होने के कारण इनका प्रचलित विश्लेषणात्मक विधियों द्वारा संरचना को जानना कठिन कार्य है। इन यौगिकों के दूसरे यौगिकों के साथ अभिक्रिया होने के कारण वातावरण में इनके विघटन की दर तथा इनकी संरचना को समझना एक दूसरा चुनौतीपूर्ण कार्य है। दुनियाभर में पर्यावरण नियामक अधिकार उद्योगों से निकलने वाले अपशिष्ट के निर्वहन के लिए सख्त नियमों की स्थापना कर रहे हैं। हमारे देश में भी केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सी0पी0सी0बी, 2005) के चार्टर मे भी आसवनी उद्योगों से अपशिष्ट के शून्य मुक्ति को प्राप्त करने के लिए कहा गया है।

इसके अतिरिक्त, हाल ही में भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में किये गये शोधकार्यो से पता चला है कि अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट का द्वितीय स्तर किये गये उपचार के पश्चात भी बहुत से हठधर्मी रासायनों का विघटन नहीं हो पाता है तथा गैस क्रोमेटोग्राफी मास स्पेक्ट्रोस्कोपी से विश्लेषण करने पर पता चला है कि ये हठधर्मी रासायन इन्ड्रोक्राइन डिस्रपटिंग रासायनों (ई.डी.सी.)

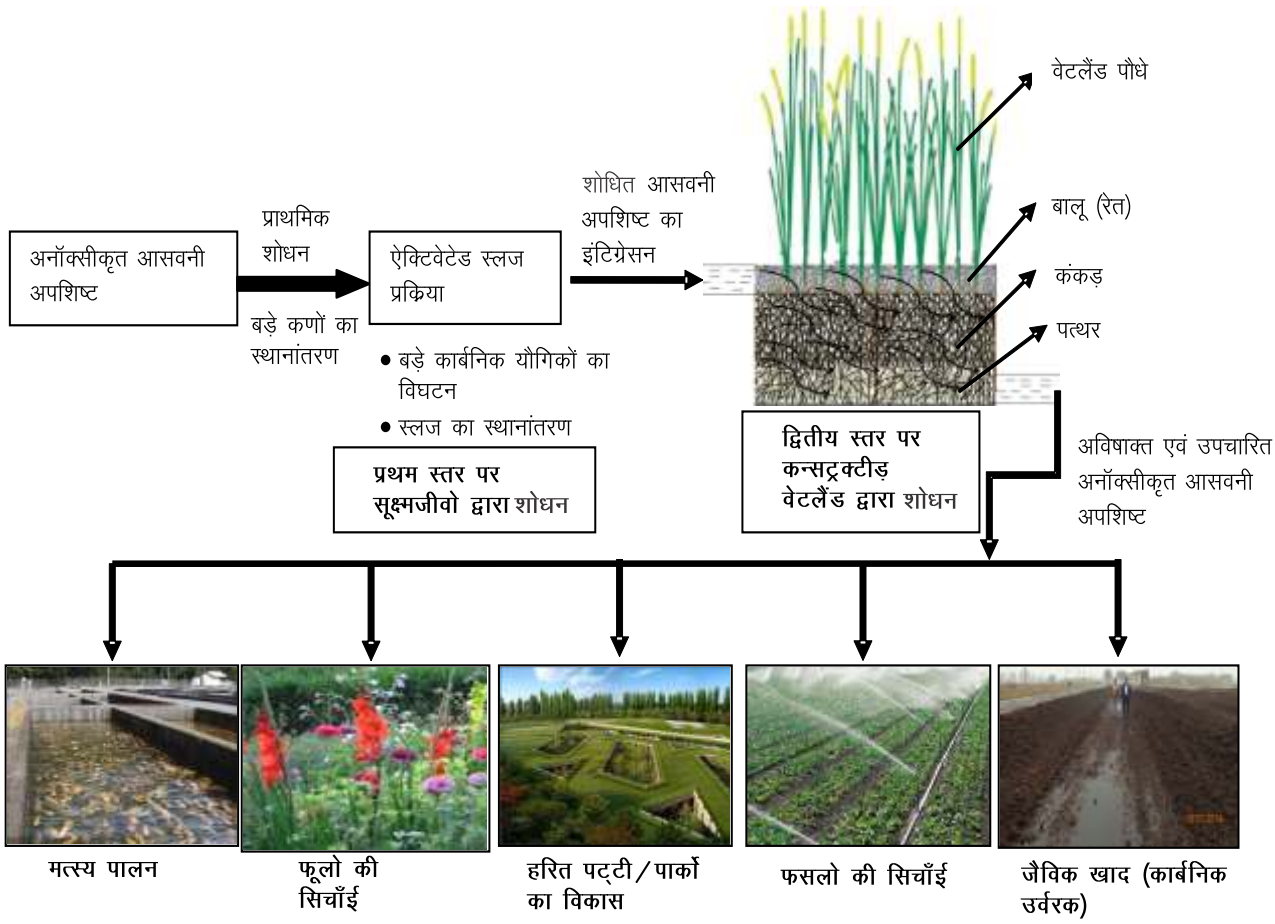

चित्र 9 : अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट का सूक्ष्मजीवों तथा कन्सट्रक्टीड़ वेटलैंड द्वारा शोधन एवं शोधनोपरान्त इसके जैवप्रौद्योगिक उपयोग की संभावनाएँ

की श्रेणी में आते हैं। इन प्रमुख ई.डी.सी. तथा अन्य हठधर्मी रासायनों की तालिका (3) द्वारा दर्शाया गया है। ये रासायन न केवल मृदा में उपयोगी जीवाणुओं को नुकसान पहुँचाते हैं बल्कि जलीय जीव–जन्तुओं के अंतः स्त्रावी ग्रन्थियों पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। जिसके फलस्वरूप जलीय जीव–जन्तुओं की प्रजनन क्षमता कम होती जा रही है। अतः आसवनी अपशिष्ट में उपस्थित ई0ड़ी0सी0 का विश्लेषण, जीवाणु द्वारा इनका विघटन एवं पर्यावरण में इनके दुष्प्रभाव का आंकलन करना एक चुनौतीपूर्ण कार्य तथा शोध का विषय है। आसवनी अपशिष्ट के पर्यावरण में सुरक्षात्मक निस्तारण हेतु हमारे देश में इस दिशा में एक बड़े स्तर पर शोधकार्य को चलाने की आवश्यकता है।

6. पर्यावरण में आसवनी अपशिष्ट को विघटित करने वाले सक्षम सूक्ष्मजीव

आसवनी अपशिष्ट के विघटन तथा विषाक्तता को कम करने के लिए प्रयोगशाला स्तर पर किये गये शोधकार्यों से पता चला है कि पर्यावरण में आसवनी अपशिष्ट को विघटित करने वाले बहुत से सक्षम सूक्ष्मजीव जैसे जीवाणु, कवक तथा शैवाल आदि पाये जाते हैं जो कि अपशिष्ट में उपस्थित प्रदूषकों को अपनी उपापचय क्रिया द्वारा विघटित करके अपनी संख्या में वृद्धि करते हैं परन्तु अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट मिलेन्वाइडिन्स की उपस्थिति के कारण इतना गाढ़ा होता है कि कोई भी सूक्ष्मजीव अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट मे जीवित नहीं रह पाता है। अतः इसमें जल मिलाकर इसको पतला

करके सूक्ष्मजीवों द्वारा उपचारित करने लायक तैयार किया जाता है। जिसके फलस्वरूप पर्यावरण में अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट का खतरा खत्म हो जाता है।

6.1 जीवाणु द्वारा शोधन— जीवाणुओं के विभिन्न स्ट्रेन्स जैसे *सूडोमोनास पूटीडा, सूडोमोनास फलौरिसैन्स, बैसिलस मैगाटिरियम, नाइट्रोसोमोनास, जैन्थोमोनास, लैक्टोबैसिलस, एल्केलाईजिन्स* आदि अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट को शोधित करने में पर्याप्त सीमा तक सहायक सिद्ध हुए है। जीवाणु से निकलने वाले एंजाइम्स मैग्नीज परऑक्सीडेस मिलेन्वाइडिन्स को विघटित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं परन्तु ये सभी जीवाणु उचित पोषण तथा वातावरणीय दशाओं में ही अपशिष्ट को विघटित तथा अविरंजित करते हैं। आसवनी अपशिष्ट को अविरंजित करने के लिए प्रयोग मे लाये जाने वाले मुख्यः जीवाणुओं को तालिका (4) द्वारा दर्शाया गया है।

6.2 कवक द्वारा शोधन— कवक के विभिन्न स्ट्रेन्स जैसे *ट्रेमेटिडस वरसीकलर, कोरिओलस हिरसूटस, फलेवेडोन फलैवस, ऐस्परजिलस नाइजर, गेनोडर्मा केन्डीडम, ट्राईकोडर्मा विरीडी, केन्डीडा यूटिलस, सिट्रोमाइसिस* का उपयोग आसवनी अपशिष्ट में उपस्थित मिलेन्वाइडिन्स को विघटित करने में किया जाता है। कवक से निकलने वाले एंजाइम्स मैग्नीज परऑक्सीडेसन तथा लैकेस मिलेन्वाइडिन्स को विघटित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, लेकिन इनका प्रयोग प्रयोगशाला स्तर पर ही किया जाता है, क्योंकि कवक की विकास के लिए अम्लीय माध्यम तथा उचित वातावरणीय दशाओं की आवश्यकता होती है। पर्याप्त विकास होने पर ही ये अपशिष्ट को विघटित कर पाते हैं। आसवनी अपशिष्ट को रंगहीन करने के लिए प्रयोग में लाये जाने वाले कवक को तालिका (4) द्वारा दर्शाया गया है।

6.3 शैवाल/साइनोबैक्टीरिया द्वारा शोधन— अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट के शोधन के लिए *क्लोरेला वलगेरिस, औसीलेटोरिया बोरायना* आदि शैवाल का उपयोग किया जाता है। ये जीव प्रकाश संश्लेषण की क्रिया द्वारा अपशिष्ट को विघटित करके हाइड्रोजन परआक्साइड, हाईड्रोक्सिल रेडीकल्स तथा आक्सीजन गैस को बाहर निकालते हैं। ये जीव आसवनी अपशिष्ट को 60 से 96 प्रतिशत तक अविरंजित कर देते हैं।

7. अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट के शोधन की नवीनतम विधियाँ एवं इसके जैवप्रौद्योगिक उपयोग की संभावनाएँ—

अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट को प्रचलित जैविक विधियों द्वारा औद्योगिक स्तर पर शोधन करने के उपरान्त भी अपशिष्ट की विषाक्तता तथा पर्यावरण में इसके द्वारा फैलने वाले प्रदूषण का खतरा कम नही हो पाता है। अतः समन्वित शोधन मे किन्हीं दो विधियों को एकीकृत करके तथा इन्हे क्रमबद्ध तरीके से उपयोग में लाकर अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट का शोधन किया जाता है। किसी एक ही विधि को उपयोग में लाने से आसवनी अपशिष्ट में उपस्थित प्रदूषकों का पूर्ण विघटन नहीं हो पाता है। अतः यदि कई विधियों को एक साथ उपयोग मे लाकर हाईब्रिड विधि का निर्माण किया जाये (चित्र 8) तो अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट की विषाक्तता, विरंजता तथा जैविक, रासायनिक मांग को कम किया जा सकता है। उदाहरणार्थ—प्रयोग में आने वाली कुछ हाईब्रिड विधि जैसे ओजोनेशन विधि को बायोफिल्म रिएक्टर में जोड़ करके, रासायनिक आक्सीकरण के ओजोनेशन के साथ सम्बद्ध करके, पृथक्करण तथा ऑक्सीडेशन प्रक्रिया को समेकित करके, इलेक्ट्रोलिसिस को ओजोनेशन के साथ सम्बद्ध करके, तथा कभी—कभी ओजोनेशन को ऐक्टिवेटेड स्लज विधि से समेकित कर विघटन की प्रक्रिया को बढ़ाया जा सकता है। इन नवीनतम विधियों में बहुत से जैव—रासायनिक तथा भौतिक प्रक्रमों को एक साथ उपयोग कर आसवनी उद्योगों से निकलने वाले जटिल विषाक्त रासायनों का उपचारित किया जा सकता है तथा ये विधियाँ आसवनी उद्योगो से निकलने वाले अपशिष्टों को उपचार करने के लिये सफल पायी गयी हैं तथा इनका अध्ययन करके इन्हें औद्योगिक स्तर पर प्रयोग किया जा सकता है। इन विधियों के अलावा कुछ

प्रमुख पूर्वलिखित विधियाँ वर्तमान समय में प्रयोगशाला स्तर पर अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट के शोधन के लिए प्रयोग में लायी जाती हैं। यह विधियाँ निम्नलिखित हैं।

7.1 कवक द्वारा शोधनोपरान्त जीवाणु द्वारा शोधन– आसवनी अपशिष्ट को उचित वातावरणीय दशाओं में कवक से उपचारित करने के पश्चात यदि जीवाणु द्वारा उपचारित किया जाये तो आसवनी अपशिष्ट की जैविक तथा रासायनिक ऑक्सीजन की मांग कम हो जाती है। साथ ही इसमें उपस्थित प्रदूषकों का पूर्णतः विघटन हो जाता है। कवक मुख्यतः क्षारीय माध्यम में कार्य करते हैं तथा कवक कोशिकाएँ आसवनी अपशिष्ट में उपस्थित जटिल यौगिकों को विघटित करके इन्हें जीवाणु की कोशिका को उपलब्ध कराते हैं। फलस्वरूप जीवाणु सूक्ष्मजीवों से आसवनी अपशिष्ट को शोधित करने की इस प्रक्रिया को बायोरेमिडीयेशन कहा जाता है।

7.2 जीवाणु द्वारा शोधनोपरान्त पेड़–पौधों द्वारा शोधन–प्रयोगशाला स्तर पर किये गये प्रमुख शोधकार्यों से यह पता चला है कि आसवनी अपशिष्ट को जीवाणु द्वारा शोधनोपरान्त पेड़–पौधों द्वारा भी शोधित किया जाये तो अपशिष्ट मे उपस्थित प्रदूषक कम हो जाते हैं। आसवनी अपशिष्ट को पेड़–पौधों से शोधित करने की प्रकिया को फाईटोरेमिडीयेशन कहा जाता है।

7.3 कांस्ट्रक्टेड़ वेटलैंड़– ऐक्टिवेटेड स्लज प्रक्रिया, लैगून प्रक्रिया, ट्रिकलिंग फिल्टर प्रक्रिया आदि प्रचलित विधियों से उपचारित करने पर आसवनी अपशिष्ट में उपस्थित नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश, कैल्शियम तथा अन्य तत्वों की खपत तो हो जाती है परन्तु विषैली धातुएँ जैसे कैडमियम, मैगनीज, आयरन, जिंक, निकिल तथा लेड आदि का जैवीय विघटन नहीं हो पाता है। प्रयोगशाला स्तर पर किये गये कुछ नवीन शोधकार्यों से यह देखा गया है कि यदि आसवनी अपशिष्ट को क्रमबद्ध तरीके से सूक्ष्मजीवों से उपचारित करने के पश्चात कांस्ट्रक्टेड़ वेटलैंड़ से उपचारित किया जाये तो आसवनी अपशिष्ट के विघटन तथा अविरंजीत होने की दर 96 से 97 प्रतिशत तक बढ़ जाती है। वेटलैंड़ पौधों का उपयोग प्राचीन काल से ही प्रदूषित जल के शोधन के लिए किया जाता रहा है। कांस्ट्रक्टेड़ वेटलैंड़ प्रक्रिया मे मुख्यतः टाईफा लैटिफोलिया, टाईफा अंगूस्टीफोलिया, फ्रेगमाईटिस आस्ट्रेलिस, साईप्रस आदि प्रमुख वेटलैंड़ पौधों का उपयोग करके अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट को शोधित किया जाता है। इन पौधों की जड़ों के चारो तरफ विकसित करने वाले सूक्ष्मजीव अपशिष्ट को शोधित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पौधों की जड़ों के चारो तरफ विकसित करने वाले जीवाणु मुख्यतः नाइट्रीफिकेशन तथा डिनाइट्रीफिकेशन की प्रक्रिया द्वारा अकार्बनिक नाइट्रोजन को कार्बनिक नाइट्रोजन में परिवर्तित कर देते हैं साथ ही ये जीवाणु हानिकारक सूक्ष्मजीवों को मारते हैं। वर्तमान में कांस्ट्रक्टेड़ वेटलैंड़ का उपयोग विदेशों में औद्योगिक अपशिष्ट को शोधित करने के लिए एक बड़े स्तर पर किया जा रहा है।

उपरोक्त वर्णित विधियों से उपचारित करने पर अनॉक्सीकृत आसवनी अपशिष्ट की विषाक्तता खत्म हो जाती है। अतः शोधनोपरान्त आसवनी अपशिष्ट जल तथा ठोस को निम्नलिखित जैवप्रौद्योगिक कार्यों में उपयोग में लाया जा सकता है। चित्र (9)

(क) मत्स्य पालन द्वारा आर्थिक विकास– भारत में एक बड़ी जनसंख्या मत्स्य पालन करके अपना जीवन निर्वाह करती है परन्तु भारत में तेजी से बढ़ते औद्योगीकरण होने के कारण इन उद्योगों से निकलने वाला विषैला कचरा तथा प्रदूषित जल नदियों में जा कर इसमे रहने वाले जीव–जन्तु जैसे मछलियों आदि के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं, जिसके फलस्वरूप इनकी संख्या में तेजी से कमी आ रही है। साथ ही साथ इसका पर्यावरण के संतुलन पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। यदि उपचारित आसवनी अपशिष्ट जल का प्रयोग मछली पालन मे किया जाये तो मछलियों की संख्या को बढ़ाया जा सकता है जिसके फलस्वरूप पर्यावरण का संतुलन भी बना रहेगा।

(ख) सजावटी एवं उपयोगी फूलों के उत्पादन

की खेती– उपचारित आसवनी अपशिष्ट जल का प्रयोग बड़े स्तर पर सजावटी एवं उपयोगी फूलों की खेती मे सिँचाई हेतु किया जा सकता है। इन फूलों को उपयोग में लाने के पश्चात जैविक खाद (उर्वरक) बनाकर खेतों में उपयोग में लाया जा सकता है जिसके फलस्वरूप मृदा में आवश्यक पोषक तत्वों की कमी को भी पूरा किया जा सकता है।

(ग) हरित पट्टी के विकास–उपचारित आसवनी अपशिष्ट जल का उपयोग शहरों में पार्कों तथा सड़कों के किनारे उगी हुई हरी घास तथा पेड़–पौधों की सिंचाई हेतु किया जा सकता है। अतः इस प्रकार उपचारित आसवनी अपशिष्ट जल को हरित पट्टी/पार्कों के विकास में प्रयोग में बड़े स्तर पर किया जा सकता है।

(घ) कृषि में सिंचाई हेतु– प्रयोगशाला स्तर पर किये गये वैज्ञानिक शोधकार्यों से यह पता चला है कि आसवनी अपशिष्ट को सूक्ष्मजीवों से उपचारित करने के पश्चात इन्हें कृषि में फसलों की सिंचाई हेतु उपयोग में लाकर फसलों की पैदावार को बढ़ाया जा सकता है। क्योंकि आसवनी अपशिष्ट जल में उपस्थित कार्बनिक तथा अकार्बनिक तत्व मृदा के लिए पोषण का कार्य करते हैं। जिसके फलस्वरूप मृदा में कार्बनिक तथा अकार्बनिक तत्वों का संतुलन भी बना रहता है।

(ड़) जैविक खाद (उर्वरक) बनाने मे उपयोग– आसवनी अपशिष्ट मे निहित ठोस पदार्थों को कार्बनिक पदार्थों के साथ मिलाकर प्राकृतिक विघटन के पश्चात जैविक खाद बनायी जा सकती है जिसका उपयोग कृषि में उर्वरक के रूप मे किया जा सकता है। इस जैविक खाद का उपयोग फसलों में एक निश्चित अनुपात में ही किया जाना चाहिए। अधिक मात्रा में इसका उपयोग करने से यह जैविक खाद फसलों पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। आसवनी अपशिष्ट से बनने वाले स्लज का प्रयोग सीधे ही अम्लीय भूमि के सुधार हेतु भी किया जा सकता है।

(च) मवेशियों के खाने के रूप में उपयोग– आसवनी अपशिष्ट में शर्करा तथा यीस्ट कोशिकाओं की प्रचुर मात्रा होने के कारण इन अपशिष्ट में कार्बन तथा प्रोटीन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होते हैं। वैज्ञानिक विधियों द्वारा इन तत्वों को अलग करके तथा इनके पोषक तत्वों को बढ़ा करके इनकी शुष्क केक व गोलियाँ बनायी जा सकती हैं जिन्हे मवेशियों को चारे के रूप मे खिलाया जा सकता है।

(छ) फाईटोमाइनिंग– वेटलैंड पौधों को वायु की उपस्थिति मे जलाकर इनकी कोशिकाओं में एकत्रित हुई भारी धातुओं को पुनः प्राप्त किया जा सकता है। यह प्रक्रिया फाईटोमाइनिंग कहलाती हैं। क्योंकि पैड़–पौधों व सूक्ष्मजीवों द्वारा भारी धातुओं का विघटन नहीं हो पाता है। अतः धातुएँ केवल एक ऑक्सीकरण अवस्था से दूसरी ऑक्सीकरण अवस्था में परिवर्तित हो जाती हैं। इस प्रकार फाईटोमाइनिंग प्रक्रिया के द्वारा आसवनी अपशिष्ट जल में उपस्थित भारी धातुओं जैसे कैडमियम, मैगनीज, आयरन, जिंक, निकिल तथा लेड को पुनः प्राप्त करके उपयोग में लाया जा सकता है।

(ज) घरेलू सामान बनाने मे उपयोग – वेटलैंड पौधों की जड़ों तथा पत्तियों को सुखाकर इन्हें कूलर में घास के रूप में एवं टोकरी तथा घरेलू सामान आदि बनाने में उपयोग किया जा सकता है। वर्तमान में कुछ पौधों जैसे *वेटिवेरिया जिजेनाइडिस* (खस–खस घास) की जड़ों से सुगन्धित इत्र भी बड़े स्तर पर बनाया जा रहा है।

(झ) उद्योगों में विभिन्न प्रक्रम हेतु पुनः उपयोग–

वर्तमान में उद्योगों में विभिन्न प्रक्रमो में उपयोग होने वाले शुद्ध जल के स्थान पर यदि उपचारित आसवनी अपशिष्ट जल को पुनः उपयोग में लाया जाये तो उपयोग हाने वाले शुद्ध जल की खपत को भी कम किया जा सकता है। इस प्रकार माँग के अनुसार पानी की आपूर्ति को भी पूरा किया जा सकता है।

खाद्य पदार्थों में मोनोसोडियम ग्लूटामेट कितना नुकसान दायक?

सुमिता दीक्षित एवं मुकुल दास

खाद्य विषविज्ञान प्रभाग, खाद्य, औषधि एवं रसायन विषविज्ञान विभाग
सी.एस.आई.आर.–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
विषविज्ञान भवन, 31 महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ, 226001, उत्तर प्रदेश, भारत

''मम्मी भूख लगी है।

बस दो मिनट बेटा।"

और अगले ही पल मम्मी हाथ में मैगी नूडल्स से भरा बाउल लेकर बच्चे के सामने रखती है।

इस विज्ञापन को टेलीविजन पर सभी लोग देख कर खुश होते थे क्योंकि मैगी बच्चों से लेकर बड़ों तक सभी का पसंदीदा डिश था। पर फिर ऐसा क्या हो गया कि हम सभी इसके खिलाफ हो गए? आइए जाने यह मैगी विवाद क्या था?

मैगी का विवाद

यह विवाद तब शुरू हुआ जब गोरखपुर के राज्य प्रयोगशाला में मैगी के दो छोटे पैकेट में मोनोसोडियम ग्लूटामेट (एमएसजी) पाया गया। इसके आधार पर बाराबंकी के खाद्य सुरक्षा एवं औषधि प्रशासन के एक अधिकारी ने, गोरखपुर के राज्य प्रयोगशाला में नेस्ले की मैगी इंस्टेंट नूडल्स के एक दर्जन से अधिक नमूनों पर परीक्षण का आदेश दिया और कोलकाता में केन्द्रीय खाद्य प्रयोगशाला के एक रेफरल प्रयोगशाला में वही परीक्षण दोहराने की मांग की। नेस्ले का दावा 'मैगी में एमएसजी नहीं डाला जाता है' के विपरीत मैगी में न सिर्फ दोनों लैब में एमएसजी मिला बल्कि सीसा (Lead) भी अत्यधिक मात्रा (17.2 पी. पी. एम.) में पाया गया।

निष्कर्षों के आधार पर उत्तर प्रदेश एफडीए ने बाराबंकी अदालत में शिकायत दर्ज कराई। खाद्य मंत्री राम विलास पासवान ने सांविधिक नियामक, खाद्य सुरक्षा और भारत के मानक प्राधिकरण (एफएसएसएआई) को मैगी पर राष्ट्रव्यापी परीक्षणों का संचालन करने के लिए निर्देश दिए। दूसरी ओर उपभोक्ता मामलों के अतिरिक्त सचिव श्री गुरचरण जी ने न सिर्फ सीसा और एमएसजी बल्कि अन्य सभी मापदंडों के परीक्षण के लिये भी कहा।

सीसा प्राकृतिक रूप से वातावरण में और मानवीय गतिविधियों के कारण पर्यावरण में बहुत कम मात्रा में मौजूद रहता है। मिट्टी में मौजूद सीसा पौधों द्वारा अवशोषित हो जाता है और धोने से या भोजन प्रसंस्करण के दौरान पूरी तरह से हटाया नहीं जा सकता है इसलिए कई खाद्य पदार्थों में बहुत कम मात्रा में सीसा मौजूद रहता है। सीसा बहुत पहले से ही उपभोक्ताओं के लिए एक खतरे के रूप में पहचाना गया है। सीसा एक बेहद जहरीला पदार्थ है जो स्वास्थ्य के प्रतिकूल प्रभाव की एक विस्तृत श्रृंखला का उत्पादन एवं प्रारम्भ कर सकता हैं। इन प्रभावों में मानसिक और शारीरिक विकास में देरी, एकाग्रचित और सीखने की कमी और सुनने में समस्या आदि शामिल हैं। भोजन या किसी अन्य स्रोत से,सीसा की बड़ी मात्रा के संपर्क में आने से, केंद्रीय तंत्रिका तंत्र, गुर्दे और प्रतिरक्षा प्रणाली सहित शरीर के कई प्रणाली प्रभावित हो सकती है। चूंकि सीसा शरीर में जमा होता रहता है, इसलिए सीसे की छोटी मात्रा भी रक्त में समग्र जैव–समायोजन (bioaccumulative) स्तर के लिए योगदान कर सकता है और स्वास्थ्य के लिए प्रतिकूल प्रभाव ला सकता है। बच्चों में सीसे के अल्पमात्रा के सम्पर्क में आने पर भी कम बुद्धि, व्यवहार कठिनाइयों और बिगड़ा संज्ञानात्मक कार्य के साथ अन्य समस्याएं जुड़ी हुई हैं।

खाद्य सुरक्षा और मानक (कोंटामिनण्ट्स, जहर और अवशेषों) विनियम, 2011, के अंतर्गत सीसे की मात्रा

शिशु दूध और शिशु खाद्य पदार्थों में 0.2 पी. पी. एम और बेकिंग पाउडर, चाय, निर्जलित प्याज, सूखे जड़ी बूटियों में 10 पीपीएम तक मान्य है। इंस्टेंट नूडल्स में लेड की मात्रा 2.5 पीपीएम तय की गयी है। चूंकि, सीसे के बारे में पहले से ही बहुत सारे तथ्य ज्ञात है, इसलिए हम यहाँ पर सीसे पर ज्यादा चर्चा न करते हुए एमएसजी के बारे में ही विस्तृत जानकारी प्रदान करने का प्रयत्न करेंगे।

एमएसजी क्या है?

एमएसजी या मोनोसोडियम ग्लूटामेट, ग्लूटामिक एसिड का सोडियम लवण है जो कि प्राकृतिक रूप से उत्पन्न आवश्यक अमीनो एसिड में से एक है। इसका अर्थ यह है कि मानव शरीर ग्लूटामेट उत्पादन करने में सक्षम है। ग्लूटामेट मानव शरीर में विभिन्न कार्यों के लिए कार्य करता है, और लगभग सभी खाद्य सामग्रियों जैसे टमाटर, पनीर, आलू, मशरूम, और अन्य सब्जियों और फलों में पाया जाता है। ग्लूटामेट प्रोटीन का एक महत्वपूर्ण घटक है। यह प्रमुख पोषक तत्वों की चयापचय में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और शरीर में प्रोटीन के पुनर्निर्माण और ऊर्जा के चयापचय के लिए महत्वपूर्ण है।

चित्र 1: विभिन्न खाद्य पदार्थ जिनमे ग्लूटामेट स्वभाविक रूप से मौजूद होते हैं
(सौजन्य से: Public Domain Pictures.net)

इसलिए एम एस जी मशरूम, टमाटर, पनीर और सोया सॉस जैसे विभिन्न खाद्य वस्तुओं में स्वाभाविक रूप से मौजूद होता है (चित्र 1)। इसका स्वाद नमकीन, मीठा, खट्टा या कड़वा स्वादों से अलग एक

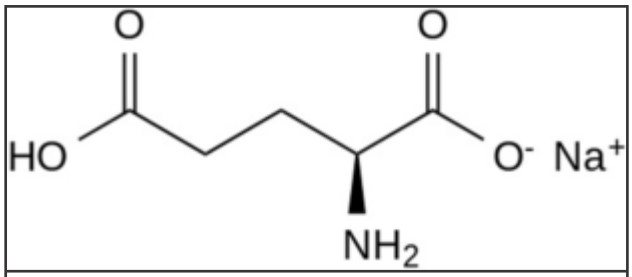

एम एस जी की रसायनिक संरचना

अनूठा स्वाद होता है, जिसे स्वादवर्धक कहा जाता है।

प्रत्यक्ष तौर पर एम एस जी चीनी या नमक की तरह

चित्र 2: वे व्यंजन जिनमें एम एस जी डाला जाता है
(सौजन्य से: Public Domain Pictures.net)

एक सफेद दानेदार पाउडर होता है, जो कि सोडियम और ग्लूटामेट के संयोजन से बना होता है।

एम एस जी, स्वाद बढ़ाने के लिए खाद्य उद्योग में प्रयोग किया जाता है। यह पहली बार जापानी बायोकेमिस्ट किकूने इकेदा द्वारा तैयार किया गया था जो कि कोम्बू के स्वाद की नकल करने की कोशिश कर रहे थे। कोम्बू एक खाद्य समुद्री शैवाल है जो कि कई जापानी सूप में आधार के रूप में इस्तेमाल होता है। इसलिए एम एस जी कोरियाई, जापानी और चीनी व्यंजनों में विशेष रूप से लोकप्रिय है (चित्र 2)।

एम एस जी का वाणिज्यिकरण

1908 में टोक्यो इम्पेरियल विश्वविद्यालय के किकूने इकेदा ने ग्लूटामिक एसिड को क्रिस्टलिकरण द्वारा अलग किया था। डॉ इकेदा ने पाया कि जापानीज शोरबे में एक अनूठा स्वाद है जिसका अभी तक कोई वैज्ञानिक वर्णन नहीं है और जो कि मीठे, नमकीन, कडवे और खट्टे स्वाद से अलग है। इस बात की पुष्टि के लिए कि आयनित ग्लूटामेट ही अनूठे स्वाद के लिए जिम्मेदार है, इकेदा ने कैल्शियम, पोटेशियम, अमोनियम, और मैग्नीशियम ग्लूटामेट लवणों के स्वाद का अध्ययन किया और पाया कि सोडियम ग्लूटामेट सबसे ज्यादा स्वादिष्ट और घुलनशील है। इकेदा ने अपने इस उत्पाद को मोनो सोडियम ग्लूटामेट नाम दिया और 1909 में सुजुकी भाइयों ने अजी–नो–मोटो (स्वाद का सार) के रूप में एम एस जी का वाणिज्यिक उत्पादन शुरू कर दिया।

कृत्रिम एम एस जी का संश्लेषण

कृत्रिम एम एस जी तीन विधियों द्वारा निर्मित किया जाता हैः

- पेप्टाइड बांडों को बाधित करने के लिए, हाइड्रोक्लोरिक एसिड के साथ वनस्पति प्रोटीन की हाइड्रोलिसिस द्वारा (1909–1962)
- एक्रीलोनाइट्राइल के साथ सीधे रासायनिक संश्लेषण द्वारा(1962–1973),
- और बैक्टीरियल किण्वन द्वारा (वर्तमान विधि)।

पहले गेहूं का ग्लूटेन मूल रूप से हाइड्रोलिसिस के लिए इस्तेमाल किया जाता था क्योंकि इसके 100 ग्राम प्रोटीन में 30 ग्राम से अधिक ग्लूटामेट और ग्लूटामिन होता है। जबसे एम एस जी की मांग में वृद्धि हुई है, रसायनिक संश्लेषण और किण्वन प्रक्रिया के लिए भी अध्ययन किया गया। 1950 के मध्य के दौरान जापान में पॉलीएक्रिलिक फाइबर उद्योग शुरू हुआ और एम एस जी के संश्लेषण के लिए एक्रीलोनाइट्राइल को आधार सामग्री के रूप में अपनाया गया।

वर्तमान में अधिकांश वैश्विक कृत्रिम एम एस जी किण्वन प्रक्रिया द्वारा, (बियर या दही बनाने की तरह) निर्मित किया जाता है। मकई, बीट या कसावा के कार्बोहाइड्रेट को किण्वित कर ग्लूटामेट का उत्पादन किया जाता है और उसको शुद्ध और सघन किया जाता है। किण्वन के दौरान, कोरिनेबैक्टरियम (Corynebacterium) प्रजातियां बीट, गन्ना, कसावा या मोलासेस के कार्बोहाइड्रेट और अमोनिया के साथ सुसंस्कृत होकर, कल्चर ब्रोथ में अमीनो एसिड बनाता है जिससे कि एल ग्लूटामेट को अलग किया जाता है। क्योवा हक्को कोग्यो (Kyowa Hakko Kogyo) कंपनी ने एल ग्लूटामेट का उत्पादन करने के लिए औद्योगिक किण्वन प्रक्रिया विकसित की है। एम एस जी के औद्योगिक उत्पादन में मांग को ध्यान में रखते हुए ग्लूटामेट का शर्करा से रूपांतरण और उत्पादन दर में सुधार जारी है। अम्लीकरण, क्रिस्टलीकरण, सांद्रिकरण और छानने के बाद, अंत में केवल ग्लूटामेट, सोडियम, और पानी ही रह जाता है। यह एक सफेद, गंधहीन, क्रिस्टलीय पाउडर है जो कि विलयन में ग्लूटामेट और सोडियम आयनों में विघटित हो जाता है।

एम एस जी को 14% सोडियम क्रिस्टलीय रूप में भोजन में डाला जाता है, **लेकिन खाद्य पदार्थों में प्राकृतिक ग्लूटामेट और कृत्रिम ग्लूटामेट के बीच कोई रासायनिक अंतर नहीं है।** एम एस जी में मौजूद ग्लूटामेट को शरीर आसानी से उपयोग कर सकता है, क्योंकि एम एस जी बड़े प्रोटीन अणुओं के साथ नही जुड़ता है। यह एशियाई खाना पकाने में लोकप्रिय है, और पश्चिमी देशों में प्रसंस्कृत खाद्य

पदार्थ के सभी प्रकार में प्रयोग किया जाता है । इसकी औसत दैनिक खपत अमेरिका और ब्रिटेन में करीब 0.55–0.58 ग्राम, एवं जापान और कोरिया में 1.2–1.7 ग्राम है।

एम एस जी पानी में स्वतंत्र रूप से घुलनशील है, लेकिन यह हाइग्रोस्कोपिक नहीं है और आम कार्बनिक सॉल्वैंट्स (जैसे ईथर) में अघुलनशील है। यह खाद्य प्रसंस्करण की प्रक्रियाओं के दौरान आम तौर पर स्थिर रहता है। एम एस जी खाना पकाने के दौरान विघटित नहीं होता है और बहुत उच्च तापमान पर शर्करा की उपस्थिति में, अन्य अमीनो एसिड की तरह मैलार्ड (Maillard) प्रतिक्रिया (ब्राउनिंग) प्रदर्शन करता है।

ग्लूटामेट मस्तिष्क में एक न्यूरोट्रांसमीटर के रूप में कार्य करता है। यह एक 'उत्तेजक' न्यूरोट्रांसमीटर है जिसका अर्थ यह है कि यह संकेत रिले करने के क्रम में तंत्रिका कोशिकाओं को उत्तेजित करता है। कुछ लोगों ने दावा किया है कि एमएसजी मस्तिष्क में ग्लूटामेट को ज्यादा मात्र में स्रावित करता है जिसके फलस्वरूप तंत्रिका कोशिकाएं अत्यधिक उत्तेजित हो जाती हैं। इस कारण से, एमएसजी को एक्सीटोटॉक्सिन (excitotoxin) के रूप में माना गया है।

एम एस जी 100 से अधिक वर्षों से भोजन में इस्तेमाल किया जा रहा है । ऐसे खाद्य पदार्थों के निर्माण जिनमे सोडियम ग्लूटामेट और नमक दोनों होते थे, के निर्माण के सबूत 5500 ई.पू. (BC) में भी मिलते है। वर्ष 1969 में, जब नवजात चूहों में एम एस जी की बड़ी मात्रा में इंजेक्शन लगाया गया तो हानिकारक स्नायविक प्रभाव देखने को मिले। इस अध्ययन ने एमएसजी के लिए एक भय को प्रज्वलित किया जो आज भी लोगों के मन में विद्यमान है।

चीनी रेस्तरां सिंड्रोम

कुछ लोगों को एम एस जी लेने के बाद प्रतिकूल प्रभाव का अनुभव हो सकता है। ऐसी हालत को चीनी रेस्तरां सिंड्रोम, या एम एस जी जटिल लक्षण कहा जाता है। इनमे सिर दर्द, सिर में हलकापन, सीने में जकड़न, पसीना, चेहरे का दबाव या जकड़न एवं कमजोरी शामिल हैं। एम एस जी और चीनी रेस्तरां सिंड्रोम के बीच संबंध समझने के लिए कई अध्ययन किए गए है लेकिन चीनी रेस्तरां सिंड्रोम के लक्षणों के लिए पूरी तरह से एम एस जी को दोषी माना जाये ऐसा कोई निश्चित प्रमाण नहीं है। एक आम धारणा है कि एम एस जी की बड़ी खुराक लेने से सिर में दर्द और बेचैनी जैसी भावनाएँ पैदा होती हैं, लेकिन नियंत्रित अध्ययन में वैज्ञानिकों को ऐसी कोई प्रतिक्रिया नहीं मिली। एक अध्ययन में, स्वयं को एम एस जी के प्रति संवेदनशील बताने वाले लोगों ने जब 5 ग्राम एमएसजी का सेवन किया, तो 36.1% लोगों ने एम एस जी के साथ प्रतिक्रियाओं की सूचना दी। इस अध्ययन से यह पता चलता है कि एम एस जी संवेदनशीलता सही है। अगर 3 ग्राम तक एम एस जी एक साथ लिया जाए तो वो प्रतिकूल प्रभाव दे सकती है। हालांकि, 3 ग्राम, एक बहुत बड़ी मात्रा है और यह अमेरिका के औसत दैनिक खपत से लगभग 6 गुना ज्यादा है। ऐसा क्यों होता है यह स्पष्ट नहीं है, लेकिन कुछ शोधकर्ताओं का कहना है कि इतनी बड़ी मात्रा में एम एस जी की खुराक से कुछ ग्लूटामेट ब्लड ब्रेन बैरियर पार कर न्यूरॉन्स के साथ मिलकर न्यूरोनल सूजन का कारण बनती है। शोधकर्ताओं का यह भी कहना है कि अगर एम एस जी एक समस्या है तो प्रत्येक चाइनिज को सर दर्द की शिकायत क्यों नहीं होती है।

एम एस जी पर सुरक्षा अध्ययन

एम एस जी का मध्यस्थ घातक खुराक (LD_{50}), चूहों में 15 और चुहियों में 18 ग्राम/किग्रा शरीर के वजन के बराबर है जो कि नमक की LD_{50} की तुलना में पांच गुना अधिक (चूहों में 3 ग्राम/किग्रा) है। रिपोर्ट के अनुसार, किसी भी दीर्घकालीन बीमारी में ग्लूटामेट की भूमिका का कोई समर्थन नहीं हैं। एक नियंत्रित, डबल ब्लाईंड, कई स्थान चिकित्सीय परीक्षण ने एम एस जी के लक्षण और वास्तविक एम एस जी खपत के बीच कोई भी संबंध प्रदर्शित करने में विफल रहा है। किसी भी सांख्यिकीय संघ का प्रदर्शन नहीं किया गया है, और कुछ प्रतिक्रियाएँ असंगत थीं। जब एम एस जी को भोजन के साथ दिया गया तब भी कोई

लक्षण नहीं मिले। 1996 में न्यूरोसर्जन डॉ रसेल ब्लेलोक द्वारा एक किताब "एक्ससीटो टॉक्सींस (Excitocin): वो स्वाद जो मारता है" प्रकाशित किया गया था। अपनी पुस्तक में उन्होंने यह कहा, कि एम एस जी में मौजूद ग्लूटामेट मस्तिष्क सहित तमाम तंत्रिका कोशिकाओं को उत्तेजक प्रभाव द्वारा नष्ट कर सकता है। वास्तव में यह सच है कि मस्तिष्क में ग्लूटामेट गतिविधि की वृद्धि से नुकसान हो सकता है। यह भी सच है कि एम एस जी की बड़ी खुराक, खून में ग्लूटामेट के स्तर को बढ़ा सकते हैं । एक अध्ययन में यह पाया गया कि एम एस जी के एक बड़े खुराक से रक्त में ग्लूटामेट के स्तर की 556% वृद्धि हुई है। हालांकि आहार में उपस्थित ग्लूटामेट मानव मस्तिष्क पर कोई प्रभाव नहीं कर सकता है क्योंकि यह अधिक मात्रा में ब्लड ब्रेन बैरियर पार नहीं कर सकता है। कुल मिलाकर, सामान्य मात्रा में सेवन किया गया एम एस जी एक एक्ससीटो टॉक्सिन (Excitocin) रूप में कार्य करता है इसका कोई ठोस सबूत नहीं मिला है। सामान्य परिस्थितियों के अंतर्गत, मनुष्य स्वाभाविक रूप से अपेक्षाकृत बड़ी मात्रा में ग्लूटामेट का उपापचय कर सकता है जो कि प्रोटीन हाइड्रोलिसिस के दौरान एंजाइम एक्सोपेपटिडेस द्वारा पेट में उत्पादित होता हैं।

मोनोसोडियम ग्लूटामेट में सोडियम की मात्रा नमक की सोडियम के एक तिहाई के बराबर होता है और इसलिए कम मात्रा में प्रयोग किया जाता है । जब मोनोसोडियम ग्लूटामेट नमक के साथ खाने में उपयोग किया जाता है, तो वह स्वाद को बनाए रखते हुए सोडियम की मात्रा को 20 से 40% से तक कम करने में मदद करता हैं। बच्चों में ग्लूटामेट की चयापचय वयस्कों की तरह ही होता है। वास्तव में, मानव स्तन के दूध में गाय के दूध की तुलना में 10 गुना अधिक ग्लूटामेट होता है।

एम एस जी के संदर्भ में विनियम

एफडीए (फूड एंड ड्रग एडमिनिस्ट्रेशन) एम एस जी को भोजन में डालने के लिए आम तौर पर सुरक्षित रूप में मान्यता प्राप्त (GRAS) करार देता है। इसने एम एस जी के स्वीकार्य सीमा के लिए एक दिशानिर्देश तय कर दिया है जिसके अनुसार 3 ग्राम (एक पूर्ण चम्मच से कम) एम एस जी 454 ग्राम मांस के लिए स्वीकार्य है, जबकि 5 ग्राम (1 चम्मच) उच्च सीमा को निर्धारित करता है । यूरोपीय संघ ने कुछ खाद्य पदार्थों में इसे एक खाद्य योज्य के रूप में मात्रात्मक सीमा के अधीनता में अनुमति दी है। एम एस जी को एच एस कोड 29224220 और ई नंबर E621 मिला है। संयुक्त राज्य अमेरिका के खाद्य एवं औषधि प्रशासन के लिए प्रायोगिक जीवविज्ञान के लिए अमेरिकी समाज के महासंघ (Federation of American Societies for Experimental Biology) ने एक रिपोर्ट में यह निष्कर्ष निकाला है कि अगर एम एस जी प्रथागत स्तरों पर खाया जाये तो वो सुरक्षित है। भारतीय खाद्य सुरक्षा और मानक नियम, 2011 के अंतर्गत एम एस जी, 12 महीने से कम के शिशुओं के भोजन में शामिल नहीं किया जाना चाहिए। साथ ही एम एस जी को 'पास्ता और नूडल्स (केवल सूखे उत्पादों)' सहित 50 वस्तुओं में डालने की अनुमति नहीं है, लेकिन नूडल्स और पास्ता के लिए इस्तेमाल किया जाने वाले सूखे मसाले में इसकी अनुमति है।

स्वास्थ्य एवं वैज्ञानिक विशेष अधिकारियों का एमएसजी के बारे में राय

अमेरिका में, एफडीए ने अमेरिकन सोसायटी संघ के एक रिपोर्ट के आधार पर एम एस जी की सुरक्षा की पुष्टि की है। विश्व स्तर पर, संयुक्त राष्ट्र के विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) की खाद्य और पेय पर संयुक्त विशेषज्ञ समिति (JECFA) और खाद्य और कृषि संगठन (एफएओ) ने एम एस जी को सुरक्षित रूप में नामित किया है और खाद्य सामग्री के अपने सबसे सुरक्षित श्रेणी में जगह दी है। इसी तरह, यूरोपीय समुदाय के भोजन के लिए वैज्ञानिक समिति और साथ ही ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड खाद्य मानक समिति ने (FSANZ) एम एस जी की समीक्षा करने के पश्चात सुरक्षा की पुष्टि की है।

आखिर कहाँ से आया मैगी में एम एस जी और सीसा?

हालांकि यह स्पष्ट नहीं है की मैगी में सीसा और एम एस जी कहाँ से आया, परंतु वैज्ञानिकों के अनुसार यह

कच्चे माल से (पानी या मसाला सामग्री, आटा, पैकेजिंग, या कर्लिंग एजेंट) से आ सकता है। सीसा और एम एस जी नूडल्स का आवश्यक घटक नहीं है। डॉ० अन्नापूरे (हेड, खाद्य इंजीनियरिंग और प्रौद्योगिकी विभाग, रासायनिक प्रौद्योगिकी संस्थान, मुंबई, भारत) का कहना है कि प्रदूषण का एक स्रोत नूडल्स का निर्माण करने के लिए उपयोग किए गए पानी हो सकता है।

नूडल्स बनाने में प्रयोग होने वाले खाद्य एडिटिव्स में से किसी में भी सीसे का संदूषण नही हो सकता है तथापि स्वादिष्ट बनाने का मसाला पैकेट के कुछ घटक "जैसे प्याज पाउडर और और गेहूं का आटा (जो नूडल्स बनाने के काम आता है)' कृषि स्रोतों से आते हैं, सभी सीसा संदूषण करने के लिए संवेदनशील है भले ही नूडल्स और मसाले साफ हो, परंतु सीसे का संदूषण इस्तेमाल किया पैकेजिंग से भी हो सकता है। संयुक्त राज्य अमेरिका के उपभोक्ता उत्पाद सुरक्षा आयोग ने बताया कि वर्ष 2004 में मेक्सिको में उत्पादित कैंडी में पाए गए सीसे के असुरक्षित स्तर के लिए रैपर जिम्मेदार थे।

डॉ. अन्नापूरे के अनुसार भारत में कच्चे माल की समय–समय पर मूल्यांकन नहीं हो पाता है। कच्चे माल की नियमित जांच से हर अवयवों के लिए संभवित विषाक्त घटकों के लिए एक डेटाबेस पैदा करने में मदद मिलेगी और यह विषाक्त घटक कहाँ से आ रहे हैं, इसका पता चल जाएगा। इसलिए कम से कम इस तरह के नियमित परीक्षण हर पांच साल में किया जाना चाहिए।

मैगी विवाद में नैस्ले का कथन

नेस्ले इंडिया का कथन है कि भारत में बेचे जाने वाले मैगी नूडल्स में एम एस जी नहीं डाला जाता है और यह संबंधित उत्पाद पर लिखा भी रहता है। हालांकि, भारत में बिकने वाले मैगी नूडल्स के उत्पादन में हाइड्रोलाइस्ड मूंगफली प्रोटीन, प्याज पाउडर और गेहूं के आटे का उपयोग होता है और उन सब में प्राकृतिक रूप से ग्लूटामेट मौजूद होता है। हो सकता है कि अधिकारियों के परीक्षण में खाद्य पदार्थों में स्वाभाविक रूप से ग्लूटामेट का पता चला है।

डॉ. अन्नापूरे के अनुसार एफएसएसएआई अनुमोदित एम एस जी परीक्षण तरीकों से केवल ग्लुटामिक एसिड का परीक्षण हो सकता है जो कि हाइड्रोलाइस्ड मूंगफली प्रोटीन सहित कई खाद्य पदार्थ, का एक स्वाभाविक अवयव है। भारत में होने वाले परीक्षण विकसित देशों की तरह इतने संवेदनशील नहीं है जहां हर घटक के अलग–अलग स्रोतों की पहचान की जा सके।

सारांश

मैगी न सिर्फ बड़े बल्कि छोटे बच्चे भी चाव से खाते है। इसलिए मैगी में इतनी अतिरिक्त मात्रा में सीसे का मिलना वाकई एक चिंता का विषय है। इसके लिए हमारे खाद्य नियामक निकायों को उचित कदम उठाने चाहिए जिससे कि उपभोक्ताओं को संदूषण रहित मैगी मिल सके और उनके स्वास्थ्य पर कोई प्रतिकूल प्रभाव न पड़ सकें। जहां तक एम एस जी का विषय है, एक फूड एडिटिव के रूप में एम एस जी और ग्लूटामिक एसिड का प्राकृतिक रूप से खाद्य पदार्थों में उपयोग से मानव में विषाक्तता की चिंता नहीं हैं। चीनी और नमक की तरह अगर एम एस जी भी औसत मात्रा में खाया जाएँ तो नुकसान नहीं करता है। एम एस जी एक सच्चा फूड एलेर्जेन नहीं है, लेकिन एम एस जी युक्त खाद्य पदार्थों में कभी कभी इसके प्रतिकूल प्रतिक्रिया की रिपोर्ट मिलती है। अतः संवेदनशील व्यक्तियों को एम एस जी युक्त खाद्य पदार्थों से परहेज करना चाहिए।

जल में प्रतिजैविक प्रतिरोध का उद्‌गमन : वैश्विक समाधान की आवश्यकता

नेहा गुप्ता, दीप्षी चौरसिया एवं प्रीति चतुर्वेदी
जलीय विषविज्ञान प्रभाग, पर्यावरण विषविज्ञान विभाग
सी.एस.आई.आर.–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
विषविज्ञान भवन, 31 महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ, 226001, उत्तर प्रदेश, भारत

जल, मानव जाति के लिए प्रकृति के अनमोल उपहारों में से एक है। मानव शरीर में दो तिहाई मात्रा पानी की है। इससे स्पष्ट है कि जल का हमारे जीवन में कितना महत्व है। जल के बिना हमारे जीवन की कल्पना करना भी कठिन होगा। परंतु विडम्बना यह है कि जल के महत्व को समझते हुये भी मनुष्य इसे दूषित कर रहा है। नदियों के किनारे लगे कारखाने अपना सारा अपशिष्ट नदियों में प्रवाहित कर देते हैं। इससे सारी नदियां बहुत प्रदूषित हो चुकी हैं। इसके अलावा कूड़े – कचरे एवं मल–मूत्र के प्रवाह के लिए भी नदियों का ही सहारा लिया जा रहा है। इस वजह से जल में रहने वाले जीवाणु प्रतिजैविक प्रतिरोधी (antibiotic resistant) होते जा रहे हैं जो की एक समस्या का कारण बन चुका है।

1. प्रस्तावना

प्रतिजैविक औषधियों का एक महत्वपूर्ण समूह है जो कि जीवाणु संक्रमण के इलाज और रोकथाम के क्षेत्र में इस्तेमाल किया जाता है। मनुष्यों एवं पशुओं में प्रयोग की जाने वाली प्रतिजैविक दवाएं ज्यादातर (unmetabolized form) अनुपापचय रूप में रह जाती हैं जो कि पर्यावरण में उत्सर्जन के माध्यम से जुड़ जाती हैं। इसके अलावा अस्पतालों के कचरे का असंसाधित हिस्सा (unprocessed part) जिसमें दवाइयाँ होती हैं वह भी तालाबों आदि में प्रवाहित कर दिया जाता है।

इस वजह से जीव इन प्रतिजैविकों के खिलाफ प्रतिरोध प्राप्त कर लेते हैं जो कि आम संक्रमणों के उपचार में प्रभावशीलता में आई कमी का कारण बनता जा रहा है। कार्बापीनीम प्रतिरोधी एंटीरौबैक्टेरिएसी की लाईलाज उपभेदों के आगमन के साथ, हम प्रतिजैविक युग के बाद के युग की भोर में आ गए हैं।

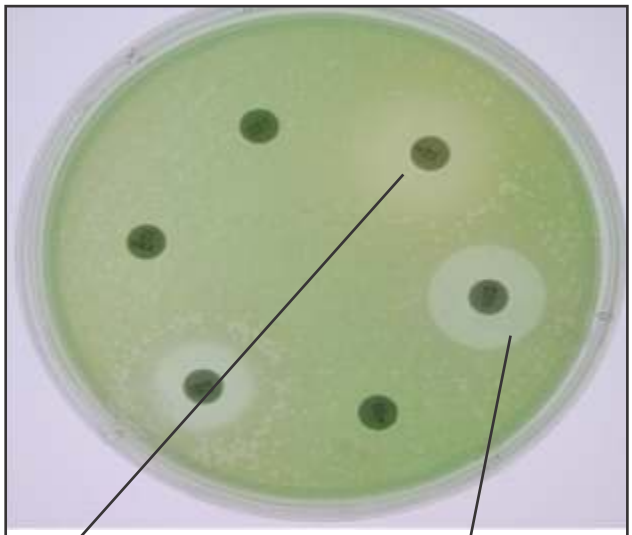

चित्र 1 : प्रतिजैविक प्रतिरोधक एवं संवेदनशील जीवाणु

2. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

सर अलेक्जेंडर फ्लेमिंग स्कॉटलैंड के एक जीवविज्ञानी थे जिन्होंने एंजाइम लाइसोजाइम का वर्ष 1921 में और प्रतिजैविक पदार्थ पेनिसिलिन का वर्ष 1928 में खोज के साथ आधुनिक प्रतिजैविक दवाओं के लिए नए क्षितिज को परिभाषित किया था। कवक *पेनिसिलियम नोटेटम* से पेनिसिलिन की खोज, जो कि एक प्रतिजैविक पदार्थ है, तथा इसके द्वारा जीवाणु संक्रमण जैसे उपदंश, अवसाद एवं तपेदिक के उपचार कर चिकित्सा के क्षेत्र में क्रांति ला दी। उन्होंने जीवाणु विज्ञान, प्रतिरक्षाविज्ञान एवं कीमोथेरेपी के विषयों पर लेखन के साथ चिकित्सा विज्ञान की दिशा में काफी योगदान दिया है। उन्होंने काफी सारे रोगों का समाधान दिया। उनकी इन असाधारण उपलब्धियों के लिए 1945 में

फिजियोलाजी व चिकित्सा के क्षेत्र में उन्हें नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

3. जीवाणुओं का प्रतिजैविक दवाओं के खिलाफ प्रतिरोधी बनने का कारण :–

जीवाणु कम से कम तीन अरब साल पहले से पृथ्वी पर अस्तित्व में हैं। इस समय में वे अलग अलग निवास के लिए अनुकूल हर उपलब्ध जगह के लिए अन्य जीवाणु के साथ प्रतिस्पर्धा करने के लिए जटिल रणनीतियों का विकास करने में सक्षम हो गए हैं। उदाहरण के लिये हानिकारक रसायन के साथ प्रतिद्वंदी पर हमला करना जिसे हम प्रतिजैविक पदार्थ कहते हैं। जो जीवाणु प्रतिजैविक पदार्थ का उत्पादन नहीं करते हैं उनमें प्रतिरोध जीनों का विकास देखा गया है। यह विकास उन जीवाणुओं के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करने की क्रियाविधि है जो कि प्रतिजैविक पदार्थ का उत्पादन करते हैं। प्रतिरोध अक्सर एक जीन द्वारा उत्पादित एक प्रोटीन द्वारा प्रदान किया जाता है। यह जीन छोटा एवं आत्म निहित होता है जो कि एक जीवाणु से दूसरे जीवाणु में एक जीन पूल के माध्यम से आसानी से स्थानांतरित होता है। कस्बों, शहरों और कृषि से जुड़े कचरों में प्रतिजैविक दवाओं, कीटाणुनाशक या अन्य प्रदूषकों का सामना कर रहे जीवाणुओं में प्रतिरोध जीनों का प्रसार क्षैतिज जीन स्थानांतरण (horizontal gene transfer) द्वारा होता है।

4. रोगाणुरोधी प्रतिरोध के उद्‌गमन के कारण

4.1.प्रतिजैविक दवाओं का बहुतायत उपयोग

अधिकांश एंटीबायोटिक का प्रयोग समुदाय में और पशुओं के विकास प्रोन्नति एवं रोगनिरोधक के क्षेत्रों में होता है। प्रतिजैविक दवाओं का अनुचित उपयोग करने से, प्रतिजैविक प्रतिरोध को बढ़ावा मिलता है। जानवरों मे इस्तेमाल होने वाली प्रतिजैविक दवाएं तथा उनके द्वारा बढ़ता प्रतिरोध आज चिंता का एक विषय बन चुका है। कई अध्ययनों द्वारा प्रदर्शित हुआ है कि प्रतिजैविक दवाओं का मिट्टी पर अनियमित प्रयोग करने से उस क्षेत्र के दवा प्रतिरोधी सुपरबग को बढ़ावा मिलता है। उनकी प्रतिजैविक प्रतिरोधक क्षमता बढ़ जाती हैं। सबसे ज्यादा आश्चर्यचकित कर देने वाले सबूत, फूड एंड ड्रग ऐडमिनिसट्रेशन (एफडीए/FDA) के द्वारा फ्लोरोकुइनोलोन्स (fluoraquinolones) की मंजूरी के एक परिणाम के रूप में आया था। फ्लोरोकुइनोलोन्स प्रतिजैविक दवाओं के वर्ग सिप्रोफ्लोक्सेसिन से संबन्धित हैं और पोल्ट्री उत्पादन में वर्ष 1995 से प्रयोग मे लाये जा रहें हैं। वर्ष 1999 तक लगभग 20 प्रतिशत चिकन कलेजे के नमूने में सिप्रोफ्लोक्सासिन प्रतिरोधी *कैमपायीलोबैक्टर कोलाई* (*Campylobacter coli*) पाया गया जोकि एक रोगजनक जीवाणु है। एक लम्बी अदालती प्रक्रिया के बाद, एफडीए ने अंत में 2005 में दवा के उपयोग पर प्रतिबंध लगा दिया जिस पर चिकन कलेजी में पाया जाने वाला *सी०कोलाई* (*C.coli*) के लगभग 30 प्रतिशत सिप्रोफ्लोक्सासिन प्रतिरोधी थे। 2010 तक, सिप्रोफ्लोक्सेसिन के लिए प्रतिरोध में 13.5 प्रतिशत की गिरावट आई है। इसका कारण यह है कि जब हम जानवरों को प्रतिजैविक दवायें देते हैं, और जानवरों के आसपास जीवाणु दवा के संपर्क में आते हैं, तो उनमें से कई जीवाणु तो मर जाते हैं। लेकिन हमेशा कुछ ऐसे जीवाणु रह जाते हैं जो कि प्रतिजैविक दवा के असर से नहीं मर पाते, और यह जीवाणु दूसरे जीवाणुओं को जन्म देते हैं जोकि प्रतिजैविक प्रतिरोधक होते हैं और इन्हें हम सुपरबग्स कहते हैं। वातावरण में पाए जाने वाले सुपरबग्स कच्चे मांस, पोल्ट्री, पानी एवं सब्जियों के द्वारा स्थानांतरित हो जाते हैं। कई जीवाणु वातावरण में आसानी से अपने आस–पास के जीवाणुओं के साथ एंटीबायोटिक प्रतिरोध के लिए कोडिंग जीन का आदान–प्रदान कर सकते हैं। एंटीबायोटिक प्रतिरोध जीन अक्सर मोबाइल आनुवंशिक तत्वों (mobile genetic elements), विशेष रूप से प्लास्मिड (plasmid), ट्रांसपोसोन (transposon) और इंटीग्रोन (integron) पर स्थित होते हैं और आसानी से कई प्रकार के जीवाणुओं, एवं अलग–अलग प्रजातियों के जीवाणु के बीच स्थानांतरण कर सकते हैं जिसके द्वारा कई दवाओं के लिए प्रतिरोध के प्रसार की सुविधा हो जाती है। इन कारणों के लिए सार्वजनिक स्वास्थ्य समुदाय (public health community) और एफडीए (FDA) ने

तीन से अधिक दशकों के लिए पशुओं पर प्रतिजैविक दवाओं के उपयोग को सीमित करने का प्रस्ताव किया है।

4.2 चिकित्सकों द्वारा प्रतिजैविक दवाओं का दुरूपयोग

चिकित्सकों द्वारा प्रतिजैविक दवाओं का दुरुपयोग एक आम बात है। दुनियाभर में विशेष रूप से अस्पतालों में गहन चिकित्सा कक्ष (आईसीयू), जो कि तेजी से प्रतिजैविक प्रतिरोध के विकास एवं प्रसार के लिए एक प्रजनन भूमि बनता जा रहा हैं क्योंकि इन जगहों पर रोगी की उच्च घनत्व की जनसंख्या होती है। जब रोगियों को घर पर दवा जारी रखने के लिए छुट्टी दी जाती है, तब वह आगे अन्य मनुष्यों के संपर्क में आकर प्रतिजैविक प्रतिरोध का प्रसार करते हैं। औद्योगिक देशों में देखा गया है कि प्रतिजैविक दवाओं का अनावश्यक उपयोग एवं निर्देश पर्चे की बगैर प्रयोग किया जाता है। प्रतिजैविक दवाओं की निर्धारित मात्रा से ज्यादा दिये जाने से प्रतिकूल प्रभाव का खतरा बढ़ जाता है। अन्य कारणों के बीच विकसित देशों में प्रतिजैविक दवाओं का अति प्रयोग रोगी संचालित (patient driven) है।

4.3. प्रतिजैविक पदार्थ वायरल (viral) संक्रमण के खिलाफ अप्रभावी होते हैं

प्रतिजैविक दवाएं जीवाणुरोधी होती हैं इसीलिए वे आत्म्सीमन बीमारियां जैसे सर्दी एवं फ्लू, जो कि वायरस के कारण होती है, उनके खिलाफ काम नहीं आती हैं । नैदानिक अनिश्चितता दवाओं के दुरुपयोग और अति प्रयोग का एक प्रमुख कारण है। प्रतिजैविक दवाओं के अनुचित प्रयोग से न केवल बढ़ता हुआ संक्रमण प्रतिरोध है बल्कि अब इलाज करवाना और भी महंगा हो चुका है क्योंकि प्रतिरोधी संक्रमण अब और भी जटिल हो गए हैं।

5. प्रतिजैविक प्रतिरोध कैसे काम करता है

प्रतिजैविक दवाएं सूक्ष्मजीवी जीवाणुओं को नष्ट कर मानव कोशिकाओं को कम या बिना नुकसान पहुंचाए काम करती हैं। जीवाणु निम्नलिखित तरीकों से प्रतिजैविक प्रतिरोध उत्पन्न करते है :–

1. सूक्ष्म्जीवी एंजाइमों द्वारा दवा की निष्क्रियता (Drug inactivation by microbiolenzymes)
2. लक्ष्य स्थल में संशोधन (modification of target site)
3. प्रतिजैविक दवाओं की पारगम्यता (permeability) में कमी
4. कोशिका से प्रतिजैविक दवाओं का बहिष्कार (exclusion)
5. जीन विलोपन (gene deletion)

5.1. माईक्रोबियल एंजाइमों द्वारा दवा की निष्क्रियता (Drug inactivation by microbial enzymes)

प्रतिजैविक प्रतिरोध के विकास में शामिल कई तंत्र के बीच, दवा संशोधन कई उपचारात्म्क उपयोगी दवाओं को व्यर्थ बनाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है उदाहरण के तौर पे बीटा– लेक्टामेज (B-lactamase) एक एंजाइम है जो कि कई ग्राम पॉजिटिव एवं कुछ ग्राम निगेटिव जीवाणु में सविस्तार पेनिसिलिन को पेनिसिलोइक एसिड (penicilloic acid) में परिवर्तित करता है जो कि उपचारात्मक तौर पर निष्क्रिय होता है। इस एंजाइम का उत्पादन ग्राम निगेटिव जीवाणु में विधान है जबकि ग्राम पॉजिटिव जीवाणु में उत्प्रेरणीय है।

5.2. लक्ष्य स्थल में संशोधन (modification of target site)

प्रतिजैविक प्रतिरोध के अन्य तंत्र जैसे लक्ष्य स्थल में संशोधन का सबसे अच्छा उदाहरण है स्ट्रेप्टोंमाईसिन और इरिथ्रोमाईसिन प्रतिजैविक पदार्थ। ये दोनों ही प्रतिजैविक पदार्थ जीवाणु के राइबोसोम से जुड़कर प्रोटीन संश्लेषण में बाधा डालने का काम करते हैं। राइबोसोम की 50S सबयूनिट (subunit) के S_{12} प्रोटीन के संशोधन से राइबोसोम स्ट्रेप्टोंमाईसिन के लिए असंवेदनशील हो जाता है जबकि राइबोसोम के 50S सबयूनिट के L_4 या L_{12} प्रोटीन में उत्परिवर्तिन (mutation) होने पर वह इरिथ्रोमाईसिन के लिए प्रतिरोधी हो जाता है।

5.3. प्रतिजैविक दवाओं की पारगम्यता (permeability) में कमी

कुछ मामलों में, जीवाणुओं की कोशिका झिल्ली मे कम पारगम्यता की वजह से प्रतिजैविक दवाओं के लिए सहिष्णुता देखी गयी है। उदाहरण के लिए *नेइसेरिया गोनोरिह्या* (*Neisseria gonorrhoea*) जो कि झिल्ली प्रोटीन "पोरीन" (Porin) एन्कोडिंग जीव में उत्परिवर्तन प्राप्त करके प्रतिजैविक प्रतिरोध हासिल कर लेती है।

5.4.कोशिका से प्रतिजैविक दवाओं का बहिष्कार (exclusion)

जीवाणुओं में मौजूद प्रतिजैविक प्रतिरोध में शामिल तंत्रों मे से एक है कोशिका से प्रतिजैविक दवाओं का बहिष्कार कर प्रतिरोध हासिल करना। बहिः स्त्राव पम्प, जीवाणुओं को प्रतिजैविक प्रतिरोधी बनाने की एक ऊर्जा मध्यस्थ शक्तिशाली रणनीति है जो प्रतिजैविक दवा को निरोधात्मक प्रभाव डालने के लिए पर्याप्त मात्रा में जीवाणु की कोशिका में रुकने नहीं देता है ।

5.5. जीन विलोपन (gene deletion) –

जीन विलोपन भी प्रतिजैविक प्रतिरोध क्षमता का योगदान करने के लिए जाना जाता है। जीवाणु जीन विलोपन के जरिये डीएनए (DNA) के अनुक्रम को क्षति पहुँचाकर प्रतिजैविक प्रतिरोध प्राप्त करता हैं। उदाहरण के लिए *माईकोबैक्टीरियम ट्यूबरकुलोसिस* (*Mycobacterium tuberculosis*) के कुछ उपभेदों (strains) मे कैट जी (Kat G) जीन का विलोपन क्षयरोग दवा (anti-tubucular drug) आइसोनिको–टीनीक एसिड हाईड्राजाईड (isonicotinic acid hydrazide INH) के लिए सहनशील बनाता है। इनके अलावा जीवाणु बायोफिल्म उत्पन्न करके भी स्वतः प्रतिजैविक प्रतिरोधक बन जाते हैं।

6. प्रतिजैविक दवाओं का जीवों द्वारा अधिग्रहण एवं प्रतिरोध का प्रसार

जीवाणु में प्रतिजैविक प्रतिरोध अंतर्निहित (inherent) भी हो सकता है जैसे कि विशेष प्रकार की कोशिका दीवार संरचना या इसे किसी अन्य स्रोत से अपने स्वयं के डीएनए (DNA) में उत्परिवर्तन के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है।

जीवाणु में प्रतिरोध का प्रसार निम्न माध्यमों से हो सकता है :–

6.1. निहित (inherent) प्रतिरोध–जीवाणु स्वाभाविक रूप से प्रतिजैविक प्रतिरोधी हो सकता है। उदाहरण के लिए ग्राम निगेटिव जीवाणु के मामले में एक बाहरी झिल्ली, कोशिका दीवार को प्रतिपादित करके प्रतिजैविक दवाओं के खिलाफ पारगम्यता बाधा स्थापित कर उसे प्रतिजैविक प्रतिरोधक बनाती है।

6.2. अधिग्रहण (Acquired) प्रतिरोध–जीवाणुओं द्वारा प्रतिजैविक दवाओं के लिए प्रतिरोध प्राप्त करने के क्रम में कई तंत्र विकसित किए गए हैं। जैसे कि मौजूदा आनुवांशिक सामग्री को रूपांतरण करके या फिर अन्य स्रोत से आनुवांशिक सामग्री के अधिग्रहण कर के प्रतिरोध स्थापित किया जा सकता है ।

6.3. उध्वार्धर जीन प्रतिरोध (Vertical gene transfer) – प्रतिजैविक प्रतिरोध के लिए सहज उत्परिवर्तक आवृत्ति लगभग 10^8–10^9 है। इसका मतलब है हर 10^8–10^9 मे से एक जीवाणु संक्रमण में उत्परिवर्तन के जरिए प्रतिरोध पैदा कर सकता है। एक बार विकसित किया गया प्रतिरोध डीएनए प्रतिकृति के दौरान सभी जीवाणु की संतान में सीधे स्थानांतरित हो जाता है। इसको उध्वार्धर जीन प्रतिरोध कहते हैं। प्रतिजैविक के चुनिंदा वातावरण में सामान्य जीवाणु मर जाते हैं और प्रतिरोधी उत्परिवर्ती वाले जीवाणुओं को बढ़ने और पनपने की अनुमति मिल जाती है।

6.4. क्षैतिज जीन स्थानांतरण (Horizontal gene transfer) – जीवाणु में प्रतिजैविक प्रतिरोध प्रदान करने के लिए विकसित किया गया जीन क्षैतिज जीन स्थानांतरण के जरिए एक तंत्र से दूसरे तंत्र में स्थानांतरित किया जा सकता है। क्षैतिज जीन हस्तांतरण के दौरान प्रतिजैविक प्रतिरोधी जीन गतिशील आनुवंशिक तत्वों जो कि कोशिकाओं के बीच आनुवंशिक सामग्री का आदान प्रदान करते हैं, के

साथ चले आते हैं। मोबाइल या गतिशील आनुवंशिक तत्व डीएनए (DNA) के रैखीय या परिपत्र टुकड़े हो सकते हैं जिन्हें प्लास्मिड कहा जाता है। इनकी पुनरावृत्ति जीनोम के साथ–साथ कोशिका (cell) में कई तंत्रों द्वारा होती हैं। यह डीएनए के टुकडे तीन तंत्रों के माध्यम से एक नई कोशिका में प्रवेश करते हैं। वह तंत्र निम्नलिखित हैं:–

रूपान्तरण तंत्र (Transformation) – रूपान्तरण में, जीवाणु कोशिकायें मृत जीवाणु कोशिकाओं के डीएनए अवशेष को अपमाजिति कर अपने स्वयं के जीनोम में उन्हें स्वीकृत कर लेते हैं।

पारगमन तंत्र (Transduction) – पारगमन में आनुवांशिक सामग्री जीवाणुभोजी (Bacteriophage) के द्वारा स्थानांतरित होती हैं। जीवाणुभोजी वो वायरस है जो जीवाणुओं को संक्रमित करता है। जीवाणुभोजी अपना डीएनए एक मेजबान कोशिका के जीनोम में सम्मिलित कर सकता है ।

संयुग्निमन तंत्र (Conjugation) – संयुग्निमन, सीधे संपर्क के माध्यम से एक जीवाणु से दूसरे जीवाणु में आनुवांशिक सामग्री के स्थानांतरण करने की प्रक्रिया को कहते हैं। संयुग्निमन की प्रक्रिया के दौरान एक जीवाणु आनुवांशिक सामग्री के दाता के रूप में जबकि दूसरा जीवाणु प्राप्तकर्ता के रूप में कार्य करता है। संयुग्निमन के दौरान स्थानांतरित आनुवांशिक सामग्री अक्सर किसी प्रकार के आनुवांशिक लाभ के साथ प्राप्तकर्ता जीवाणु को प्रदान होती है। उदाहरण के लिए, संयुग्निमन प्रतिजैविक जीनों को लेकर प्लासमिड हस्तांतरण करता है।

7. प्रतिजैविक प्रतिरोध की एक खामी के रूप में "सुपरबग" (Superbug)

7.1. नई दिल्ली मेटेलो बीटा लेक्टामेज–1 (एनडीएम –1) :

नई दिल्ली मेटेलो बीटा लेक्टामेज–1 वह एंजाइम हैं जो कि जीवाणु को बीटा लेक्टेम (β-lactam) प्रतिजैविक दवाओं की एक विस्तृत श्रृंखला के लिए प्रतिरोधी बनाता है। यह प्रतिजैविक प्रतिरोधी जीवाणु के संक्रमण के उपचार के लिए एक मुख्य आधार है जो कार्बापीनीम परिवार की प्रतिजैविक दवाओं में शामिल है। एनडीएम–1 (NDM-1) के लिए जीन कार्बापीनामेज जो एक बड़े जीन परिवार, जो बीटा लेक्टामेज एंजाइम को कूटबद्ध करता है उसका सदस्य है। जीवाणु जो कि कार्बापीनामेज का उत्पादन करते हैं उन्हें "सुपरबग" के नाम से जाना जाता है। इनकी वजह से संक्रमण आदि के इलाज के लिए मुश्किलें आ गई हैं। इस तरह के जीवाणु केवल पालीमिक्सिन और टिजिसाइक्लिन (स्वास्थ्य संरक्षण रिपोर्ट, हेल्थ प्रोटेक्शन एजेंसी 3 जुलाई 2009) के लिए आमतौर पर संवेदनशील है। एनडीएम–1 जीन सबसे पहले *क्लेबसिएला निमोनिया* (*Klebisella pneumoniae*) जो कि भारतीय मूल के एक स्वीडिश रोगी में वर्ष 2008 में पाया गया था। उसके बाद में यह भारत, पाकिस्तान, यूनाइटेड किंगडम, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा और जापान के जीवाणुओं में पाया गया था। आमतौर पर ग्राम निगेटिव जीवाणु जैसे कि *एसचेरेचिया कोलाइ* (*E.coli*) और *क्लेबसिएला निमोनिया*, सबसे ज्यादा इस एंजाइम को बनाते हैं, लेकिन एनडीएम–1 जीन क्षैतिज जीन स्थानांतरण से दूसरे प्रजाति के जीवाणु में भी जा सकता है।

7.2. विस्तारित स्पेक्ट्रम बीटा–लैक्टामेजेज (Extended Spectrum β-lactamases) –

विस्तारित स्पेक्ट्रम बीटा–लैक्टामेजेज (ESBL) उत्पन्न करने वाले जीवाणुओं ने नैदानिक सूक्ष्म जीव वैज्ञानिकों, चिकित्सकों, संक्रमण नियंत्रण पेशेवरों और जीवाणुरोधी खोज वैज्ञानिकों के लिए अनोखी चुनौतियां खड़ी कर दी हैं। ईएसबीएल वह एंजाइम होते हैं जो कि पेनिसिलिन, ब्राड स्पेक्ट्रम सिफेलोस्पोरिन और मोनोबैक्टम जैसे प्रतिजैविकों को हाइड्रोलाइज कर सकते हैं। ईएसबीएलएस अक्सर प्लास्मिड पर स्थित होते हैं इसी वजह से वह एक जीवाणु से दूसरे जीवाणु में स्थानांतरण करने के योग्य होते हैं। ईएसबीएल की व्यापकता अभी तक ज्ञात नहीं हो पायी है, यद्यपि यह स्पष्ट रूप से बढ़ रही है, तथा दुनिया के कई हिस्सों में 10–40% *ई. कोलाई* और *क्लेबसिएला निमोनिया* ईएसबीएल प्रदर्शित कर रहे हैं। ईएसबीएलएस उत्पादक एंटीरौबैक्टेरिएसी दुनिया भर में संक्रमण के कई उद्रेक (outbreaks)

फैलाने के लिए जिम्मेदार पाये गये हैं और चुनौतीपूर्ण संक्रमण नियंत्रण मुद्दों का केंद्र बन गया है। ईएसबीएल के नैदानिक परिणामों के तथ्यों से पता चला है कि जीवाणुरोधी एजेंटों के उपयोग के लिए चिकित्सकीय निर्देशन की अति आवश्यकता है।

7.3. मेथिसिलिन प्रतिरोधी *स्टाफाइलोकोकस* औरियस (*Staphylococcus aureus*) (MRSA)–

स्टाफाइलोकोकस में मेथिसिलिन के लिए प्रतिरोध एमईसी–ए (mecA) जीन द्वारा मध्यस्थ होता है जो कि एक संशोधिक पेनिसिलिन बाध्यकारी (binding) प्रोटीन (PBP) है, पी बी पी 2a या 2 में मेथिसिलिन और औकजेसिलिन और अन्य सभी बीटा लेक्टम प्रतिजैविक दवाओं के लिए कम आत्मयिता (less affinity) दिखाते हैं। यह जीन जीवाणुओं की कोशिका दीवार में व्यक्त होता है और जीवाणु को बीटा लेक्टम (B–lactam) प्रतिजैविक दवाओं के लिए प्रतिरोधक बनाता है। एमआरएसए सबसे पहले बेल्जियम में मस्टिक गायों (mastic cows) के दूध में वर्ष 1972 मे पशु संक्रमण के रूप में पाया गया था।

8. प्रतिजैविक प्रतिरोध को रोकने के लिए विश्व स्तर पर शुरू की गयी नीतिया

8.1. भारत

भारत सरकार ने स्थिति का आंकलन करने के लिए और प्रतिजैविक प्रतिरोध, एमडीआर–टीबी के खिलाफ उपचारात्मक एवं निवारक उपायों की सिफारिश करने के लिए एवं प्रतिजैविक दवाओं के विशिष्ट उपयोग पर अंकुश लगाने के लिए एक टास्क फोर्स का गठन किया है।

वर्ष 2011 में, सरकार ने पहले से ही देश में हो रहे अंधाधुंध प्रतिजैविक दवाओं के प्रयोग पर रोक लगाने के लिए एक व्यापक नीति तैयार की है। स्वास्थ्य सेवा के महानिदेशक की अध्यक्षता मे गठित टास्क फोर्स द्वारा समस्या का समाधान करने के लिए नीति का विकास किया गया। इस नीति की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :–

1. निर्माण, उपयोग एवं देश में प्रतिजैविक दवाओं के दुरुपयोग के बारे में मौजूदा स्थिति की समीक्षा करना।
2. प्रतिजैविक प्रतिरोध के लिए एक राष्ट्रीय निगरानी प्रणाली के लिए योजना की सिफारिश।
3. मानव, पशु चिकित्सा एवं औद्योगिक उपयोग में प्रतिजैविक दवाओं के उपयोग के लिए नियामक प्रावधानों को बढ़ाने एवं लागू करने के लिए ।
4. अस्पतालों में प्रतिजैविक दवाओं एवं प्रतिजैविक नीतियों के तर्कसंगत उपयोग के रूप में विशिष्ट हस्तक्षेप उपायों की सिफारिश करने के लिए।

चेन्नई घोषणा (Chennai Declaration) भारत में अगस्त 2012 में हुई चेन्नई बैठक चिकित्सा समाज की सबसे पहली बैठक थी जिसमे रोगाणुरोधी एवं प्रतिजैविक प्रतिरोध से निपटने के लिए योजना विकसित करने के मुद्दो पर योजना सूत्रबद्ध की गयी।

8.2. प्रतिजैविक दवाओं के विवेकपूर्ण उपयोग के लिए गठबंधन (Alliance for the Prudent use of Antibiotics (APUA) यह गठबंधन वर्ष 1981 के बाद से प्रतिजैविक दवाओं के प्रभाव को बनाए रखने के लिए अग्रणी वैश्विक गैर सरकारी (non government) संगठन के रूप में कार्य कर रहा है।

8.3. प्रतिजैविक प्रतिरोध संघ (Antibiotic Resistance Coalition) प्रतिजैविक प्रतिरोध संघ अनेकों नागरिक समाज संगठनों एवं छह महाद्वीपों से हितधारक जो कि स्वास्थ्य, कृषि, उपभोक्ता एवं विकास के क्षेत्रों से जुड़े हुये हैं, उनके द्वारा निर्मित किया गया है। यह पोस्ट–प्रतिजैविक युग (Postantibiotic era) को एक अंधकारमय वास्तविकता बनने से रोकने के लिए नीतियाँ बनाना एवं उस पर कार्यवाई करने का काम करते हैं।

8.4. यूरोपीय प्रतिजैविक जागरूकता दिवस :– प्रतिवर्ष, 18 नवंबर के दिन प्रतिजैविक प्रतिरोध एवं विवेकपूर्ण प्रतिजैविक दवाओं के उपयोग के बारे में

जागरूकता बढ़ाने के उद्देश्य से यूरोप में सार्वजनिक स्वास्थ्य पहल के रूप में वार्षिकोत्सव मनाया जाता है।

8.5. प्रतिजैविक प्रतिरोध पर कार्यवाई (Action on Antibiotic Resistance)``ReAct`` यह एक स्वतंत्र वैश्विक नेटवर्क है जो कि प्रतिजैविक प्रतिरोध की प्रतिक्रिया पर ठोस कार्रवाई करता है। रीएक्ट विभिन्न हितधारकों के बीच विचारों, वाद–विवाद एवं सहयोग के लिए एक मंच प्रदान करता है।

8.6. 2005 में शुरू किया गया हाथ स्वच्छ्ता अभियान (The hand hygiene campaign) यह अभियान अस्पताल में भर्ती रोगियों एवं स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की ओर लक्षित था। हाथ स्वच्छता में वृद्धि के परिणाम स्वरूप एवं अस्पतालों में अल्कोहल आधारित हाथ रगड़ उपयोग से अस्पताल अधिग्रहण एमआरएसए (Hospital acquired MRSA) में कमी आई।

8.7. प्रतिजैविक प्रतिरोध को कम करने के लिए रणनीतियाँ

प्रतिजैविक प्रतिरोध को निम्न रणनीतियां अपनाने से कम किया जा सकता है :–

1.प्रतिजैविक दवाओं का प्रयोग सावधानीपूर्वक रोगाणुरोधक प्रबंध कार्यक्रमों के दिशा निर्देशों के अनुसार किया जाना चाहिए ।

2.विभिन्न आधार सामग्री (data) जैसे कि फार्माकोकाइनेटिक (Pharmacokinetic) एवं फार्मा को ड़ाईनामिक (Pharmacodynamic) गुण, नैदानिक परीक्षण, रोगाणुरोधी संवेदनशीलता परीक्षण, नैदानिक प्रतिक्रिया के आधार पर प्रतिजैविक दवाओं का उपयोग करके अथवा उनका माइक्रोबायोटा पर प्रभावों की प्रतिक्रिया के अनुसार उपयोग में लाया जाना चाहिए।

8.8. प्रतिजैविक प्रबंधन कार्यक्रम (Antibiotic Stewardship Program)

कई संस्थानों में रोगाणुरोधी एवं प्रतिजैविक प्रतिरोध का संचालन, उपचार से संबंधित लागत को कम करने, नैदानिक परिणामों और सुरक्षा में सुधार एवं प्रतिजैविक प्रतिरोध को कम या स्थिर करने के लिए काम करती है। ए एस पी ASP के लिए औपचारिक दिशा निर्देश वर्ष 2007 में अमेरिका के संक्रमण रोग सोसाइटी (Infection Diseases Society of America,IDSA) एवं अमेरिका की हैल्थकेयर एपीडिमिओलाजी सोसाइटी (Society of Healthcare Epidemiology,SHEA) द्वारा किया गया ।

ए एस पी अपने संबंधित क्षेत्रों में पर्याप्त अनुभव के साथ चिकित्सकों, फार्मासिस्ट, सूक्ष्म जीव विज्ञानियों, महामारीविदों एवं रोग विशेषज्ञों की टीमों द्वारा क्रियान्वित कर रहे हैं। कई अध्ययनों से एएसपी (ए एस पी) से प्रतिरोध के उद्भव एवं प्रसार को सीमित करने की क्षमता प्रदर्शित हुई है।

8.9. वैश्विक प्रतिजैविक प्रतिरोध सहकारिता (Global Antibiotic Resistance Partnership)

यह सहकारिता एशिया एवं अफ्रीका के आठ निम्न एवं मध्यम आय वाले देशों के लिए प्रतिजैविक प्रतिरोध पर कार्यवाई कर नीति प्रस्तावों को विकसित करता है । यह प्रस्ताव यह पता लगाते हैं कि कैसे ये देश प्रतिजैविक दवाओं का विनियमित विकास एवं उनका व्यवस्थित प्रबंधन करते हैं और किस तरह से देशों में प्रतिजैविक दवाओं का उपयोग एवं प्रतिरोध का पता लगाया जा रहा है। गार्प (GARP) के पहले चरण (Phase-1) में भारत, केन्या, दक्षिण अफ्रीका और विएतनाम में काम किया गया था। इन प्रारम्भिक चार देशों में विकसित विशेषताएँ और क्षमता दुनिया भर में एक प्रयास के हिस्से के रूप में सामने आई। यह प्रतिजैविक प्रतिरोध को नियंत्रित करने के लिए नीतियों के लिए जरूरत के बारे में अन्य कम और मध्यम आय वाले देशों को शामिल करने के लिए एक व्यापक साझेदारी का मूल है।

8.10. प्रतिजैविक प्रतिरोध के खिलाफ विश्व संधि (World Alliance against Antibiotic Resistance, WAAAR)

2012 में बहु दवा प्रतिरोधी जीवाणु (multidryresistant bacteria) के खिलाफ यह विश्व

संधि बनाई गयी है। डबलूएएएआर इस संधि के 350 पेशेवर जो कि मानव एवं पशु चिकित्सा के कई पहलुओं से हैं और जो इस गठबंधन का समर्थन करते हैं, उन्हें इसमे सम्मिलित कर लेते हैं। इसके अलावा दुनिया भर से 54 चिकित्सा विशेषज्ञ या व्यवसायिकों को भी सम्मिलित करते हैं ।

8.11.बेल्जियम प्रतिजैविक नीति समन्वय समिति

यह एक आर्थिक रूप से सरकार द्वारा समर्थित राष्ट्रीय अभियान आयोजन का हिस्सा है। वर्ष 1999 में शुरू किया गया यह अभियान जोकि आम जनता को ध्यान में रखकर बनाया गया था, इसके परिणाम स्वरूप वर्ष 1999 और 2007 के बीच में 36% प्रतिजैविक की मांग में कमी आई और *स्ट्रेप्टोकोकस निमोनिया* (*Streptococcus pneumonia*) एवं *एस० पयोजीन्स* (*S. pyogenes*) में प्रतिजैविक प्रतिरोध में भी कमी देखी गयी थी ।

9. प्रतिजैविक प्रतिरोध को कम करने के लिए वैकल्पिक रणनीतियाँ – रोकथाम एवं उपचार के लिए

9.1. प्रतिजैविक आज के परिदृश्य से

वर्तमान काल में उपयोग हो रहे प्रतिजैविक 50 से अधिक साल पहले खोजे गए थे। यह खोज मुख्य रूप से मिट्टी में पाये जाने वाले जीवाणुओं द्वारा निर्मित बायोएक्टिव रसायनों के खनन से हुई थी। इन प्रतिजैविक दवाओं का सबसे ज्यादा प्रभाव संक्रमणों के उपचार करने एवं नए चिकित्सक प्रक्रियाओं की खोज करने में हुआ। परंतु प्रतिरोधक उपभेदों के उद्‌गमन से कुछ हद तक जल्द ही रुकावट आ गयी। बाद में, प्रतिजैविक पदार्थों को, जोकि माइक्रोबियल माध्यमिक चयापचय से निकाले जाते हैं, उन्हें रसायनिक तौर पर संशोधित (Chemical Modification) किया जाता है ताकि वे ज्यादा प्रभावकारी हो जाएं किंतु इन परिणामों के स्वरूप बहुऔषध प्रतिरोधी (multidrug resitance) रोगजनकों का उद्‌गमन होना शुरू हो गया है। 21वीं शताब्दी में औषधीय विभाग द्वारा पुरानी दवाओं के प्रतिरोध मध्यस्थ अप्रचलन करके नयी दवाओं को चिकित्सालयों में पहुंचाने की क्षमता बहुत कम हो गयी है। प्रतिजैविक दवाओं की खोज ने निवेश एवं गतिविधि में एक सामान्य कमी मौजूद है जिसके परिणाम स्वरूप कुछ नयी दवाएं क्षितिज पर हैं। इस तथ्य ने स्पष्ट रूप से सार्वजनिक, चिकित्सकों, नियमकों और सरकार को आश्चर्य में डाल दिया है। सवाल यह है कि बढ़ती हुई प्रतिजैविक प्रतिरोध की समस्या के समाधान स्वरूप नयी प्रतिजैविक दवाएं कहाँ से आएंगी। अतः इस नैदानिक समस्या का समाधान करने के लिए दोनों पारंपरिक एवं गैर पारंपरिक दृष्टिकोण की आवश्यकता है।

9.2. नए प्रतिजैविक नए प्रकृतिक उत्पाद की खोज में पुनर्जागरण की आवश्यकता है। शक्तिशाली प्रतिजैविक गतिविधि और दवा की क्षमता वाले पारंपरिक एकल अणु अभी खत्म नहीं हुए हैं। हालांकि अत्यधिक शक्तिशाली, गैर विषैले, व्यापक स्पेकट्रम एवं सस्ती दवाओं के दिन शायद खत्म हो गए हैं। यह वह मापदंड हैं जिन्होनें परंपरागत रूप से प्रतिजैविक दवाओं की खोज में कीर्तिमान हासिल किए। वास्तव में, ज्यादातर ग्राम पॉजिटिव एवं ग्राम नेगेटिव जीवाणुओं के खिलाफ सक्रिय व्यापक स्पेक्ट्रम प्रतिजैविक एजेंट की खोज से मानव माइक्रोबायोटा पर गंभीर हानिकारक प्रभाव भी देखे गए हैं। इन व्यापक स्पेकट्रम दवाओं की खोज के लिए नैदानिक तर्क (clinical reasoning) यह है कि बहुत बार, प्रस्तुति के समय चिकित्सकों के पास संक्रमण के कारक सूक्ष्मजीव अज्ञात होते हैं। इसीलिए चिकित्सक व्यापक स्पेक्ट्रम दवाओं की इच्छा के लिए अग्रणी हो जाते हैं क्योंकि इसके द्वारा सभी आधारभूत जोकि अनुभवजन्य उपचार के लिए जरूरी है, वह मिल जाते हैं। इसलिए अब हमारा ध्यान ऐसे बहुत ही (narrow spectrum) संकीर्ण स्पेकट्रम जीव–विशिष्ट प्रतिजैविक दवाओं पर होना चाहिए जोकि आण्विक निदान (Molecular Diagnostics) के क्षेत्र में प्रगति के साथ एक नया अधिक चयनात्मक प्रतिजैविक शस्त्रागार प्रदान कर संक्रामक रोग विशेषज्ञों का मार्गदर्शन करने में कारगर होगा। हालांकि इस तरह के नए प्रतिजैविक दवाओं की खोज के लिए नए तरीके और रसायनों के साथ निदान में नवीनता एवं

नियामक ढाँचे में परिवर्तन (changes in Regulatory framework) लाने की आवश्यकता होगी।

पिछले 25 वर्षों में प्रतिजैविक क्षेत्र में, प्रमुखता से कृत्रिम रसायनिक एवं *इन विट्रो* (*in-vitro*) लक्ष्य आधारित दृष्टिकोण रखा गया है। हालांकि इस रणनीति को विभिन्न चिकित्सीय क्षेत्रों में सफलता मिली है। लेकिन प्रतिजैविक की खोज में इसके उपयोग को विफलता मिली है। आधुनिक लक्ष्य आधारित दवाओं की खोज के क्रम में आई कमी का एक कारण चयनित जीवाणुओं के लक्ष्यों की एक अधूरी समझ एवं रसायन शास्त्र की कमी भी है। हालांकि, प्रतिजैविक पदार्थों का स्रोत मुख्य रूप से माईक्रोबियल स्त्रोतों एवं प्रतिजैविक रासायनिक मचान रहा है। इसीलिए, उचित रासायनिक पदार्थ के साथ प्रचलित रासायनिक मचानों से बचने की सुजान जांच और अतिसंवेदनशील जीवों की अधिक व्यापक स्पेक्ट्रम कवरेज को छोड कर नए प्रतिजैविक की खोज की आवश्यकता है। आशावादी होने का एक बहुत अच्छा कारण यह भी हो सकता है कि पारंपरिक एकल एजेंट प्रतिजैविक पदार्थ की खोज को जारी रखकर बाजार में उपलब्ध कराया जाए। पारंपरिक प्रतिजैविक दवाओं के लिए वैकल्पिक तरीकों की पेशकश से नयी दवाओं के लिए भी रणनीतियाँ उपलब्ध हो सकती हैं। जैसे कि प्रतिजैविक सहायक, तत्व एंटी विरूलेंस एवं बायोलाजीकल।

9.3. सहायक तत्व (Adjuvant) सहायक तत्व वह यौगिक होते हैं जो प्रतिजैविक दवाओं की गतिविधि को शक्ति प्रदान करके बढ़ा देते हैं। प्रतिजैविक सहायक दोनों प्रतिजैविक अतिसंवेदनशील एवं प्रतिजैविक प्रतिरोध रोगाणुओं में दवाओं की प्रभावकारिता में वृद्धि कर सकते हैं। प्रतिजैविक दवाओं का संयोजन अक्सर संभव प्रतिरोध से बचने के लिए और संभव संक्रमण के स्पेक्ट्रम को रोकने के लिए दशकों से संक्रामक रोग चिकित्सा का मुख्य आधार रहा है। कुछ जीवाणु संबंधी रोगों के प्रारम्भिक इलाज जैसे कि तपेदिक (Tuberculosis) में बहुऔषध उपचार की आवश्यकता होती है। ऐसा ही कैंसर, हेपेटाईटिस एवं वाईरल रोग जैसे एचआईवी/एड्स (HIV/AIDS) के साथ भी किया जाता है। हालांकि, प्रतिजैविक दवाओं के साथ गैर– प्रतिजैविक यौगिक जिनमें सहौषधि के गुण हों, का संयोजन कर देने से अपेक्षाकृत प्रतिरोध से उबरने एवं रोगों का बेहतर इलाज होते पाया गया है। प्रतिजैविक सहायक सीधे प्रतिरोध तंत्र को लक्षित कर सकते हैं एवं उन यौगिकों के तरह कार्य करते हैं जो कि आनुवांशिक रसायनों का परस्पर फायदा उठाकर प्रतिजैविक कार्यकलाप को शक्ति प्रदान करते हैं।

सहायक द्वारा प्रतिरोध तंत्र को सीधे निशाना बनाकर काम करने की रणनीति चिकित्सकीय तौर पर साबित है। यह प्रतिरोध को रोक कर प्रतिजैविक दवाओं के स्पेक्ट्रम को विस्तृत करता है। दशकों से पैनिसिलिन के साथ बीटा–लेक्टा मेजस (ß–lactamases) के विभिन्न अवरोधकों के संयोजन नैदानिक उपयोग में लाये जा रहे हैं। इनमे से एक महत्वपूर्ण संयोजन है अमोक्सीसिल्लिन के साथ बीटा–लेक्टामेजज (ß-lactamases) अवरोधक क्लावूलिनिक एसिड। क्लावूलिनिक एसिड *स्ट्रेप्टोमाइसिस क्लेवुलीगेरस* (*Streptomyces clavuligerus*) द्वारा उत्पादित एक प्राकृतिक उत्पाद है जो कि एसीमेनटिन के रूप में विपाजन है। अन्य इसी प्रकार के संयोजन के साथ नैदानिक प्रयोग मे आने वाले उत्पाद हैं टीकारसिल्लिन क्लेवुलेनिक एसिड के साथ पिपरासिल्लिन टेजोबेक्टेम के साथ एवं एम्पिसिल्लीन सबलक्टम के साथ।

क्लावूलनीक एसिड आंतरिक लेक्टा मेजेस (intrinsic ß-lactamases) को रोकता है जोकि *माईकोबैक्टीरीयम ट्यूबरकुलोसिस* (*Mycobacterium tuberculosis*) को बीटा–लैक्टम प्रतिजैविकों के लिए अभेद्य बनाता है और इस प्रकार से क्लावूलनीक एसिड, मीरोपीनीम के साथ संयोजन बनाकर घातक रोगजनकों के खिलाफ उपचार में एक नयी रणनीति की पेशकश करता है। किन्तु बीटा–लेक्टामेजेस का निरोध करने वाले संयोजक जो कि आजकल नैदानिक उपयोग में लाये जा रहे हैं उनका बहुत ही कम प्रभाव उन जातकों में पाया गया है जोकि AmpC या ESBLs (Extended Spectrum ß-lactamases) उत्पन्न करते हैं। अतः इस नैदानिक जरूरत को संबोधित करने के लिए, सिफैलोस्पोरिन्स (cephalosporins) ceftaroline,एवं

ceftazidine के साथ संयोजन में अनोखा बीटा–लैक्टामेज अवरोध करने वाला अभिबैक्टम देर चरण के नैदानिक परीक्षणों में हैं जिसके अच्छे परिणाम हासिल हो रहे हैं। हालांकि, सिर्फ बीटा–लेक्टामेज की रोकथाम करके प्रतिजैविक पदार्थ की क्रिया को बरकरार रखना ही एक साधन नहीं है। इसके अलावा अमीनोग्लाइकोसाइड (aminoglycoside) को निष्क्रिय करने वाले एन्जाइम्स एवं प्रतिजैविक बहिः स्त्राव पम्प (Antibiotic efflux pump) द्वारा भी प्रतिजैविक क्रिया को सक्रिय रखने में समर्थ पाया गया है। यद्यपि इनके नैदानिक परिणाम अभी तक जाँचे नहीं गए हैं।

प्रतिजैविक एवं सहायक का संयोजन आमतौर पर दवा प्रतिरोध के साथ जुड़े जीवाणुओं पर काबू पाने के लिए भी किया जा सकता है। विशेष रूप से, जीवाणु चिकित्सक उपकरणों एवं उपकला कोशिकाओं (epithelial tissues) की सतहों से चिपककर विकसित करना जारी रख सकते हैं लेकिन वे प्रतिजैविक दवाओं के प्रति असंवेदनशील हो जाते हैं। इसे जीवझिल्ली (biofilm) कहते हैं। यह भी प्रतिरोध का एक कारण है। यह जीवझिल्ली कई जीवाणु संक्रमण को कार्यान्वित करने में सक्षम होती हैं। यह उपचारों में आ रही विफलता का कारण होता जा रहा है। प्रतिजैविकों को ऐसे एजेंटों के साथ गठबंधन करने का प्रयास किया जा रहा है जो कि जीव झिल्ली को बनने से रोकने एवं उनकी प्रतिजैविक असंवेदनशीलता को खत्म करने में कारगर हों। इनमें से कुछ में *इन–विट्रो* में काफी शक्तिशाली प्रभाव देखने को मिले हैं जोकि नैदानिक दृष्टिकोण से मूल्यांकन के योग्य हैं।

9.4. डाह–विरोधी रणनीतियाँ (Antivirulence Stategies):– प्रतिजैविक प्रतिरोध की एक चुनौती होने का कारण कोशिका मृत्यु में विकासवादी अड़चन भी है। एक वैकल्पिक संकेतन बैक्टीरिया को ना मारकर, बल्कि संक्रमण की स्थापना करने के लिए उसकी क्षमता को क्षीण करना भी हो सकता है। यह डाह विरोधी रणनीतियां रोगाणुओं की संख्या स्क्रीन करने के लिए और डाह निर्धारकों (Virulence determinants) की पहचान करने के लिए आनुवंशिक सहायता प्राप्त करती हैं। सैद्धान्तिक रूप से ऐसे डाह लक्ष्यों के डाहविरोधी एजेंटों द्वारा चयन होने का खतरा कम होता है। डाह लक्ष्यों के अलावा कोरम संवेदन, (Quorum sensing) प्रकार 3 स्राव सिस्टम (type 3 Secretion System) , विषाक्त पदार्थ (toxins), और ग्लाइकोलिपिड सतह संरचनाओं के जैवसंश्लेषण भी होते हैं। कोरम संवेदन, बैक्टीरिया द्वारा छोटे अणुओं के उत्पादन को संदर्भित करता है जोकि विभिन्न स्वयंविप्रेरक (auto inducer) के रूप में कार्य करने वाले उच्च सेल घनत्व में सेलुलर कारकों के रूप में जाने जाते हैं। यह यौगिक,जैसे कि होमोसिरीन लेक्टोन्स ग्राम निगेटिव जीवाणु द्वारा उत्पादित किए जाते हैं। जबकि ग्राम पॉजिटिव जीवों द्वारा छोटे पेप्टाइड का उत्पादन होता है जोकि जीवझिल्ली के निर्माणकारक होते हैं। कोरम संवेदन का निषेध इस प्रक्रिया को बाधित करता है । ऐसे कई निरोधात्मक यौगिकों की पहचान की गयी है जोकि *पी०एरुजीनोसा* (*P-aeruginosa*) और *एस०ऑरियस* (*S-aureus*) में डाह और कोरम संवेदन में बाधक प्रतीत हुये हैं। ऊतक की जीवाणु आबादी संक्रमण एवम् हस्तक्षेप की स्थापना के लिए आवश्यक है जोकि डाह विरोधी यौगिकों के लिए एक उच्च गुणवत्ता वाले लक्ष्य हैं। ग्लाइको लिपिड सतह संरचनाओं के उत्पादन का विघटन ग्राम पॉजिटिव बैक्टीरिया में रोगजनकों और लाइपोटीकोइक एसिड ग्राम निगेटिव में लाइपोपाली सेकेराइड रूप ग्लाइकोलिपिड (glycolipid) सतह के उत्पादन का विघटन, एक अच्छी विरोधी डाह रणनीति है।

9.5. जैव चिकित्सा विज्ञान नाकाम होती हुई प्रतिजैविक दवाओं की खोज पर बढ़ती चिंता के साथ विकल्प की जांच करने के प्रयास कार्य प्रगति पर है। चिकित्सा विज्ञान वर्ग में अणु दवाओं (molecule drugs) के जैविक चिकित्सा में उल्लेखनीय प्रभाव देखे जा रहे हैं। इसलिए यह प्रतिजैविक दवाओं के क्षेत्र में तेजी से उभरता हुआ विकल्प माना जा रहा है।

अतः प्रतिजैविक दवाओं एवं प्रतिरोधी जीनों की उच्च सांद्रता (high Concentrations) की प्राकृतिक परि स्थितिक तंत्र में रिहाई के विकासवादी मामले हाल में सामने आते जा रहे हैं। दोनों ही प्रकार के

प्रदूषण,जीवाणु आबादी के ढांचे एवं उनकी गतिविधि को प्रभावित कर सकते हैं। पर्यावरण में सूक्ष्मजीव,मानव रोगजनकों द्वारा क्षैतिज जीन स्थानांतरण के माध्यम से हासिल प्रतिरोध जीनों का मूल स्त्रोत हैं। यह परिवर्तन मानव स्वास्थ्य के भविष्य के लिए प्रासंगिक हैं। यह सूचित किया गया है कि, वही प्रतिजैविक प्रतिरोधक जीन एवं वह ही आनुवांशिक मापदंड (प्लास्मिड, इंटीग्रान.....), मानव रोगजनकों में वर्तमान में भी मौजूद हैं जोकि प्राचीन वातावरण में मानव और जानवरों की आबादी में प्रतिजैविक दवाओं के साथ संपर्क में कभी नहीं लाये गए। इससे यह इंगित है कि एक बार प्रतिजैविक प्रतिरोध जीन सफल जीन संचरण तत्वों में एकीकृत हो जाए तो, प्रतिजैविक दवाओं के अभाव में भी फैलना जारी रख सकते हैं । उपलब्ध आंकड़ों से इस धारणा का समर्थन हुआ है कि चिकित्सा के अलावा अन्य प्रयोजनों के लिए प्रतिजैविक दवाओं के उपयोग मनुष्यों को संक्रमित करने में सक्षम प्रतिरोधी जीवाणु की आबादी को समृद्ध कर सकते हैं। राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों से इन आंकड़ों की उपलब्धता प्रतिजैविक दवाओं के स्राव के साथ जुड़े जोखिम के मूल्यांकन की मांग करते हैं जैसा कि विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) द्वारा बताया गया है। अलग कवम प्रतिजैविक प्रतिरोधक जीनों के प्रदूषण के प्रभाव को कम करने के लिए लिये जा सकते हैं। गैर चिकित्सीय उद्देश्यों में प्रतिजैविक दवाओं के विवेकपूर्ण उपयोग की जरूरत है। प्रतिजैविक संदूषण के प्रभाव में कमी के लिए अपशिष्ट उपचार विधियों के कार्यान्वयन की आवश्यकता है जो कि इन जहरीले यौगिकों के पतन के पक्ष में है। प्रतिरोध जीनों के संबंध में, स्थिति की जटिलता यह है कि वे नष्ट होने योग्य नहीं है बल्कि स्वयं प्रतिकृति करने की क्षमता रखते हैं। प्रतिरोध की व्यापकता में कमी प्रतिजैविक की असतता स्वयं की प्रतिकृति के बाद भी सूचित की गयी है, हालांकि, कुछ आंकड़ों से यह भी संकेत मिलता है कि अपने पिछले प्रतिजैविक अतिसंवेदनशील स्थिति के लिए जनसंख्या की कुल बहाली की संभावना न के बराबर हो चुकी है । प्रतिरोध जीनों की रोकथाम के लिए अथवा प्रतिजैविक के प्रभाव को कम करने के लिए जितना संभव हो सके मानव बद्ध एवं पर्यावरण जीवाणु के संपर्क का परहेज किया जाना चाहिए। नयी प्रतिजैविक दवाओं की खोज एवं विकास के लिए एक नये सतत् वैश्विक मॉडल की आवश्यकता है, जिसमें निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र साझेदारी में काम करें और वैज्ञानिकों द्वरा प्रतिजैविक दवाओं की खोज में अवरोध की कार्यवाही के नए तंत्र को शिक्षा के साथ, एवं प्रमुख दवा कंपनियों के बीच सहयोग के साथ हल किया जाए। राष्ट्रीय कार्य बल जिसमे एक व्यापक समन्वय हो और अंर्तक्षेत्रीय सभी प्रासंगिक हितधारकों के साथ सरकार के जनादेश सहित भूमिका निभाई जाने की आवश्यकता है। कार्यबलों को वार्षिक कार्य योजना एवं विनियमन, संक्रमण नियंत्रण के उपाय, उपचार के दिशा निर्देशों, शिक्षा और जागरूकता के विभिन्न क्षेत्रों में कदम उठाने चाहिए। स्वास्थ्य पेशेवरों और विश्वविद्यालय के शिक्षाविदों की भी प्रतिजैविक प्रतिरोध के विरुद्ध जागरूकता फैलाने में एक महत्वपूर्ण एवं उत्प्रेरक भूमिका है जिसे समुदाय के नेतृत्व, नागरिक समाज संगठनों और छात्रों के साथ संलग्न करना चाहिए क्योंकि प्रतिजैविक प्रभावशीलता में आयी कमी की तेजी से नुकसान की वजह से सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए गंभीर खतरा खड़ा हो गया है जिसके लिए वैश्विक ठोस कार्रवाई की आवश्यकता है।

खाद्य पदार्थों में मिलार्ड अभिक्रिया के परिणाम

रिंकेश कुमार गुप्ता एवं प्रेमेन्द्र धर द्विवेदी

खाद्य विषविज्ञान प्रभाग, खाद्य, औषधि एवं रसायन विषविज्ञान विभाग
सी.एस.आई.आर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
विषविज्ञान भवन, 31 महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ, 226001, उत्तर प्रदेश, भारत

पृष्ठभूमि

भोजन पकाते समय भोजन के विभिन्न घटकों में अनेक प्रकार की रसायनिक क्रियाएँ होती हैं जो भोजन के स्वाद, संरचना तथा रंग को बदलने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इनमें से मिलार्ड अभिक्रिया एक प्रमुख स्वाद उत्पादक अभिक्रिया है, जिसे ब्राउनिंग क्रिया भी कहा जाता है, लेकिन अभी इसके बारे में सम्पूर्ण और अच्छा ज्ञान उपलब्ध नहीं है। प्रोटीनयुक्त खाद्य पदार्थ जैसे कि पका हुआ मांस, समुद्री भोजन और अन्य खाद्य पदार्थ मिलार्ड अभिक्रिया के द्वारा भूरे रंग में परिवर्तित हो जाते हैं। हालांकि, भोज्य पदार्थों का भूरा रंग मिलार्ड अभिक्रिया के अतिरिक्त अन्य क्रियाओं के फलस्वरूप भी होता है। मिलार्ड अभिक्रिया एक विशिष्ट तरीके से अमीनो एसिड और सरल शर्करा की पुर्नव्यवस्था द्वारा अनेक खाद्य पदार्थो में एक पिगमेंट बनाता है जो कि बाद में छल्लेनुमा संरचना में व्यवस्थित होकर प्रकाश को परावर्तित करता है और खाद्य को भूरा रंग प्रदान करता है। लगभग सभी प्रकार के खाद्य पदार्थों के पकने के दौरान मिलार्ड अभिक्रिया पाई जाती है। विभिन्न प्रकार के भोजनों में अलग अलग स्वाद और सुगंध का होना, अभिक्रिया में भाग लेने वाले सरल शर्करा और अमीनो एसिड के प्रकार पर निर्भर करता है।

मिलार्ड अभिक्रिया का नामकरण फ्रांसीसी वैज्ञानिक लुईस कैमिले मिलार्ड के नाम पर किया गया है जो उनकी पीएचडी थीसिस के हिस्से के रूप में, 1912 में "एमिनो एसिड की अपचायी शर्करा के साथ अध्ययन" के रूप में प्रकाशित हुई। मिलार्ड अभिक्रिया कोई सरल अभिक्रिया नहीं है, अपितु यह एक शर्करा और अमीनो एसिड के मध्य होने वाली जटिल अभिक्रिया है जो कि सामान्यतः उच्च तापमान पर होती है। इस अभिक्रिया के दौरान कई सारे अलग–अलग स्वाद यौगिक बनते हैं जो कि टूटकर कई अन्य नए स्वाद यौगिक बनाते हैं। विभिन्न भोज्य पदार्थों में मिलार्ड अभिक्रिया के दौरान भिन्न भिन्न प्रकार के स्वाद यौगिक निर्मित होते हैं। लगभग सभी खाद्य पदार्थों के प्रसंस्करण, जैसे बेकिंग, फ्राइंग तथा हीटिंग आदि के दौरान होने वाली अभिक्रियाओं में से मिलार्ड अभिक्रिया सबसे महत्वपूर्ण अभिक्रिया है। मिलार्ड अभिक्रिया डबल रोटी, कुकीज, केक, मांस, बियर, चॉकलेट, पॉपकॉर्न और पके हुए चावल के स्वाद के लिए (आंशिक रूप से) उत्तरदायी है। मिलार्ड अभिक्रिया की दर दो प्रमुख कारकों, सूखापन और तापमान पर निर्भर करती है। उच्च तापमान पर खाना पकाने से मिलार्ड अभिक्रिया की दर बढ़ जाती है क्योंकि उच्च ताप पर पानी का वाष्पीकरण हो जाता है जिससे अभिकारक यौगिकों की सांद्रता बढ़ जाती है। प्रायः बड़ी शर्कराएँ, अमीनो एसिड के साथ बहुत धीरे धीरे अभिक्रिया करती हैं जबकि पाँच कार्बन वाली शर्कराएँ जैसे राइबोज, छह कार्बन वाली शर्कराएँ (ग्लूकोज, फ्रक्टोज) और डाइ सैकेराइड (चीनी, लैक्टोज) आदि अमीनो एसिड के साथ तेजी से अभिक्रिया करती हैं । इसलिए राइबोजयुक्त बीफ, पोर्क, सल्मन, चिकन और मशरूम ज्यादा ब्राउनिंग (भूरा) करते हैं जबकि राइबोज की तुलना में ग्लूकोजयुक्त शर्करा, पास्ता, अनाज और चावल कम ब्राउनिंग (भूरा) करता है। लैक्टोज (दूध में पाई जाने वाली शर्करा) ब्राउनिंग क्रिया में भाग नहीं लेती इस वजह से दूध भूरा होने की बजाय जलने लगता है। इसी तरह विभिन्न अमीनो एसिड में से लाइसीन अमीनो एसिड दो अमीनो ग्रुप होने की वजह से सबसे तेजी से अभिक्रिया करता है और गहरे रंग का कारण बनता है जबकि सिस्टीन, एक सल्फर समूह होने की वजह से कम रंग लेकिन विशिष्ट स्वाद का कारण

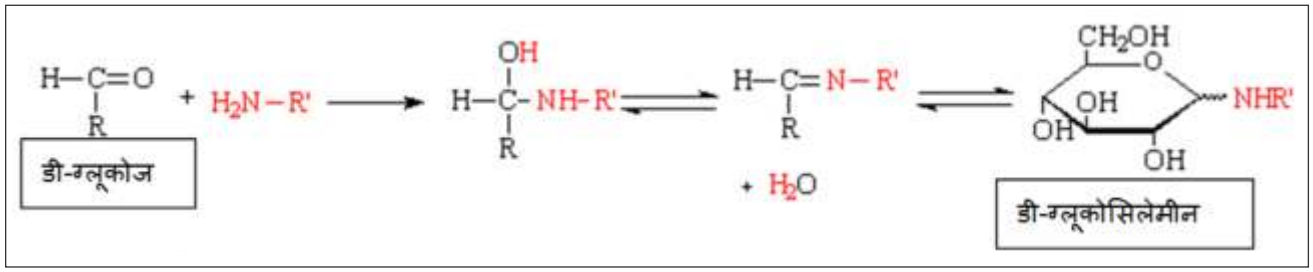

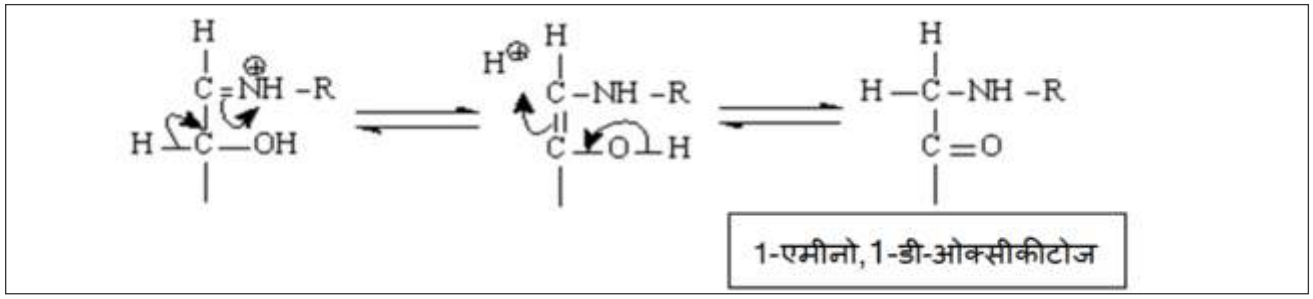

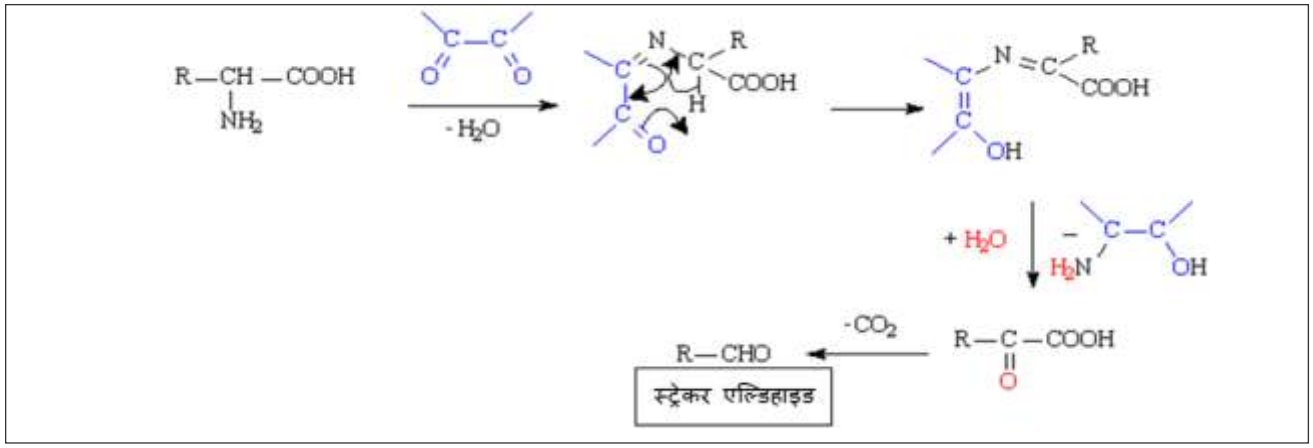

बनता है। एक तरफ खाद्य पदार्थों को प्रभावशाली बनाने लिए उनके रंग और स्वाद को मिलार्ड अभिक्रिया द्वारा बदला जाता हैं जबकि दूसरी तरफ यह अभिक्रिया किसी भी भोज्य पदार्थ की पौष्टिकता को कम कर सकता है क्यूँकि इस दौरान अमीनो एसिड और शर्करा की परस्पर रसायनिक क्रिया होने के कारण भोजन में इनकी कमी हो जाती है।

मिलार्ड अभिक्रिया से बनने वाले उत्पादः

मिलार्ड अभिक्रिया के फलस्वरूप विभिन्न उत्पाद बनते हैं जो खाद्य पदार्थों में रंग और स्वाद के लिए जिम्मेदार होते हैं। मिलार्ड अभिक्रिया के कुछ मुख्य उत्पाद निम्नलिखित हैं–

1. दूध और चीनी से बनने वाला केरेमल।
2. टोस्ट का भूरा होना।
3. बियर, चॉकलेट, कॉफी, और मेपल सिरप के रंग।
4. टेनिनयुक्त उत्पाद।
5. भुने हुए मांस का स्वाद।
6. सूखे या गाढ़े दूध के रंग।
7. 6–एसिटाइल 1,2,3,4–टेट्राहइड्रोपाईरिडीन की वजह से पके हुए रोटी, पॉपकॉर्न में बिस्कुट या पटाखे की तरह की गंध।
8. 2–एसीटिल स–1–पायरोलीन युक्त चावल की विभिन्न खूशबूदार किस्में।

मिलार्ड रसायनिक अभिक्रिया

मिलार्ड अभिक्रिया एक प्रकार की अपचयी शर्करा और

रेखाचित्र 1. आहार में लिए गए मिलार्ड उत्पाद और मिलेनोइडीन एवं शरीर में बनने वाले एडवांस ग्लाइकेसन एवं प्रोडक्ट के मध्य सहभागिता

http://www.irnagesource.com

अमीनोयुक्त यौगिकों के मध्य होने वाली विकारहीन क्रिया है जिसमें सबसे पहले निर्मित अस्थायी यौगिक जैसे ग्लूकोसिलेमिन, परिवर्तित होकर एमाडोरी संयोजन के द्वारा स्थायी एमाडोरी यौगिक बनता है। हालांकि यह रासायनिक प्रक्रिया सामान्य ताप पर भी शुरू हो सकती है, किन्तु इसकी गति विभिन्न कारकों जैसे उच्च ताप, प्रकाश, धातु और क्षार की उपस्थिति के द्वारा बढ़ायी जा सकती है।

मिलार्ड अभिक्रिया मुख्यतः तीन चरणों में सम्पूर्ण होती है।

1. एन–ग्लूकोसाइड का बनना

2. एन–ग्लूकोसाइड के गठन के बाद अमोनियम आयन का गठन होता है जो कि आइसोमराइज होकर कीटोसामीन नामक यौगिक का निर्माण करता है। इस क्रिया को एमाडोरी पुर्नव्यवस्था कहा जाता है।

3. अंतिम चरण मे कीटोसामीन उत्पाद या तो निर्जलीकृत होकर रिडक्टोन और डीहाइड्रो रिडक्टोन या फिर कम श्रृंखला वाले हाइड्रोलिटिक विखंडन उत्पादों जैसे डाइएसिटिल,एसीटोल,पायरुवेल्देहाइड में परिवर्तित हो जाता है जो कि आगे जाकर स्ट्रेकर विखंडन के द्वारा उन्नत ग्लाइकेशन अंत उत्पाद बनाते हैं।

मिलार्ड अभिक्रिया का जैवअणुओं पर प्रभाव

जैसा कि हम सब जानते हैं कि प्रोटीन मानव शरीर के लिए आवश्यक पोषक तत्व है। ये शरीर के ऊतकों का निर्माण करते हैं, साथ ही साथ यह एक ईंधन के स्रोत के रूप में भी काम करते हैं। इसके अतिरिक्त प्रोटीन कुछ अंतर्निहित गुणधर्मों जैसे घुलनशीलता गुण, झागीय गुण और इमल्सीफाइंग गुण की वजह से व्यापक रूप से खाद्य उद्योग में उपयोग में लाए जाते है। यह विविध गुण दोनों आंतरिक (उदाहरण के लिए आणविक संरचना, संरचना) और बाह्य (जैसे तापमान, रसायनिक पर्यावरण, पीएच) कारकों पर निर्भर करते हैं। यह पाया गया है कि मिलार्ड अभिक्रिया के माध्यम से शर्करा को सहसंयोजक बंध द्वारा जोड़कर किसी भी प्रोटीन के क्रियाकलापों को और भी सुधारा जा सकता है। मिलार्ड अभिक्रिया द्वारा निम्नलिखित गुणों

को परिवर्तित कर प्रोटीन की कार्यप्रणाली को परिवर्तित किया जा सकता है।

1. प्रोटीन की बनावट और जमने के गुण में परिवर्तन द्वारा।

2. प्रोटीन क्रासलिंकिंग द्वारा।

3. इमल्सीफाइंग गुण द्वारा।

4. घुलनशीलता गुण द्वारा।

मिलार्ड अभिक्रिया की वजह से खाद्य पदार्थों में, प्रोटीन के अलावा फॉस्फोलिपिड्स में भी परिवर्तन हो सकता है जिसे कि स्वास्थ्य के लिए खतरा पैदा करने वाले एक और पहलू के रूप में देखा जा सकता है। भोज्य पदार्थो में अंतर्निहित फास्फोवसाओं में से केवल फास्फोटिडिलएथेनोलामाइन और फास्फोटिडिल सेरीन में मुक्त अमीनो समूह होने की वजह से इस अभिक्रिया के दौरान इन्हें परिवर्तित किया जा सकता है। आज तक प्रोटीन की तुलना में ग्लाइकेटेड फास्फोलिपिड्स का अध्ययन कम किया गया है। सर्वप्रथम बक्ला और उनके सहयोगियों ने लिपिड ऑक्सीकरण में ग्लाइकेशन की भूमिका निर्धारित करते हुए बताया कि प्रोटीन की तरह फास्फोटिडिलएथेनोलामाइन और फास्फोटिडिल सेरीन भी एडक्ट बना सकते हैं। तत्पश्चात, ग्लाइकेटेड अमीनो फॉस्फोलिपिड और उनके व्युत्पन्न (डेरिवेटिव) कई जैविक नमूनों में भी पाये गये है। इसके अतिरिक्त अंडे की जर्दी के पाउडर और लेसिथिन उत्पादों में फास्फोलिपिड से व्युत्पन्न एमाडोरी उत्पादों को संरचनात्मक रूप से निर्धारित किया गया है जो कि किसी खाद्य पदार्थ की पोषकता को भी प्रभावित कर सकते हैं। इसलिए किसी भी खाद्य पदार्थ मे एमाडोरी उत्पादों के स्तर को उस खाद्य के पोषक गुणों में कमी से संबन्धित माना जाता है। हाल ही में, विभिन्न खाद्य उत्पाद जैसे दूध पाउडर, क्रीम दूध, अति उच्च तापमान पर पकाया दूध और सोया के आटे में फॉस्फोलिपिड ग्लाइकेशन और ऑक्सीकरण उत्पादों की सूचना को प्रकाशित किया गया है। उपरोक्त तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि मिलार्ड अभिक्रिया के प्रत्येक जैवअणुओं पर प्रभाव को बारी–बारी और अलग से अध्ययन किया जाना चाहिए।

मिलार्ड अभिक्रिया और भोज्य पदार्थो की पोषकता

मिलार्ड अभिक्रिया के कारण किसी भी भोज्य पदार्थ के प्रोटीन से संबंधित पौष्टिक गुणों में कमी, संभावित विषाक्त और म्यूटाजेनिक यौगिकों का निर्माण भी हो सकता है जो कि खाद्य सुरक्षा के हिसाब से किसी खतरे से कम नहीं है। हमारे भोजन समूहों में से 50% से अधिक भोज्य पदार्थों की खपत से पहले उन्हें प्रसंस्करण की प्रक्रिया से गुजरना पड़ता हैं जिस दौरान कुछ अमीनो एसिड और शर्करा की हानि हो जाती है। बहुत से अध्ययनों के दौरान यह पाया गया है कि मिलार्ड अभिक्रिया, अमीनो अम्ल जैसे लाइसिन, आरजीनिन और हिस्टिडीन को व्युत्पन्न करती हैं जिससे इन अमीनो अम्लों से निर्मित प्रोटीन की जैव उपलब्धता कम हो जाती है। साथ ही साथ इस क्रिया के फलस्वरूप कुछ विटामिन्स की हानि भी होती है और इससे उत्पन्न पदार्थ सूक्ष्म पोषक तत्वों के साथ मिलकर पाचक विकरों को अवरुद्ध कर सकते हैं। मिलार्ड उत्पाद जैसे कि भूरा पिगमेंट (मिलाइनोइडीन), आंत में शर्करा के अवशोषण को भी अवरुद्ध कर सकता है। इसके अतिरिक्त ये पिगमेंट प्रोटीन के साथ मिलकर क्रासलिंक बनाते हैं। तत्कालीन हुए शोध के अनुसार यह पता चला है कि पके हुए मांस से उत्पन्न हीटरोसाइक्लिक एमीन का सेवन करने से कैंसर जैसा रोग हो सकता है। उदाहरण के लिए डाइकार्बोनिल यौगिक, मेथिलग्लाइआक्जल, डाइएसीटिल और ग्लाइआक्जल जैसे यौगिकों को उत्परिवर्तक के तौर पर पहचाना गया है जिसमें से मेथिलग्लाइआक्जल सर्वाधिक उत्परिवर्ती गुण प्रदर्शित करता है। जबकि फ्लेवोन्स और फ्लेवोनोइड्स को हीटरोसाइक्लिक एमीन को प्रतिरोधक की तरह पाया गया है। मिलार्ड क्रिया उत्पादों के उत्परिवर्ती गुणों पर रसायनिक क्रियाविधि का भी प्रभाव पड़ता है जैसे कि कीटोज शर्करा, एलडोज शर्करा की तुलना में अधिक उत्परिवर्ती गुण रखती है। खाद्य सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए,मिलार्ड अभिक्रिया से उत्परिवर्तकों का

निर्माण और निवारण एक खोज का विषय है। साथ ही साथ इन हानिकारक यौगिकों का मानव में कैंसर के होने से संबंध का अध्ययन करना भी आवश्यक है। अतः यह कहा जा सकता है कि भोज्य पदार्थों के प्रसंस्करण के दौरान पायी जाने वाली मिलार्ड अभिक्रिया से पोषक गुणों में कमी के साथ विषाक्तता भी उत्पन्न हो सकती है ।

आंत पर मिलार्ड उत्पाद और मिलाइनोईडिन का प्रभाव

मिलार्ड उत्पाद और मिलाइनोईडिन, रोज उचित मात्रा में आहार के द्वारा हमारी आहारनाल मे प्रवेश करते हैं परंतु इनके चयापचय से संबन्धित जानकारी अभी बहुत कम है। ये उत्पाद और मिलाइनोईडिन, पाचक विकरों व आंत में पाए जाने वाले जीवाणुओं के प्रभावों पर असर डाल सकते हैं। तले हुए ग्लूकोज–ग्लाइसिन के साथ 24 घंटे के लिए आंतीय जीवाणुओं को रखने पर उनकी संख्या मे वृद्धि होती है जो यह दर्शाता है कि आहारनाल मे उपस्थित जीवाणु अपनी वृद्धि के लिए मिलाइनोईडिन को ऊर्जा के स्रोत कि तरह उपयोग करते हैं। इसके अतिरिक्त जीवाणु आंत में बचे हुए मिलाइनोईडिन को छोटी श्रृंखला वाले वसीय अम्ल मे अपघटित करने की क्षमता भी रखते हैं। मिलाइनोईडिन और इसके अपघटन से बनने वाले यौगिकों का मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव अभी भी खोजे जाने की जरूरत है जबकि यह परिकल्पना दी गई है कि ये यौगिक उत्परिवर्तकों से जुड़कर इनके अवशोषण को रोकते हैं।

कई *इन विट्रो* और *इन वीवो* अध्ययनों से यह प्रमाणित किया गया है कि मिलार्ड अभिक्रिया से बनने वाले कुछ यौगिक एंटीआक्सीडेटिव गुण भी प्रदर्शित करते हैं जो कि शरीर में बनने वाले हानिकारक आक्सीकृत अणुओं या यौगिकों से सुरक्षा प्रदान करने में एक अहम भूमिका निभाते हैं। प्रायः एंटीआक्सीडेटिव गुणों का परीक्षण एंटीरेडिकल ऐसै और वसा आक्सीकरण के आधार पर किया जाता है। कई सारे अध्ययनों में यह पाया गया है कि मिलार्ड उत्पादों की वजह से खाद्य पदार्थों में वसा का आक्सीकरण कम या रूक जाता है। ग्लूकोज और लाइसिन को गरम करने से निर्मित क्रिया उत्पाद लिनोइक अम्ल, वसीय परआक्सीडेशन की प्रक्रिया को मंद करता है जबकि एंटीरेडिकल सक्रियता 30 मिनट बाद शुरू होती है। एंटीरेडिकल सक्रियता अभिक्रिया में भाग लेने वाले अभिकारकों के प्रकार पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए ग्लूकोज–प्रोलीन और ग्लूकोज–ग्लाइसिन से व्युत्पन्न मिलार्ड उत्पाद की तुलना में ग्लूकोज–लाइसिन और ग्लूकोज–आरजीनिन से बने उत्पाद ज्यादा एंटीरेडिकल सक्रियता प्रदर्शित करते हैं, जबकि ग्लूकोज–सिस्टीन द्वारा निर्मित क्रिया–उत्पाद अत्यधिक एंटीरेडिकल सामर्थ्य रखते है क्योंकि ये धातुओं को बाँधने की क्षमता रखते हैं। इसका एक और कारण यह भी है कि सिस्टीन अमीनो अम्लों में पाए जाने वाले सल्फहाइड्रिल समूह की वजह से इनकी सक्रियता बढ़ जाती है। अगर हम पांच कार्बन वाले शर्कराओं की बात करें तो राइबोज और अमीनो अम्लों से बने यौगिकों में ग्लूकोज की तुलना मे ज्यादा सक्रियता पाई जाती हैं। खाद्य मिलाइनोईडिन कम अणुभार वाले तत्वों से जुड़ने के बाद शुद्ध मिलाइनोईडिन की तुलना में ज्यादा स्केवेंजिंग सक्रियता प्रदर्शित करते हैं। अभी हुए अध्ययन से यह पता चला है कि काइटोसन–शर्करा से व्युत्पन्न नए यौगिक भी भोज्य पदार्थों में वसीय आक्सीडेशन को रोकते हैं। इसलिए यह कहा जा सकता है कि मिलार्ड अभिक्रिया औद्योगिक स्तर पर एंटीआक्सीडेंट यौगिकों के उत्पादन के लिए एक प्रभावशाली विधि हो सकती है।

मिलार्ड अभिक्रिया मे एक्रिलामाइड का बनना

हाल ही में हुई कई शोधों से स्पष्ट तौर पर यह कहा जा सकता है कि ऊष्मीय प्रोसेस्ड खाद्य पदार्थो में एक्रिलामाइड का स्तर बढ़ सकता है जो कि खाद्य सुरक्षा के लिहाज से एक खतरे कि घंटी के समान है क्योंकि एक्रिलामाइड एक तरह का न्यूरोटाक्सिक यौगिक होता है जिसकी एक निश्चित मात्रा से अधिक मात्रा शरीर में जाने से कई सारे भयावह परिणाम हो सकते हैं। एक्रिलामाइड को एक आनुवांशिक और जनकीय टॉक्सिन के तौर पर स्तनधारियों मे प्रमाणित किया गया है जिसमें उत्परिवर्ती और कार्सिनोजेनिक गुण होते हैं। सन 2002 में स्वीडीश राष्ट्रीय खाद्य

रेखाचित्र 2 : मिलार्ड अभिक्रिया के दौरान एक्रिलामाइड बनने की क्रियाविधि

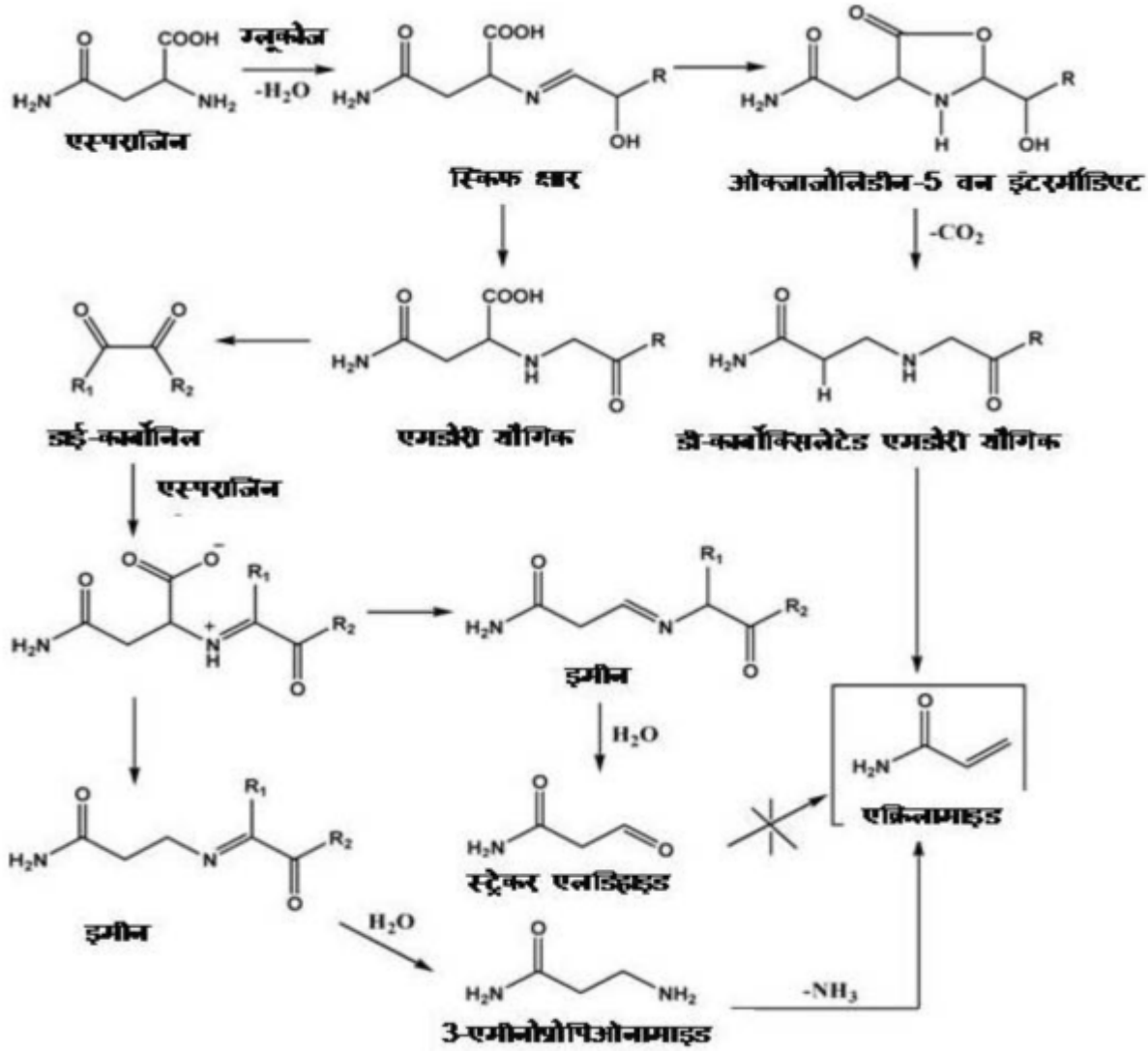

प्रशासन और स्टॉकहोल्म विश्वविद्यालय ने मिलकर आधिकारिक तौर पर यह एलान किया कि उच्च ताप पर प्रोसेस होने वाले कार्बोहाइड्रेट युक्त खाद्य पदार्थों में एक्रिलामाइड की उल्लेखनीय मात्रा पाई जा सकती है। इस तरह के परिणामों ने दुनियाभर का ध्यान अपनी तरफ आकर्षित किया और फलस्वरूप एक्रिलामाइड पर उपलब्ध सभी सूचनाओं की समीक्षा फिर से विश्व स्वास्थ्य संगठन (डबल्यूएचओ), और संयुक्त राष्ट्र संघ खाद्य के कृषि संगठन (एफएओ) ने की।

उसी दौरान यूरोपियन खोजकर्ताओं द्वारा एक शोध पत्र नेचर में प्रकाशित किया गया जिसमें पहली बार यह बताया गया था कि एक्रिलामाइड मिलार्ड अभिक्रिया का एक उत्पाद है। कुछ निश्चित खाद्य पदार्थों को पकाने के समय हो रही मिलार्ड अभिक्रिया में यदि एस्पराजिन भाग लेता है तो एक्रिलामाइड की सांद्रता बढ़ सकती है। साथ ही साथ मिलार्ड अभिक्रिया के दौरान एक्रिलामाइड बनने की क्रियाविधि को भी निष्कर्षित किया और यह पाया गया कि डाइकार्बोनिल उत्पाद की उपस्थिति में अमीनो अम्ल एस्पराजिन और मीथिओनिन के स्ट्रेकर विखंडन से एक्रिलामाइड निर्मित होता है। इसके अतिरिक्त, नये शोध द्वारा मे एक और क्रियाविधि को दर्शाते हुए बताया कि रिड्युसिंग शर्करा और कुछ निश्चित

अमीनो अम्ल के मध्य संघनन होने से सीधे तौर पर एक्रिलामाइड बनने की संभावना बढ़ जाती है। इन दोनों अध्ययनों के बाद आगे की क्रियाविधि के बारे में भी शोधकर्ताओं ने बहुत सारे लेख प्रकाशित किए हैं।

इस मद्देनजर दुनिया भर में हुई शोधों मे खाद्य पदार्थों में पाए गए एक्रिलामाइड और इसके मानव शरीर पर खतरे ने इसे एक वैश्विक समस्या की तरह उजागर किया। एक्रिलामाइड को इंटेरनेशनल एजेंसी फॉर रिसर्च ऑन कैंसर ने एक संभावित कार्सिनोजेन की तरह वर्गीकृत किया और संभावना जताई कि उच्च स्तर पर इसका शरीर में अंतर्ग्रहण होने पर तंत्रिका तंत्र को नुकसान हो सकता है। एक्रिलामाइड को इन वीवो और इन विट्रो तंत्र मे रीप्रोडक्टिव टॉक्सिन की तरह भी समझा जाता है जो कि एक म्यूटाजन और कार्सिनोजन की तरह भी काम करता है। सन 2005 में डबल्यूएचओ और एफएओ ने साथ मिलकर यह बताया कि कुछ निश्चित उच्च ताप पर प्रोसेस और पके हुए खाद्य पदार्थ मुख्यतः वेस्टर्न स्टाइल स्नेक्स में उचित मात्रा मे एक्रिलामाइड हो सकता है जो कि शरीर पर बुरा प्रभाव डाल सकता है।

एक्रिलामाइड गठन के अध्ययन के लिए आदर्श खाद्य पदार्थ

गत वर्षों के दौरान, एस्पराजिन–कार्बोहाइड्रेट मॉडल में एक्रिलामाइड का गठन लगभग स्पष्ट हो चुका है लेकिन वास्तव में, एक्रिलामाइड के गठन को खाद्य मेट्रिसेस भी प्रभावित करते हैं। इस तरह के खाद्य मॉडल जैसे कि आलू, अनाज, रोटी, बादाम, कॉफी सहित कुछ मेट्रिसेस में एक्रिलामाइड गठन को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन नियमित अंतराल पर किया जा रहा है जिस पर प्रकाश डालने कि कोशिश की गई है।

आलू

आलू कंद में महत्वपूर्ण एक्रिलामाइड प्रीकर्सर अर्थात मुक्त एस्पराजिन, ग्लूकोज, और फ्रुक्टोज की मात्रा होती हैं जिसकी वजह से आलू और उसके उत्पादों में एक्रिलामाइड बनने की संभावना व सांद्रता उच्च होती है। एक अध्ययन के अनुसार आलू की फसल को 4°C पर 15 दिन के लिए संग्रहित रखने पर शर्करा की सांद्रता में 80 से 2250 मिलीग्राम/किलो की वृद्धि देखी गई । तत्पश्चात उस आलू को 120°C पर प्रोसेस करने से एक्रिलामाइड गठन की क्षमता 28 गुना बढ़ जाती है।

वर्तमान में फ्रेंच फ्राइज, जो की एक आलू से बना पसंदीदा प्रोसेस्ड फूड है, एक्रिलामाइड का एक प्राथमिक स्रोत है जिसकी यथोचित संभव न्यूनतम मात्रा निर्धारित करना स्वस्थ्य सुरक्षा के दृष्टिकोण से बहुत महत्वपूर्ण हैं। यद्यपि छोटे पैमाने पर और प्रयोगशाला परीक्षणों से यह पता चला है कि फ्रेंच फ्राइज में एक्रिलामाइड की मात्रा लगभग 100 माइक्रोग्राम/किलो से कम होती है । इसके अलावा, एक और अध्ययन के अनुसार फ्रेंच फ्राइज में निहित शर्करा और तापमान को नियंत्रित करके एक्रिलामाइड के स्तर को बहुत हद तक कम किया जा सकता है। इसी दिशा में शोधकर्ताओं को कार्य करते हुए ऐसी प्रोसेसिंग तकनीक विकसित करनी चाहिए जिससे एक्रिलामाइड की सांद्रता को नियंत्रित किया जा सके।

अनाज

अनाज आधारित खाद्य पदार्थों के तापीय उपचार के बाद उनमें एक्रिलामाइड के गठन की अत्यधिक संभावनाएं होती हैं तथा इन्हें एक्रिलामाइड का एक महत्वपूर्ण स्रोत माना जाता है। कुछ पश्चिमी देशों में गेहूं और राई दो महत्वपूर्ण दैनिक प्रधान खाद्य पदार्थ हैं। दो प्रीकरसर एक्रिलामाइड के रूप में मुक्त एस्पराजीन और रिड्युसिंग शर्करा के 0.15–0.4 ग्राम/किलो स्तर, गेहूं के आटे के 10 नमूनों में पाया। इसके अतिरिक्त ने सफेद गेहूं के आटे में इनका 0.17 ग्राम/किलो का स्तर पाया गया। इसी तरह ने राई और उससे बने उत्पादों में भी एक्रिलामाइड का स्तर मापा क्योंकि इसमें भी एक्रिलामाइड प्रीकरसर पहले से उचित मात्रा में मौजूद रहते हैं। इसलिए गेहूं और राई से बने हुए उत्पादों और खाद्य पदार्थों मे एक्रिलामाइड के स्तर पर पैनी निगाह रखनी चाहिए।

तालिका 1 : विभिन्न खाद्य एलर्जन की एलर्जेनिसिटी पर मिलार्ड अभिक्रिया का परिणाम।			
क्र. मांक	खाद्य एलर्जन	भाग लेने वाली शर्करा	ग्लाइकेसन का एलेर्जेनिसिटी पर परिणाम
1.	ओवा–एलब्यूमिन	3–डीआक्सीग्लूकोसोन (70 °C पर 1, 2 या 4 घंटे)	टी–सेल इम्यूनोजेनिसिटी और आईजीई का उत्पादन ↑
		मैनोज / ग्लूकोमेनन (55°C पर 72 घंटे)	क्लीनिकल लक्षण और स्पेसिफिक आईजीई का उत्पादन↑ टी–रेग सेल↓
		ग्लूकोज / गेलेक्टोमेनन (55°C पर 72 घंटे)	कोई प्रभाव नहीं
2.	अंडे की सफेदी	मैनोज (55°C पर 72 घंटे)	हिस्टामिन, एमएमसीपी, साइटोकाइन
3.	एरा एच 1 और एरा एच 3	ग्लूकोज / जाइलोज (100 °C पर 15 मिनट)	आईजीई बाइंडिंग क्षमता ↓
4.	फैग टी 3 (बकवीट)	वनस्पति पोलीसैकेराइड (3 दिन के लिए 70 °C पर या 15 मिनट के लिए 160 °C पर)	आईजीई आईजीजी बाइंडिंग क्षमता↓
5.	पटाईटिन (आलू)	गैलेक्टोज / गैलेक्टोसैकेराइड (48 °C पर 1 से 3 दिन)	इम्यूनोरिएक्टिविटी↑
		गैलेक्टन (48 °C पर 1 से 3 दिन)	इम्यूनोरिएक्टिविटी↓
6.	पैराएलब्यूमिन (कोड मछली)	ग्लूकोज (5, 12, 24 और 48 घंटे, 60 °C)	आईजीई बाइंडिंग क्षमता↑
	पैराएलब्यूमिन (ग्रास कार्प)	माल्टोज	आईजीई बाइंडिंग क्षमता
7.	मछली प्रोटीन	राइबोज (121 °C पर 72 घंटे)	हेकजोसामिनीडेज और हिस्टामिन स्रावण ↓
8.	बीटा–कोनग्लाइसिन	ग्लूकोज, गैलेक्टोज, माल्टोज लेक्टोज और डेक्स्ट्रेन (60°C पर 0 से 72घंटे)	आईजीई बाइंडिंग क्षमता ↓
9.	बकवीट प्रोटीन	डेक्स्ट्रेन (60 °C पर 2 सप्ताह)	आईजीई बाइंडिंग क्षमता↓

बादाम

बादाम भी एक्रिलामाइड के एक अन्य महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में जाना जाता है क्योंकि इसमे मुक्त एस्परजिन 2000–3000 मिलीग्राम / किलोग्राम की रेंज में जबकि ग्लूकोज व फ्रक्टोज 500–1300 मिलीग्राम / किलोग्राम और सुक्रोज 2500 से 5300 मिलीग्राम / किलोग्राम तक की रेंज मे पाया जाता है। फलस्वरूप, तले हुए बादाम मे एक्रिलामाइड का स्तर 260 से 1530 माइक्रोग्राम / किलोग्राम तक पाया गया। कमरे के ताप पर रखे हुए बादाम में एक्रिलामाइड का स्तर तले हुए बादाम की तुलना में कम पाया गया जिससे यह पता चलता है कि तलने की प्रक्रिया के समय का ताप एक्रिलामाइड के उच्च स्तर के लिए जिम्मेदार होता है।

कॉफी

अन्य खाद्य पदार्थ की तुलना में कॉफी को अपेक्षाकृत उच्च तापमान पर तैयार किया जाता है जिसकी वजह से एक्रिलामाइड बनने की एक से अधिक क्रियाविधि हो सकती है।

हरी कॉफी बीन्स में मुक्त एस्परजीन का स्तर समान्यतः 30–90 मिलीग्राम / 100 ग्राम होता है। दो अनुसंधान समूहों ने पाया कि बाजार में मिलने वाली कॉफी में एक्रिलामाइड स्थायी नहीं होते हैं इसलिए

उसके स्तर में भी विभिन्नता पायी जाती है। कमरे के तापमान पर संग्रहित कॉफी में एक्रिलामाइड का स्तर लगभग 40% से 60% कम पाया गया । दूसरी तरफ प्रयोगों में यह पाया गया है कि कॉफी की रोस्टिंग की प्रक्रिया के दौरान एक्रिलामाइड के स्तर में कमी होती जाती है। कॉफी में, रोस्टिंग की प्रक्रिया के प्रारम्भिक क्षणों में एक्रिलामाइड के स्तर में वृद्धि (7 मिलीग्राम) होती है जबकि समय और ताप बढ्ने के साथ साथ तेजी से गिरावट आ जाती है। नतीजन, कॉफी में एक्रिलामाइड के स्तर को कम करने और समन्वित रूप से गुणवत्ता बनाए रखने के लिए कोई उचित समाधान नहीं है क्योंकि व्यवहार में रोस्टिंग की प्रक्रिया में कोई विशेष बदलाव नहीं किया जा सकता।

मिलार्ड अभिक्रिया का खाद्य एलर्जी पर प्रभाव

अतिसंवेदनशील व्यक्तियों में खाद्य एलर्जी भोजन की वजह से उत्पन्न हुई एक असामान्य प्रतिक्रिया है जो कि शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली द्वारा शुरू होती है। अक्सर एलर्जी उत्पन्न करने वाले खाद्य पदार्थ उपयोग मे लाए जाने के पहले प्रोसेस किए जाते हैं जिसके दौरान इन खाद्य पदार्थो मे मिलार्ड अभिक्रिया की संभावना बढ़ जाती है। यह पाया गया है कि मिलार्ड अभिक्रिया किसी भी प्रोटीन की कार्यप्रणाली को ग्लाइकेशन के द्वारा प्रभावित कर सकती है। इसलिए कल्पना की जा सकती है कि यह क्रिया खाद्य प्रोटीन की संरचना और क्रियाकलाप दोनों को परिवर्तित करने की क्षमता रखती है। यदि हम खाद्य एलर्जन के संदर्भ मे बात करें तो कई अध्ययनों में अपेक्षानुरूप यह पाया गया है कि मिलार्ड अभिक्रिया खाद्य पदार्थों में उपस्थित एलर्जन की एलरजेनिसिटी को कम या ज्यादा कर सकती है जो कि अभिक्रिया में भाग लेने वाले रिड्यूसिंग शर्करा और एलरजेनिक प्रोटीन के प्रकार पर निर्भर करता है। इस धारणा के समर्थन के रूप में कुछ खाद्य एलर्जी के रोगियों से इस तथ्य का पता चला है कि केवल संग्रहीत या पकाये हुए खाद्य पदार्थ जैसे मछली, अखरोट और गेहूं के सेवन के बाद अतिसंवेदनशीलता उत्पन्न होती है जबकि इन्हीं खाद्य पदार्थों को कच्चे रूप में खाने से किसी प्रकार की अतिसंवेदनशील क्रिया नहीं होती। इसके अतिरिक्त विशेष रूप से प्राप्त हुए सबूतों से स्पष्ट हुआ है कि कुछ ग्लाइकेटेड संरचना जो एजीईएस (AGEs) या मिलार्ड उत्पाद के रूप मे जाने जाते हैं, प्रतिरक्षी एपिटोप्स की तरह कार्य करते हैं। खाद्य एलर्जी विशेष रूप से मानव शरीर में आईजीई (IgE) एंटीबॉडी द्वारा शुरू हुई एक असामान्य प्रक्रिया है जिसे हम टाइप वन प्रतिक्रिया भी कहते हैं। कई अध्ययनों में यह पाया गया है कि मिलार्ड अभिक्रिया के कारण खाद्य एलर्जन का ग्लाइकेशन होने की वजह से उस एलर्जन की आईजीई एंटीबॉडी से जुड़ने की क्षमता घट या बढ़ जाती है। फलस्वरूप उस एलर्जन की एलरजेनिसिटी प्रभावित होती है। ग्लाइकेशन के बाद बढ़ी हुई एलरजेनिसिटी की वजह या तो आईजीई एंटीबॉडी से जुड़ने कि अधिक सामर्थ्य या तो खाद्य प्रोटीन में नए एलर्जन का समावेश हटा है। विभिन्न खाद्य एलर्जन की एलर्जेनिसिटी के ऊपर मिलार्ड अभिक्रिया के पड़ने वाले परिणामों को एक सूचीबद्ध तरीके से इस लेख में दिखाया गया है जो खाद्य एलर्जी पर मिलार्ड अभिक्रिया के प्रभाव को स्पष्ट करता है।

सारांश

तदानुसार, भोजन की गुणवत्ता संदर्भ में, मिलार्ड अभिक्रिया से जुड़े कुछ अवांछनीय और कुछ वांछनीय तथ्य है, जिन पर खाद्य प्रसंस्करण के दौरान ध्यान में रखा जाना चाहिए। इसलिए खाद्य वैज्ञानिकों को ऐसी प्रसंस्करण तकनीकें विकसित करनी चाहिए जिनके द्वारा मिलार्ड अभिक्रिया में उत्पन्न होने वाले अनुकूल और प्रतिकूल प्रभावों के मध्य एक सामंजस्य स्थापित हो सके। साथ ही साथ मिलार्ड अभिक्रिया के प्रतिकूल प्रभावों को रोकने के लिए नए–नए प्राकृतिक यौगिक की खोज की जानी चाहिए जो कि इसकी क्रियाविधि को विशेष और नियंत्रित तरीके से अवरुद्ध कर सकें हालांकि, कुछ ऐसे यौगिक उदाहरण के लिए करसीटिन, ल्यूटीओलिन, रूटिन और नरिंजेनिन खोजे गए हैं जो कि मिलार्ड अभिक्रिया को या उसकी गति को अवरुद्ध करते हैं। खाद्य उद्योगों को बाकी पोषक तत्वों की तरह प्रोसेसिंग की शर्तों के बारे में भी उपभोक्ताओं को अवगत कराना चाहिए जिससे उससे संभावित किसी भी प्रकार के अतिसंवेदनाओं का आंकलन किया जा सके।

विश्लेषणात्मक रसायन में मानक पदार्थों का प्रयोग एवं महत्व

वी. तन्मया एवं राकेश कुमार

विश्लेषणात्मक रसायन प्रभाग, नियामक विषविज्ञान विभाग
सी.एस.आई.आर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
विषविज्ञान भवन, 31 महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ, 226001, उत्तर प्रदेश, भारत

प्रत्येक पदार्थ के गुण यहाँ तक कि हवा से लेकर हमारे व्यापार एवं निजी जीवन में उपयोग होने वाले सभी पदार्थ, प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से उनके रसायनिक संरचना पर निर्भर करते हैं। इन पदार्थों की उपयोगिता अथवा अनुपयोगिता उन पदार्थों में रसायनिक प्रजातियों की उपस्थित मात्रा अथवा अनुपस्थिति पर निर्भर करती है। कभी कभी ये पदार्थ इतनी कम मात्रा में उपस्थित होते हैं कि इनकी उपस्थिति का पता आसानी से नहीं लगाया जा सकता। इन अल्प मात्राओं का पता लगाने के लिए विशेष विधियों एवं आधुनिक उपकरणों को प्रयोग में लाया जाता है। ये आधुनिक उपकरण अपने आप किसी भी रसायन की पहचान एवं गणना नहीं कर सकते हैं। इन उपकरणों के द्वारा किसी रसायन के पहचान एवं मात्रा का पता लगाने के लिए जिस मुख्य रसायन की आवश्यकता होती है, उसे मानक निर्देश पदार्थ (Standard Reference Material)कहते हैं। इन उपकरणों से प्राप्त पदार्थों की रसायनिक संरचना एवं सही मात्रा के द्वारा ही पदार्थ एवं सामग्री की उपयोगिता निर्धारित की जाती है। किसी पदार्थ में उपस्थित रसायन की मात्रा वहाँ की राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय व्यवसायिक स्थिति पर आधारित है। विश्लेषणात्मक रसायन विज्ञान का लगभग सभी क्षेत्रों जैसे, फोरेंसिक विज्ञान, बायोएनालिसिस , चिकित्सा विज्ञान, पर्यावरण विज्ञान एवं सामग्री विश्लेषण में विशेष योगदान रहा है।

राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मानक संगठनों ने पदार्थों की विशेषताओं एवं गुणवत्ता को बनाए रखते हुये उनके विभिन्न उपयुक्त उपयोगों के लिए निर्देशों को निर्धारित किया है। किसी पदार्थ की उपयोगिता का पता लगाने के लिए उस पदार्थ के निश्चित लक्षणों का वर्णन करना आवश्यक है और यह विश्लेषणात्मक उपकरण और परीक्षण के तरीकों का सत्यापन एवं माप के गुणवत्ता नियंत्रण में निर्देश पदार्थों का प्रयोग करके ही प्राप्त की जा सकती है। मानक निर्देश पदार्थ के प्रयोग से माप की गुणवत्ता तो बढ़ती है, साथ ही ये राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मापन इकाई का पता लगाने की क्षमता को भी बढ़ाता है।

विश्लेषणात्मक रसायन विज्ञान में, विभिन्न तकनीकों जैसे गैस क्रोमैटोग्रॉफी (GC), हाइ परफॉर्मेंस लिक्विड क्रोमैटोग्राफी (HPLC), गैस क्रोमैटोग्राफी मास स्पेक्ट्रा– मास स्पेक्ट्रा (GCMS-MS), लिक्विड क्रोमैटोग्राफी मास स्पेक्ट्रा– मास स्पेक्ट्रा (LCMS-MS), पराबैंगनी विजिबल इन्फ्रा रेड (UV-VIS IR) एवं परमाणु अवशोषण स्पेक्ट्रोफोटोमीटर (AAS) का प्रयोग सूक्ष्म (ppm) एवं अतिसूक्ष्म (ppb) स्तरों पर पदार्थों की पहचान करने के लिए किया जाता है। हालांकि, ये उपकरण तुलनात्मक होते हैं, जो कि उपकरणों के अंशांकन वक्र (calibration curve) के आधार पर ही परिणाम देते हैं। किसी भी विश्लेषणात्मक प्रक्रिया में उपस्थित विशेष तत्व की विश्लेषणात्मक शिखर (peak) उसके सहवर्ती तत्वों पर निर्भर होती है। इसलिए, एक निश्चित सान्द्रता के मानक निर्देश पदार्थ घुलनशील अवस्था में नमूने के साथ ही उपकरण पर चलाए जाते हैं। तदोपरान्त उपकरण के द्वारा नमूने की अनुक्रिया की तुलना मानक निर्देशक द्रव्य द्वारा प्राप्त अनुक्रिया से करने पर उस रसायन की सही पहचान एवं मात्रा प्राप्त की जाती है।

अंतरराष्ट्रीय मानक संगठन (ISO) ने इस तरह के पदार्थों कों दो श्रेणियों में बाँटा है–

प्रथम निर्देश पदार्थ एवं द्वितीय प्रमाणित निर्देश पदार्थ, जो उपकरण एवं उपयोग में आने वाली सामग्री में

उपस्थित वांछिक एवं अवांछिक रसायनों की सही पहचान एवं मात्रा ज्ञात करने में की जाती है। उपयोग में आने वाले किसी भी पदार्थ की उपयुक्तता एवं उसमे उपस्थित रसायन की ठीक पहचान एवं उपकरणों का अंशांकन केवल प्रमाणित निर्देश पदार्थों से ही किया जा सकता है। प्रमाणित निर्देश पदार्थ का प्रयोग मापन की गुणवत्ता को बढ़ाता है तथा साथ ही साथ इन निर्देश पदार्थों को राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मापन पद्धति से अनुमार्गणीय तरीके से जोड़ता है। राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय प्रमाणन निकायों एवं विश्व व्यापार संगठन (वर्ल्ड ट्रेड आर्गेनाईजेशन) के अंतर्गत मापन अथवा अंशांकन प्रतिवेदन का वैश्विक स्वीकार हेतु प्रमाणित निर्देश पदार्थों का उपयोग अनिवार्य कर दिया गया है।

देखा जाये तो निर्देश पदार्थों का महत्व रसायनिक विश्लेषण एवं रोग–विषयक प्रयोगशालाओं में अधिक महत्व रखता है क्योंकि इनमें उपस्थित सभी उपकरणों द्वारा प्राप्त परिणाम सदैव उच्च कोटि के निर्देश पदार्थों से ही प्राप्त होते हैं। इन निर्देश पदार्थों का निर्माण कड़े विनिर्माण प्रक्रिया द्वारा किया जाता है, तथा ये प्रयोगशाला में उपयोग होने वाले अभिकर्मकों से भिन्न होते हैं, क्योंकि इनके साथ संलग्न प्रमाणपत्र उनकी शुद्धता को दर्शाता है। जब कभी भी किसी मापन की शुद्धता, यथार्थता एवं विश्वसनीयता बनाए रखनी होती है तो उस अवस्था में निर्देश पदार्थों की आवश्यकता अनिवार्य हो जाती है।

निर्देश पदार्थो के प्रकार

आईएलएसी ने निर्देश पदार्थो को निम्नलिखित पांच प्रकारों में विभक्त किया है :–

1. शुद्ध पदार्थ वे पदार्थ जिनकी शुद्धता एवं अशुद्धत्ता का मापन किया गया हो।
2. मानक विलयन (Standard solution) और गैस के मिश्रण जिनको भारात्मक विधि (gravimetrically) द्वारा तैयार किया गया हो।
3. मैट्रिक्स निर्देश पदार्थ (Matrix Reference material): जिनके अंदर उपस्थित मुख्य अल्प एवं सूक्ष्म रसायनिक तत्वों की गणना एक उच्च कोटि के मापन पद्धति से किया गया हो। उन्हें या तो उन पदार्थो से बनाया जाता है जिनमें वांछिक रसायन पहले से मौजूद हो, अथवा कृत्रिम रूप से इन रसायनों को पदार्थो में मिलाकर बनाया जाए।
4. भौतिक–रासायनिक निर्देश पदार्थ इस तरह के निर्देश पदार्थ गलनांक, श्यानता, ऑप्टिकल इत्यादि पदार्थों के चरित्रांकन के लिए उपयोग में लाये जाते हैं।
5. वस्तु या कलाकृतियों (reference objects or artifacts) हेतु निर्देश पदार्थ : इस तरह के निर्देश पदार्थ कुछ विशेष कार्यात्मक संपत्ति जैसे स्वाद, गंध, आक्टेन नंबर, फ्लैश बिंदु और कठोरता को बताने के लिए किया जाता है। इस तरह के पदार्थों का प्रयोग सूक्ष्मदर्शी जीवों एवं रेशा के नमूनों की पहचान के लिए भी किया जाता है।

प्रमाणित निर्देश पदार्थ (Certified Reference Material) : प्रमाणित निर्देश पदार्थ वो मानक निर्देश पदार्थ है, जिनकी एक या एक से अधिक गुणों की पहचान को मापन विद्या के तहत प्रमाणित किया गया हो एवं साथ ही साथ उस गुण के मूल्य की अनिश्चितता को भी दर्शाया गया हों।

प्रायः प्रमाणित निर्देश पदार्थ के प्रयोग को वरीयता दी जाती है, परंतु हमारे देश में इन पदार्थों की उपलब्धता बहुत ही कम है। दूसरी तरफ सभी रसायनिकों के मानक निर्देश पदार्थ व्यापक रूप से उपलब्ध हैं जोकि प्रमाणित निर्देश पदार्थों से इसलिए भिन्न है, क्योंकि ये अपने साथ पदार्थों के गुणों के मूल्यों का प्रमाणपत्र एवं उसकी अनिश्चितता मूल्यों के साथ नहीं रखते हैं।

मानक निर्देश पदार्थ या द्रव्य, प्रयोगशाला में निम्न प्रकार के होते हैं–

- प्राथमिक निर्देश पदार्थ (Primary reference material)
- माध्यमिक निर्देश पदार्थ (Secondary reference materials

- कार्यान्वित मानक पदार्थ (In-house or working reference materials)

इनकी अनिश्चितता का मूल्य प्रारम्भिक से कार्यान्वित पदार्थों के बढ़ने तक बढ़ता है, इसका तात्पर्य यह है, कि जब कभी भी प्राथमिक निर्देश पदार्थों को माध्यमिक या कार्यान्वित पदार्थों को बनाने के लिए उपयोग में लाते है, तो विभिन्न घटकों का अनिश्चितता की गणना में प्रभाव पड़ता है।

विश्लेषणात्मक प्रयोगशाला में विश्लेषणात्मक रसायनज्ञ को निर्देश पदार्थ की शुद्धता, स्थिरता एवं संगतता पर पूर्ण भरोसा होना चाहिए। उत्तम मानक निर्देश का उपयोग जब कभी भी विश्लेषणात्मक रसायन के उपयोग के लिए किया जाए तब निम्न बिन्दुओं पर अवश्य विचार करना चाहिए।

1) योग्य निर्देश पदार्थों का निरूपण एवं इनकी शुद्धता की पहचान पूर्ण रूप से मापन विधि द्वारा किया जाए।
2) माध्यमिक निर्देश पदार्थ बनाने हेतु सदैव अशंशोधित योग्य तुला, पिपेट्स एवं उचित काँच के सामान का ही उपयोग किया जाए।
3) यथार्थ तोलन विधि का प्रयोग किया जाए।
4) शुद्ध विलायक का प्रयोग करके सभी घटकों की अनुमार्गणीय गणना का हिसाब रखा जाना चाहिये।
5) सभी पदार्थों के पता लगाने की क्षमता होनी चाहिए।
6) अत्यधिक शुद्ध तनु विलायक एवं स्टेबलाइजर्स जोकि पदार्थों के अनुकूल हो, का प्रयोग किया जाए।
7) सत्यता एवं संगति का विश्लेषण
8) उपयुक्त पैकेजिंग एवं भंडारण
9) निर्देश पदार्थों की जीवनावधि का मूल्यांकन

विश्लेषणात्मक मानकों की प्राप्ति

प्रयोगशाला में विश्लेषणात्मक मानकों की प्राप्ति के साथ साथ उसकी संरचना की आवश्यकता शुरू हो जाती है। सभी प्राप्त विश्लेषणात्मक मानक अपने साथ प्रमाणपत्र रखते हो। प्रत्येक मानकों के लिए नाम, विशिष्ट पहचान संख्या, प्रतिशत शुद्धता, समूह नंबर, प्राप्ति की तारीख, समाप्ति की तारीख, भंडारण की स्थिति रजिस्टर पर अवश्य अंकित कर ली जानी चाहिए।

शुद्ध मानक पदार्थ का चरित्र चित्रण करना

प्रायः यह देखा गया है, कि विक्रेता से प्राप्त पदार्थ की शुद्धता उतनी नहीं होती है जितना उनके प्रमाणपत्र पर अंकित होता है। इस दशा में यह आवश्यक हो जाता है की सबसे पहले इनका चरित्र चित्रण करे और निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देकर इनकी सही शुद्धता प्रतिशत ज्ञात करें।

शुद्धता एवं अशुद्धता का आंकलन

अवशिष्टों की मात्रा का पहचान एवं आंकलन (नमी, अवशिष्ट विलायक, अकार्बनिक एवं कार्बनिक अवशिष्ट)

मुख्य यौगिकों की पहचान एवं सत्यापन

इन्हें हम निम्न उपकरणों के प्रयोग के द्वारा स्थापित कर सकते है

1) प्रोटोन एनएमआर
2) सी–13 एनएमआर
3) दूसरे नाभिकीय एनएमआर (FTIR)
4) ऑप्टिकल रोटेशन, डिफ्रेंशियल स्कैनिंग क्लोरीमिट्री (DSC), थर्मल ग्रेविमेट्रिक एनालिसिस (TGA)
5) प्रकाशित सहित्य संदर्भ पत्रिकाओं द्वारा तुलनात्मक अध्ययन
6) जीसीएमएस, एलसीएमएस, इत्यादि।

इन मानक पदार्थों की शुद्धता को ज्ञात प्रारंभिक करने के बाद प्रयोगशाला में इनको पुनः प्रारंभिक, माध्यमिक

एवं कार्यान्वित विलयन बनाने हेतु निम्न बातों का ध्यान रखते हुये उपयोग किया जाता है–

1) उच्च संवेदनशील तुला का प्रयोग' (4 या 5 दशमलव वाला विश्लेषणात्मक तुला)

2) अंश शोधन प्रमाणित काँच के सामान का प्रयोग

3) संग्रहित वातावरण

उच्च शुद्धता एवं ट्रेसेबल प्राथमिक मानकों का उपयोग अथवा उनकी अनुपस्थिति में माध्यमिक प्रयोगशाला योजना के तहत उस मानक के संदर्भ मान एवं अनिश्चितता को स्थापित करके उनका उपयोग किया जाना चाहिये। इसकी शुद्धता का प्रमाणीकरण प्रायः कम से कम दो अच्छी तरह से स्थापित विधियों जिनके पास उच्च परिशुद्धता के साथ–साथ प्रमाणित निर्देश पदार्थ भी हो अथवा अच्छी गुणवत्ता वाले प्राथमिक निर्देश पदार्थों का प्रयोग करके किया जा सकता है। विभिन्न क्रोमटोग्राफिक तकनीकों या एक ही क्रोमटोग्राफिक तकनीक जिसमे विभिन्न कालम (columns) का इस्तेमाल किया गया हो, दोनों के द्वारा प्राप्त परिणाम मे सिर्फ 0.5 % का अंतर मान्य है।

नोटः प्रत्येक शुद्ध ठोस निर्देश पदार्थ जो प्रयोगशाला मे मानक विलयन बनाने में काम में लाया जाता है उनमें प्रायः नमी की मात्रा का पता नहीं होता है, जिस कारण से सही सान्द्रता का विलयन नहीं बन पाता है, इसलिये सभी निर्देश पदार्थों में नमी की मात्रा को ज्ञात कर लेना चाहिए अथवा इन पदार्थों को पूर्ण रूप से नमी मुक्त करके प्रयोग करना चाहिए।

उपर्युक्त सारे निर्देश पदार्थों को हम पुनः दो भागों में विभक्त कर सकते हैं–

- अकार्बनिक
- कार्बनिक

अकार्बनिक मे मुख्यतः धातु के विलयन आते हैं, तथा कुछ अधातु के (ऋणात्मक विलयन जैसेः– क्लोराइड, फ्लोराइड, सल्फेट इत्यादि)

धातुओं का मिश्रणः– किसी भी धातु का मिश्रण बनाने के लिए जहाँ तक संभव हो शुद्ध धातुओं का प्रयोग ही शुरुआती सामग्री के रूप में करना चाहिए। धातुओं का प्रयोग स्टॉइकियोमेट्री, अवशिष्ट पानी और हाइड्रोस्कोपिक प्रकृति के साथ समस्याओं से बचने के लिए किया जा सकता है। धातुओं की शुद्धता के मापन के लिए निष्कर्ष परमाणु स्पेक्ट्रोस्कोपी, एक्स–रे विवर्तन विश्लेषण, स्कैनिंग इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी, और सतह क्षेत्र के विश्लेषण के लिए ब्रूनेअर एमेट्ट टेलेर (BLET) का उपयोग करते है, ताकि मौलिक संरचना एवं उस पदार्थ की संरचनात्मक विशेषता का अध्ययन किया जा सके।

यदि एक लवण का प्रयोग शुरुआती सामग्री के लिए किया जाना आवश्यक है तो, इनके अवशिष्ट जल हाइड्रोस्कोपिक संपत्ति, स्टॉइकियोमेट्री, धातु, गैर धातु और आयनिक दोष का व्यापक विश्लेषण करना अत्यंत आवश्यक है। आम तौर पर उच्च शुद्धता वाले लवणों में धातुओं की अपेक्षा अधिक अनिश्चितता होती है। धातुओं के शुद्धता एवं अशुद्धता का विश्लेषण प्रायः आईसीपी–ओइएस या आईसीपी–एमएस के साथ सम्मिलित लौ या हाइड्राइड पीढ़ी वाला ए ए एस का प्रयोग करके किया जाता है। इसके साथ ही साथ बहुत से आयनों का विश्लेषण आयन क्रोमैटोग्राफी (ion chromato-graphy) या वेट एनालिसिस के द्वारा भी किया जाता है।

धात्विक एवं ऋणात्मक विलयनों के संदर्भ में बहुत से प्रमाणित निर्देश पदार्थ उनके प्रमाणपत्र जिसमें उस पदार्थ की अनिश्चितता एवं उसकी जीवनावधि संलग्न हो, विभिन्न विक्रेताओं द्वारा उपलब्ध कराये जाते हैं, परंतु अकार्बनिक के संदर्भ में या तो प्रमाणित निर्देश पदार्थ विलयन रूपों में उपलब्ध नहीं है, यदि है तो बहुत सीमित जीवनावधि एवं उच्च लागत के साथ उपलब्ध है।

भारत मे सीएसआईआर–राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला (सीएसआईआर एनपीएल–नई दिल्ली) विभिन्न धातुओं एवं ऋणात्मक विलयनों के लिए प्रमाणित निर्देशक पदार्थ भारतीय निर्देशक द्रव्य (BND) के नाम से उपलब्ध करके एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जिसमें उस पदार्थ की जीवनावधि का प्रमाणपत्र एवं

अनिश्चितता संलग्न है। इस कार्यक्रम में 25 से भी ज्यादा सीएसआईआर एवं नॉन–सीएसआईआर सरकारी संस्थान सम्मिलित है।

स्वच्छ सामग्री पवित्रता कारकों में अनिश्चितता करने के लिए निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए:

निम्नलिखित कारकों को साफ मानकों की अनिश्चितता की गणना में ध्यान रखना चाहिए:

- अवशिष्ट जल विश्लेषण
- क्रोमैटोग्राफी पवित्रता
- अवशिष्ट विलायक विश्लेषण
- अकार्बनिक सामग्री विश्लेषण

विलायक अनुकूलता के बारे में विचार करने के तथ्य

- क्या लक्ष्य यौगिक अपेक्षित सान्द्रता मे विलेय है?
- समय के साथ या कम भंडारण तापमान में हो सकता है
- विश्लेषण में संगतता
- विलायक का क्रोमटोग्राम में हस्तक्षेपय यूवी कट–ऑफ, आधारभूत प्रभाव
- रिवर्स फेस एचपीएलसी (RP-HPLC) गैर ध्रुवीय विलयन प्रतिकूल के साथ अनुकूल नहीं।
- जीसी के साथ जल संगत नहीं
- विलायक स्थिरता

कार्बनिक निर्देशक पदार्थ विलयन के रूप में

सभी मानकों को भारात्मक रूप से ही तैयार करना चाहिए। विलायक चयन के लिए मापदंड प्रायः यौगिक की घुलनशीलता , डिटेक्टर सिस्टम के साथ गैर–अनुकूलता, माध्यम अस्थिरता, साधन विषाक्तता, आसान प्रबन्धन, अवशेषों ग्रेड की उपलब्धता शामिल है।

- विलायक संगतता के लिए दीर्घकालिक स्थिरता महत्वपूर्ण है।
- तुला का पर्यावरण एवं तोलने की विधि निर्देश पदार्थ की सटीकता को प्रभावित कर सकते हैं।
- विलयन बनाना– तोलने की शुद्धता

तोलने की शुद्धता प्रभावित हो सकती है

- चिमटे / हाथ के दस्ताने
- तुला संतुलन समय
- सैम्पल और विलायक तापमान
- परिवेश के तापमान
- कंपन
- हवा की आवाजाही

हवा का बहाव, तुला के आसपास का ढांचा, और अतिरिक्त कंपन बल पैन के संतुलन को एवं तुला की पुनरावर्तनीयता को प्रभावित कर सकते हैं। अतः तुला को एक स्थिर वातावरण वाले स्थान पर रखना चाहिए।

मैट्रिक्स पर आधारित प्रमाणित निर्देश पदार्थ

प्रमाणित निर्देश पदार्थों को बनाने की विधि का वर्णन ISO गाइड 34 में किया गया है, और आईएसओ गाइड 35 में और अधिक विस्तार में दिया गया है।

एक प्रमाणित निर्देश पदार्थ के उत्पादन में शामिल आम तौर पर आवश्यक सामान्य कदम हैं:

1) संग्रह या पदार्थों का संश्लेषण
2) सैंपल तैयार करना (रण्करूपण, स्थिरीकरण, बॉटलिंग आदि सहित)
3) एकरूपता परीक्षण
4) स्थिरता आंकलन
5) मूल्य निर्धारण ("लक्षण वर्णन" ISO REMCO के संदर्भ में)

इसके अलावा निर्देश पदार्थों की अनुकूलता का आंकलन करना भी महत्वपूर्ण हो सकता है, जो जैविक पदार्थों के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। मैट्रिक्स आधारित निर्देश पदार्थ व्यापक गुणवत्ता आश्वासन कार्यक्रम के तहत एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, वे गुणवत्ता मापन के कई पहलुओं के कार्यान्वयन के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में काम आते हैं, इसके साथ ही साथ मुख्य रूप से कैलिब्रेशन, माप अनिश्चितता, प्रशिक्षण और आंतरिक गुणवत्ता नियंत्रण, साथ ही बाहरी प्रवीणता परीक्षण या अंतर–प्रयोगशाला परीक्षण के आंकलन एवं सत्यापन के लिए काम आते हैं।

पात्र का चयन

फ्रिज में भी विलायक का वाष्पीकरण मुख्य रूप से गैर जलीय विलायक के साथ देखा गया है। विलायक की हानि मुख्यतः पात्र के प्रकार, उनकी मात्रा, भंडारण हालत और भंडारण की अवधि प्रकार पर निर्भर करती है। ऐसा देखा गया है कि सबसे कम नुकसान काँच के एंपुलों मे होता है, प्रिस्क्रिप्शन बोतलों में तदुपरान्त वाल्यूमेट्रिक फ्लास्क कार्बनिक विलायक के लिए केवल उच्च कोटी के काँच के पात्रों का प्रयोग करना ही उचित होता है।

मानक विलयनों का स्टॉक बनाना

कार्बनिक विश्लेषण के मानक विलयन स्टॉक को कार्बनिक मानकों के संदूषण से बचने के लिए हमेशा अलग मानक तैयारी क्षेत्र मे ही तैयार करना चाहिए। हर मानक स्टॉक पर कम से कम विश्लेषण का नाम, सान्द्रता एवं तैयारी की तारीख अंकित होना आवश्यक है।

सिद्धांत रूप में, कार्बनिक अवशेषों के मात्रात्मक विश्लेषण (क्रोमैटोग्राफिक विधि के द्वारा) के लिये डिटेक्टरों की रैखिक सीमा के इस्तेमाल के लिए एक मानक तुलना आधारित दृष्टिकोण को अपनाया जाता है, संदर्भ (मानक) समाधान एकाग्रता में थोड़ी सी भी अशुद्धि अत्यधिक अनिश्चित और भ्रामक परिणाम ला सकती है, विशेषतया जब माप पीपीबी एवं उप पीपीबी स्तरों पर किया जाता है।

इसलिए, मानक विलयनों को प्रत्येक कदम पर अत्यंत उच्च शुद्धता के साथ तैयार किया जाना चाहिए और सभी को दूषित होने से बचाना चाहिए। मानक पदार्थो को सीधे बनाना सम्भवतः सही नहीं हो सकता, इसलिए सबसे पहले सांद्र विलयन का स्टाक बनाना चाहिए, पुनः उसे काम में आने वाले मानकों को बनाने के लिए सान्द्र विलयनों में विलायक मिला कर तनु करके बनाया जाना चाहिए। निश्चित सान्द्रता को बनाए रखने के लिए, मानक पदार्थों को ग्रेविमेट्रिकली बनाया जाना चाहिए, एवं विलयन का भार वोल्यूमेट्रिक फ्लास्क सहित $25 \pm 2\ ^{0}C$ कक्ष तापमान पर दर्ज किया जाना चाहिए।

सांद्र विलयन का स्टॉक (A)

उदाहरण के लिए– कीटनाशक मानक का 10 मिलीग्राम तक भार ले लिया जाता है। अगर उस मानक की शुद्धता 100% से कम है तो एक सही राशि के लिए उच्च सटीकता वाली (5 स्थानों वाली) विश्लेषणात्मक तुला पर तौला जाता है तथा विलयन (1% toluene in n-hexane) एवं छोटी कीप की सहायता से 10 मिली. के अंशशोधित (calibrated) वाल्यूमेट्रिक फ्लास्क में पूर्णतः मिलाते हुए स्थानान्तरित किया जाता है।

मध्यवर्ती तनुकरण करना (B 100 पीपीएम का)

मिश्रित मानकों के साथ–साथ मध्यवर्ती तनुकरण को स्टॉक विलयन A से बनाया जाता है। स्टॉक A विलयन का 1 मि.ली. लेकर पुनः 10 मि.ली. के अंशशोधित (calibrated) वाल्यूमेट्रिक फ्लास्क में 2 मि.ली. की अंशशोधित कांच पिपेट की सहायता से स्थानांतरित करते है एवं एन हेक्सेन के साथ ऊपर बने निशान तक बना लेते हैं। इस तनु मिश्रण में 100 –ग्राम/मि.ग्रा. (100 पीपीएम) का विश्लेष्य उपस्थित होता है। इस प्रकार से विभिन्न विश्लेष्य/विश्लेषों के स्टॉक विलयन (A) की अपेक्षित मात्रा को 10 मि.ली. के वाल्यूमेट्रिक फ्लास्क में स्थानांतरित करके विलयन/विलयनों को तैयार किया जा सकता है।

मिश्रित मानक विलयन (C 1 पी पी एम का)

कार्बनिकों के मिश्रित विलयन को बनाने के लिए एक

50 मि.ली. के वाल्यूमेट्रिक फ्लास्क मे 100 पी पी एम के प्रत्येक कीटनाशक को मिला कर बनाया जाता है। प्रत्येक विश्लेष्य के 100 पी पी एम के विलयन–B से 0.5 मि.ली. को लेकर 50 मि.ली. के वाल्यूमेट्रिक फ्लास्क में काँच के पिपेट के द्वारा डाला जाता है एवं उसको उपर बने निशान तक एन–हेक्सेन के द्वारा भर दिया जाता है। परिणामस्वरूप बने विलयन में 1 –g (1 पी पी एम) का प्रत्येक कीटनाशक मिला होता है। कार्य करने हेतु 10 पीपीबी एवं 200 पीपीबी सान्द्रता के मानकों को बनाने के लिए मिश्रित मानक को उचित तरीके से पुनः तनु करके बनाया जाता है।

मौलिक समाधान के लिए मानक निर्देशक पदार्थों को बनानाः–मौलिक समाधान के लिए प्रमाणित मानक निर्देशों को बनाने के लिए मुख्यतः शुद्ध धातुओं/लवणों को अतिशुद्ध अम्ल या पानी में घोलकर बनाया जाता है। इन अतिशुद्ध पानी एवं अम्ल को उप आसवन विधि के द्वारा प्रयोगशाला में ही बनाया जाता है, या प्रतिष्ठित विक्रेताओं से प्राप्त किया जा सकता है। उप आसवन सान्द्रण विधि के बाद जल एवं अम्ल मे तत्वों के सान्द्र्ता <1 पीपीबी से भी कम हो जाती है, इसलिए मौलिक समाधान के लिए मानक निर्देश पदार्थों की तैयारी में इसका उपयोग विलयन के योगदान को कम करता है। मध्यवर्ती और काम में आने वाले मानकों की आवश्यक मात्रा का सांद्र मानक से लेकर दूसरे वाल्यूमेट्रिक फ्लास्क में उसी मात्रा को जल एवं अम्ल के द्वारा तनु मानकों में परिवर्तित किया जाता है। केवल अंशांकित कांच के सामान का इस्तेमाल ही किया जाना चाहिए।

भंडारण का ढंग स्वयं बनाए गए या फिर प्रमाणपत्र द्वारा सत्यापित विश्लेष्य की सांद्रता में विश्वास के लिए मानकों का भंडारण एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इ एम पी ए के साथ सहयोग से गहराई से किए गए अध्ययन के द्वारा दो सबसे महत्वपूर्ण जांच की गई।

1) तत्वों के मामले (एचडी–पीई) बोतलों से ट्रेस अशुद्धियों का निक्षालन देखा गया है, एवं 2% नाइट्रिक एसिड से इसको निक्षालन से बचाया जा सकता है।

2) बड़े पैमाने पर महत्वपूर्ण द्रव्यमान को वाष्पोत्सर्जन के द्वारा नुकसान से बचाने के लिए बोतलों को उनकी मूल पैकिंग में संग्रहित किया जाना आवश्यक है जब तक उसे उपयोग मे नहीं लाया जाता है। बोतल को अपने मूल पैक से हटा देने के बाद उसका वाष्पोत्सर्जन त्वरित दर से प्रारम्भ हो जाता है। एक बार बोतल खुलने के पश्चात इसको वाष्पोत्सर्जन से बचाने के लिए इसका भंडारण कम तापमान (4 ^{0}C) पर करना चाहिए।

नोटः पारा मानकों का भंडारण कभी भी एच डी पीई बोतलों में नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि उदासीन काँच के पात्रों में किया जाना चाहिए।

कार्बनिक विश्लेष्यः विश्लेषणात्मक मानकों का भंडारण

1. स्वच्छ मानकों को अनुशंसित तापमान पर एक अलग मानकों के फ्रीजर में रखा जाना चाहिए।
2. स्टॉक मानकों और तनु मिश्रित मानकों को रेफ्रिजरेटर या फ्रीजर में रखना चाहिए, जिस फ्रीज में नमूनों या इस्तेमाल में आने वाले अभिकर्मकों को न रखा गया हो।
3. स्टॉक मानकों एवं विलयनों का भंडारण वाल्यूमेट्रिक फ्लास्क में उसके वजन के साथ किया जाना चाहिए।
4. फ्रीजर और रेफ्रिजरेटर का प्रयोग नियंत्रित और मानकों के उपयोग उचित रिकॉर्ड के उपयोग के माध्यम से प्रलेखित किया जाना चाहिए।
5. फ्रिज तापमान की जाँच प्रत्येक कार्य दिवस में और डिजिटल थर्मामीटर पर पढ़ कर दर्ज की की जानी चाहिए।

ईपीए मैनुअल के अनुसार कीटनाशकों के विश्लेषणात्मक गुणवत्ता नियंत्रण और संबंधित यौगिकों आर्गेनोक्लोरीन/आर्गेनोफास्फोरस के मानक कीटनाशक विलयन कम से कम एक साल के लिए स्थिर रहते हैं। इन दस्तावेजों के अलावा, कुछ ऐसे साक्ष्य हैं, कि टालूइन और एसीटोन में उपस्थित

कीटनाशकों का एक बड़ा हिस्सा फ्रीजर में कम से कम 5 साल के लिए स्थिर रहता है, जब भंडारण एक कसकर बंद ग्लास कंटेनर में किया जाए (खाद्य पदार्थों एवं पोषण में कीटनाशकों के विश्लेष्यों का विश्लेषण एवं अवशेष विश्लेषण के लिए विधि सत्यापन और गुणवत्ता नियंत्रण)। इन सबूतों से यह पता चलता है कि विलायक की हानि एवं जल का प्रवेश कम से कम होना चाहिए। इसलिए सभी तथ्यों पर विचार करते हुये सभी तैयार मानक समाधानों को फ्रीजर में संरक्षित करना चाहिए जब वो उपयोग में नहीं है। इन मानकों को उपयोग करने से पहले नियंत्रित कमरे के तापमान ($25 \pm 2\,^{0}C$) में रखा जाता है, और फिर उनका भारात्मक वजन लेकर ही काम मे लाया जाता है, प्रायः इस स्थिति मे मात्रा के जगह वजन में विश्वास करते हैं। विलायक में हानि होने की दशा में विलायक डालकर क्षतिपूर्ति करते हैं। मानक निर्देश पदार्थों के प्रत्येक फ्लास्क का भार इस्तेमाल के पहले एवं बाद रजिस्टर में नोट कर लेते हैं।

इस विधि को सभी जैविक विश्लेष्यों के लिए प्रभावी होना पाया गया।

कार्य मानकों के इंटरमीडिएट जांच इन सभी चीजों का खयाल रखने के बावजूद, जिन मानकों का हम इस्तेमाल करते है, उनकी सान्द्रता में विश्वास बनाए रखने के लिए उनका भंडारण एवं व्यक्तिगत देखभाल बहुत आवश्यक है, क्योंकि वाष्पोत्सर्जन या मानकों के सम्मिश्रण से विलायक के नुकसान की संभावना हमेशा रहती है। इसीलिए मानकों की मध्यवर्ती जांच करना अत्यंत आवश्यक है। स्टॉक कार्बनिक/धातुओं आयनों के नए मानक विलयन जोकि कार्य करने के लिये बनाए गए है उनकी तुलना पुराने बने मानकों के साथ की जानी चाहिए। दोनों मानकों को 10 % सापेक्ष मानक विचलन (10% आरएसडी) के भीतर मेल खाना चाहिए। यदि दोनों मानक एक दूसरे से मेल नहीं खाते है, तो समस्या की पहचान और हल मानक परिमाणीकरण के लिए प्रयोग करने से पहले किया जाना चाहिए। एक नए स्टॉक के नए तनु विलयन को बनाने के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण अपनाना चाहिए और उसकी तुलना पुराने काम में लाये जा रहे मानकों से उसी उपकरण पर त्रुटि का पता लगाने के लिए किया जाना चाहिए। यदि कोई त्रुटि नहीं मिलती है, तब नए मानकों का प्रयोग करना चाहिए, और यदि वे आपस में नहीं मेल खाते तो एक तीसरा मानक बनाना चाहिए। जब भी संभव हो, इंजेक्शन को दोहराना चाहिए। मानक जाँच प्रक्रिया का प्रलेखन उचित लॉगबुक के माध्यम से रखा जाना चाहिए। सभी मानकों की क्रोमेटोग्राम्स और डाटा शीट जोकि पुराने और नए मानकों की तुलना और गणना मे अंतर को संकेत करता हो सुरक्षित रखा जाना चाहिए।

मैट्रिक्स पर आधारित प्रमाणित निर्देश पदार्थ

प्रमाणित निर्देश पदार्थों को बनाने की विधि का वर्णन आईएसओ गाइड 34 में किया गया है, और आईएसओ गाइड 35 में और अधिक विस्तार में दिया गया है।

एक प्रमाणित निर्देश पदार्थ के उत्पादन में शामिल आम तौर पर आवश्यक सामान्य कदम हैं:

1. संग्रह या पदार्थो का संश्लेषण
2. सैंपल तैयार करना (रण्करूपण स्थिरीकरण, बॉटलिंग आदि सहित)
3. एकरूपता परीक्षण
4. स्थिरता आंकलन
5. मूल्य निर्धारण ("लक्षण वर्णन" आईएसओ रेम्को के संदर्भ में)

इसके अलावा निर्देश पदार्थों की अनुकूलता का आंकलन करना भी जैविक पदार्थों के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। मैट्रिक्स आधारित निर्देश पदार्थ व्यापक गुणवत्ता आश्वासन कार्यक्रम के तहत एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, वे गुणवत्ता मापन के कई पहलुओं के कार्यान्वयन के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में काम आते हैं, इसके साथ ही साथ मुख्य रूप से कैलिब्रेशन, माप अनिश्चितता, प्रशिक्षण और आंतरिक गुणवत्ता नियंत्रण, साथ ही बाहरी प्रवीणता परीक्षण या अंतर– प्रयोगशाला परीक्षण के आंकलन एवं सत्यापन के लिए काम आते हैं।

भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान

(सीएसआईआर–आईआईटीआर), लखनऊ (भारत) वर्तमान में सी.एस.आई.आर.–राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला (भारत) के साथ सहयोग करके विलयन के रूप में व्यक्तिगत और मिश्रित कीटनाशक प्रमाणित संदर्भ सामग्री के विकास में लगी हुई है। भारतीय विष विज्ञान अनुसंधान संस्थान (सी.एस.आई.आर.– आई. आई.टी.आर.) भी पीटीबी, जर्मनी और सी.एस.आई. आर. – एनपीएल के सहयोग से एक परियोजना के तहत चाय में कीटनाशक के प्रमाणित निर्देश पदार्थों को बनाने की तैयारी पर काम कर रही है।

क्या आपका पानी आपके गुर्दे की बीमारियों का कारण है

रत्नाकर तिवारी, सिद्धार्थ गंगोपाध्याय एवं विकास श्रीवास्तव

विकासात्मक विषविज्ञान प्रभाग, प्रणाली विषविज्ञान विभाग
सी.एस.आई.आर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
विषविज्ञान भवन, 31 महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ, 226001, उत्तर प्रदेश, भारत

दीर्घकालीन (Chronic) बीमारियों के कारण विश्व में 60 प्रतिशत से ज्यादा लोगों की मौत हो रही है। इन बीमारियों का असर प्रमुखता से कम आयवर्ग वाले देशों मे दिखता है। बढ़ते हुए औद्योगीकरण और लोगों के शहरों की तरफ पलायन के कारण से ये समस्या विकट रूप ले रही हैं।

दीर्घकालीन रोगों में गुर्दे के रोग (Chronic kidney diseases) प्रमुख रोगों में से एक है। हर वर्ष इन रोगों के कारण कई लाख लोगों की मृत्यु होती है। अभी तक ये बीमारियाँ वयस्क लोगों में ही केंद्रित थी पर बढ़ते हुए प्रदूषण और जीवन शैली में बदलाव के कारण ये बीमारियाँ कम आयु वर्ग के लोगों में भी बढ़ रही हैं। गुर्दे की बीमारियाँ प्रति वर्ष पूरी दुनिया में होने वाली मौतों की बारहवीं प्रमुख वजह है। प्रायः गुर्दे की बीमारी से पीड़ित व्यक्ति की मृत्यु हृदयघात से होती है इसलिए गुर्दे की बीमारी से मृत्यु का पता कम चलता है। इस कारण गुर्दे की बीमारी से मरने वालो की संख्या और ज्यादा होने की संभावना है।

2006 में भारत में हुए एक अनुसंधान में पता चला है कि 17.4% से ज्यादा लोग गुर्दे की दीर्घकालीन बीमारियों से पीड़ित हैं। इनमें से 30% लोग मधुमेह और लगभग 60% लोग उच्च रक्त चाप की समस्या से भी ग्रस्त पाये गये। गुर्दे के रोगों से पीड़ित मरीजों में कई प्रकार के लक्षण जैसे, एनीमिया, मांसपेशियों में ऐंठन, वजन का कम होना, अवसाद आदि दिखाई दे सकते हैं। भारत में हर वर्ष करीब एक लाख नये दीर्घकालीन गुर्दा रोग से पीड़ित व्यक्ति पाये जा रहे हैं। भारत मे किए गए एक अनुसंधान के अनुसार सबसे ज्यादा दीर्घकालीन गुर्दा रोगी कानपुर (41.7%) और विशाखापट्नम (46.8%) में हैं। इन सभी रोगियों को डाइलिसिस या गुर्दा प्रत्यारोपण की जरूरत पड़ेगी। इस समय मौजूद सुविधाएँ इनमें से केवल 10% लोगों का इलाज कर पाने मे सक्षम हैं।

गुर्दा रोगियों की बढ़ती तादात की प्रमुख वजहों में रोग का देर से पता चलना भी एक प्रमुख कारण है। प्रारम्भिक समय में गुर्दे की बीमारी में पीड़ित व्यक्ति को पता ही नही चलता है क्योंकि तब उसको कोई समस्या (दर्द, ज्वर) नही होती है। गुर्दे की बीमारियों के प्रति लोगों की कम जागरूकता भी इसका एक प्रमुख कारण है। अधिकांश मरीज जब चिकित्सालय इलाज के लिए आते हैं, तब तक उनका गुर्दा 50% से ज्यादा खराब हो चुका होता है। खराब हो चुके गुर्दे का निदान नही किया जा सकता क्योंकि क्षय होने के उपरान्त रक्त को साफ करने वाले गुर्दे के केशिकागुच्छ (Glomerulus), साफ किए गए भाग को मूत्राशय तक ले जाने वाली तथा उसमें से आवश्यक लवणों तथा अन्य पदार्थो का पुनः अवशोषण करने वाली समीपस्थ (Proximal tubule) तथा दूरस्थ नलिकाओं (Distal tubules) का पुनः निर्माण नहीं हो पाता। प्रत्येक गुर्दे में लाखों की संख्या मे केशिकागुच्छ पाये जाते हैं, जब इनकी संख्या इतनी कम हो जाती है कि ये रक्त की सही प्रकार से सफाई नहीं कर पाती तब व्यक्ति को कई प्रकार की समस्याएँ होने लगती है। चिकित्सालय में मूत्र तथा गुर्दे की जांच करने के उपरान्त पीड़ित व्यक्ति को पता चलता है कि उसके गुर्दे खराब हो चुके हैं।

बच्चों में गुर्दे के रोगों का प्रचलन

वर्तमान समय में 12 वर्ष से कम उम्र के बच्चों में भी गुर्दा रोगों का प्रचलन बढ़ रहा है। बारंबार होने वाले मूत्र मार्ग में संक्रमण, मधुमेह और रक्त चाप का सही इलाज न हो पाने के कारण गुर्दे में स्थायी नुकसान हो सकता है, जो गुर्दे को धीरे धीरे पूरी तरह से खराब कर देता है। अगर हम बच्चों में गुर्दे रोगों का सही

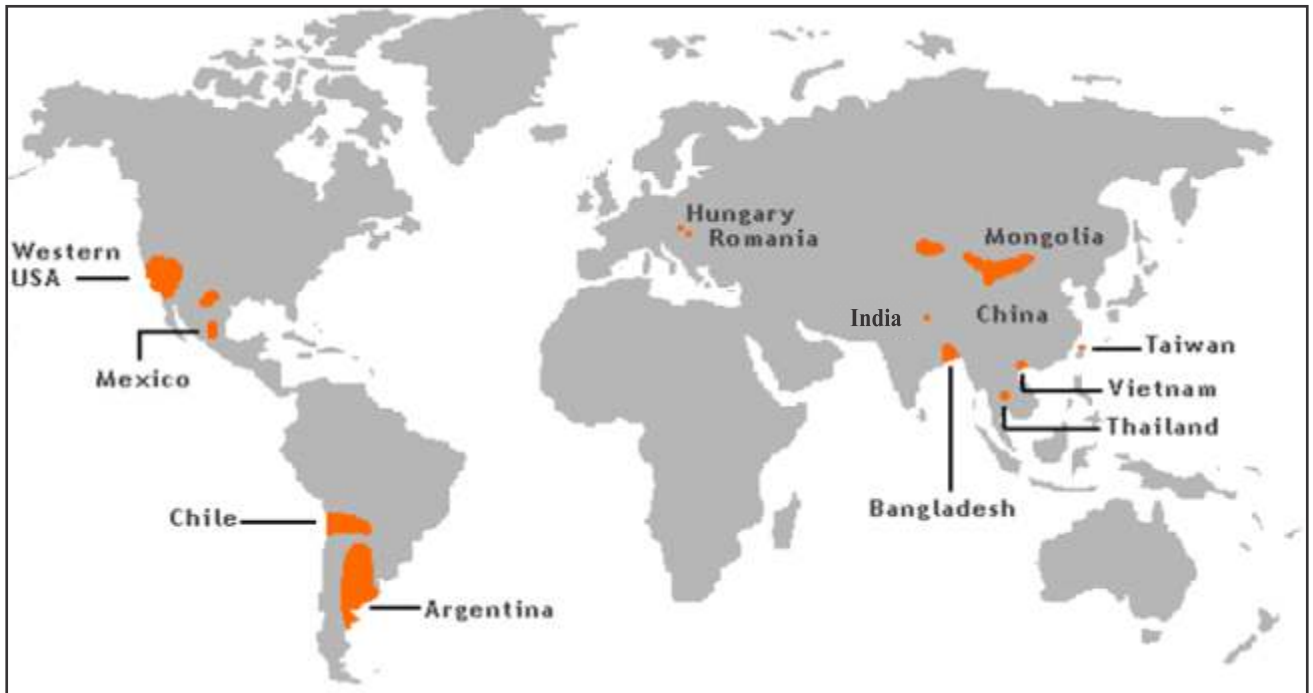

चित्र 1 : आर्सेनिक प्रभावित क्षेत्र (स्रोत : www.wikipedia.org)

समय पर पता लगा ले तो उनका पूरा इलाज संभव है, क्योंकि बच्चों के गुर्दे के विकास की प्रक्रिया क्रियाशील होती है। वयस्क व्यक्तियों में भी यदि प्रारम्भिक समय में पता चल सके तो दवाइयों के माध्यम से गुर्दे के रोगों से मुक्त हुआ जा सकता है।

गुर्दे के रोगों का इलाज

गुर्दे की विफलता के बाद उपलब्ध समाधान गुर्दे–प्रत्यारोपण या आजीवन डायलिसिस हैं। गुर्दा प्रत्यारोपण एक महँगा और जटिल समाधान है। इसमें स्वस्थ व्यक्ति के एक गुर्दे का मरीज में प्रत्यारोपण कर दिया जाता है। अतः इसमे एक गुर्दा दाता की आवश्यकता होती है जिसका मिलना आसान नहीं होता है। गुर्दा प्रत्यारोपण के उपरांत मूल्यवान प्रतिरक्षादमनकारी (Immunosuppressive) दवाओं की जीवनपर्यन्त आवश्यकता होती हैं। स्वभाव में प्रतिरक्षादमनकारी होने के कारण इन दवाओं का गंभीर दुष्प्रभाव भी होता है। अतः गुर्दा–प्रत्यारोपण, गुर्दा–रोगियों के लिए बहुत ही महँगा समाधान होता हैं, जो सामान्य आयवर्ग के व्यक्तियों के लिए संभव नहीं हैं। प्रत्यारोपण के लिए उपयुक्त दाता खोजने तथा चिकित्सालय में गुर्दा–प्रत्यारोपण के लिए मरीजों की लंबी सूची के कारण भी समय पर इलाज हो पाना मुश्किल होता है।

अन्य उपलब्ध उपायों जैसे डाइलिसिस (Dialysis) के लिए सप्ताह में दो–तीन बार चिकित्सालय जाना पड़ता हैं। डाइलिसिस प्रक्रिया गुर्दे के कार्य करने की प्रतिकृति होती हैं। इस प्रक्रिया में रक्त से अपशिष्ट पदार्थ, अधिक लवणों तथा पानी को रक्त से पृथक कर रक्त को सामान्य बनाकर पुनः रोगी के शरीर में पहुँचा दिया जाता है। डायलिसिस के दो प्रमुख प्रकार हैं, हीमोडायलिसिस और पेरिटोनियल डायलिसिस। यह शरीर में अनिवार्य लवण जैसे कैल्शियम, पोटेशियम और बाइकार्बनेट्स के सामान्य स्तर को बनाए रखने में मदद करता है। डायलिसिस भी एक महँगी प्रक्रिया जिसमें एक बार में लगभग तीन हजार से छः हजार रुपये का खर्च आता है अतः इसे भी जीवन पर्यंत कराना सामान्य आय के वर्ग के लिए संभव नही है। लंबे समय तक डायलिसिस करने से अन्य जटिलतायें भी आने लगती हैं, जैसे मरीज को आहार और पानी के सेवन को नियमित करना पड़ता है, उच्च रक्तचाप को नियंत्रित करने में भी कठिनाई

होने लगती है। इसीलिए डाइलिसिस प्रक्रिया का उपयोग करने वाले अधिकतर मरीज 5–10 वर्ष तक ही जीवित रहते हैं। अत्यधिक नियंत्रित आहार और उपचार के साथ, कुछ मामलों में रोगी 20 वर्ष तक जीवित रह सकते हैं। पीड़ित व्यक्ति कभी भी उसकी पूरी क्षमता और पूरी तरह से सामान्य जीवन जीने के लिए सक्षम नही होता है।

शरीर मे रक्त की सफाई के अलावा, गुर्दे हार्मोन का उत्पादन, रक्तचाप का नियंत्रण, नई रक्त कोशिकाओं का उत्पादन और विटामिन डी के उत्पादन में मदद करते हैं। गुर्दे की विफलता के बाद ये सभी प्रभावित होते हैं। इनके लिए अलग से दवाइयाँ लेनी पड़ती हैं।

भारी धातुएं और गुर्दा रोग

पर्यावरण में मौजूद विषैले पदार्थ भी गुर्दे के रोगों के विकास में एक प्रमुख भूमिका निभाते हैं। विशेष रूप से कारखाने, पेंट फैक्टरी और चमड़े के कारखाने में काम करने वाले व्यक्ति काफी प्रभावित होते हैं। धूम्रपान करने वाले लोगों में किए गए एक अध्ययन से इस बात कि पुष्टि हुई है कि धूम्रपान नहीं करने वाले लोगों की तुलना में धूम्रपान करने वाले लोगों के खून और बालों में कैडमियम और लेड की मात्रा काफी उच्च स्तर पर होती है। हालाँकि धूम्रपान और भारी धातुएं स्वयं गुर्दा रोगों का कारण नही होती, पर अन्य गुर्दे को नुकसान पहुंचाने वाले कारकों की उपस्थिति में गुर्दे की बीमारियाँ पैदा कर सकते हैं।

हमारी प्रयोगशाला में आर्सेनिक (As), पारा (Hg) और चाँदी (Ag) जैसी भारी धातुओं का गुर्दे पर दुष्प्रभाव पर अध्ययन हो रहा हैं। आर्सेनिक धीरे–धीरे भूमिगत जल में एकत्र होता रहता है। लंबी अवधि तक इस प्रक्रिया के चलने से आर्सेनिक की मात्रा भूमिगत जल में काफी अधिक बढ़ जाती है। भूमिगत जल जो पीने के पानी का एक प्राकृतिक स्रोत है और इसी के माध्यम से ये हमारे शरीर मे पहुँच जाता है। आर्सेनिक से प्रदूषित जल से खेतों में सिंचाई से आर्सेनिक मनुष्य द्वारा खायी जाने वाली फसलों में भी संचित हो जाता है। इन फसलों में चावल प्रमुख है। भारत में चावल कई प्रदेशों में प्रमुख आहार के रुप में उपयोग में लाया जाता है। हमारे देश में आर्सेनिक से सबसे ज्यादा प्रभावित प्रदेश बंगाल है। यहाँ के लोग खाने में मुख्य रूप से चावल तथा मछली का प्रयोग करते हैं। प्रदूषित पानी, चावल और मछली के सेवन से यहाँ के लोग आर्सेनिक के संपर्क में आते रहते हैं।

आर्सेनिक तथा पारा दोनों प्रदूषक गर्भावधि से लेकर जीवन के विभिन्न चरणों में गुर्दे पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। आर्सेनिक एक कैंसरजनक प्रदूषक है और यह विकासशील भ्रूण की कोशिकाओं के डीएनए (DNA) में उत्तपरिवर्तन कर देता है जिसके कारण विकासशील भ्रूण तथा जन्म के उपरान्त जीवन में बहुत प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं। आर्सेनिक प्रदूषित पानी पीने वाली महिलाओं से जन्मे बच्चों में गुर्दे रोगों की व्यापक्ता देखी गयी है। आर्सेनिक पाए जाने वाले प्रदेशों में रहने वाले लोगों में गुर्दे की बीमारियां अधिक पाई जाती हैं। बांग्लादेश, चीन, ताइवान, चिली और अर्जेंटीना के पीने के पानी में आर्सेनिक की अधिकता होने के कारण इन जगहों में यकृत, फेफड़े, मूत्राशय और गुर्दे जैसे आंतरिक अंगों के कैंसर की समस्याएं अधिक पायी जा रही हैं। आर्सेनिक प्रदूषित जगहों पर रहने वाले लोगों में फेफड़े के रोग, कैंसर और हृदय रोगों की मात्रा अधिक पाई गयी है जो बचपन से आर्सेनिक प्रदूषित पानी का सेवन करते हैं। हमारी प्रयोगशाला में चूहों पर आर्सेनिक, पारा तथा चाँदी के सूक्षतम कणों के प्रभाव के अध्ययन से यह ज्ञात हुआ है कि ये प्रदूषक गुर्दे को विभिन्न प्रकार से दुष्प्रभावित करते हैं।

पारा वातावरण में व्यापक रूप से पायी जाने वाली धातु है। यह प्राकृतिक रूप तथा अन्य चीजों जैसे बैटरी, कागज, रंग, इलेक्ट्रिकल/इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों, कृषि उत्पादों, दीपक, जीवाश्म ईंधन के दहन, स्वर्ण धातु के उत्पादन, सीमेंट उत्पादन, क्लोर–क्षार रासायनिक उद्योग, अपशिष्ट कार्बनिक पदार्थों के दहन और दाँतों के भरने के मिश्रण आदि में पायी जाती है। औद्योगिक क्षेत्र, विशेष रूप से रंग कारखानों और ताप विद्युत संयंत्रों के आसपास के क्षेत्रों में पीने के पानी में पारा तथा उसके यौगिकों की उपस्थिति अत्यधिक होती है।

पारा धातु के दो प्रमुख प्रकार हैः अकार्बनिक

पारा तथा कार्बनिक पारा

मरक्यूरिक क्लोराइड, मरक्यूरिक सल्फाइड़, मर्कुरस क्लोराइड अकार्बनिक पारे की श्रेणी में आने वाले यौगिक पदार्थ हैं। कार्बनिक पारे की श्रेणी में मरक्यूरिक ऐसीटेट, मेथिलमर्करिक क्लोराइड, डाइमेथिल मरक्यूरिक तथा फिनाएलमर्करिक ऐसीटेट आदि यौगिक पदार्थ आते हैं क्योंकि इन सभी पदार्थों में कार्बन तत्व आवश्यक रूप में मिला रहता है। वातावरण में पारे की मात्रा सूक्ष्मजीवों की सक्रियता तथा वातावरण में अकार्बनिक पारे की उपलब्धता पर निर्भर करती है। कार्बनिक पारा जन्तुओं के शरीर के विभिन्न ऊतकों में एकत्र होता रहता है तथा खाद्य श्रेणी के माध्यम से मनुष्यों तक अत्यधिक मात्रा में पहुँच जाता है।

विश्व में पारे की उपयोगिता के क्षेत्र तथा उनमें पारे की खपत

प्रायः पारा व्यावसायिक वातावरण से मनुष्य के संपर्क में आता है। पारा और अन्य पारे के अवयवों को रखने वाले दंतचिकित्सा उपकरणों और शल्यचिकित्सा के सामानों से भी मनुष्य पारे के संपर्क में आ जाता है। प्रायः पारा सर्वप्रथम मनुष्य के तंत्रिकातंत्र को नुकसान पहुँचाता है परन्तु पारे की सूक्ष्म मात्रा भी गर्भवती महिलाओं के संपर्क में आने से उनके गर्भ में पल रहे बच्चे के विकसित हो रहे विभिन्न अंगों को प्रभावित करता है। पारा के तत्काल हानिकारक प्रभाव ज्यादातर तंत्रिकातन्त्र पर प्रदर्शित होते हैं। तंत्रिकातंत्र तथा उत्सर्जन तंत्र सबसे गंभीर रूप से प्रभावित होने वाले तंत्र है। वयस्कों में पारे का संपर्क (मुख्य रूप से वाष्प के माध्यम से) उनके गुर्दे की केशिकागुच्छ तथा नलिकाओं को बुरी तरह प्रभावित कर सकता है जो गुर्दे की क्षति का प्रमुख कारण है। साँस लेने में कठिनाई, दौरे, चिड़चिड़ापन, कांपना, मतली , उच्च रक्तचाप, उल्टी और सीने में दर्द पारे की विषाक्तता के प्रमुख लक्षण हैं। लंबे समय तक पारे की सूक्ष्म मात्रा के संपर्क में आने से लोगों में सिरदर्द , कंपन, संज्ञानात्मक रोग, गुर्दे की विफलता और चकत्ते आदि लक्षण विकसित हो सकते है। पारा, विशेषतया अकार्बनिक पारा वातावरण में प्राकृतिक स्रोतों जैसे ज्वालामुखी उत्सर्जन और वाष्पीकरण से शामिल होता हैं। मनुष्य ने अपने कार्यो से वातावरण में पारे का उत्सर्जन दोगुना बड़ा दिया है। मेथिल मर्करी गुर्दों को नुकसान पहुचाने के साथ साथ कैंसर तथा डीएनए को भी नुकसान पहुँचाता है। मेथिलमर्करी तथा इसके अन्य कार्बनिक यौगिक मस्तिष्क और गुर्दे को स्थायी नुकसान पहुँचाते है (ATSDR1999)। पारे से तंत्रिका, पाचन और प्रतिरक्षा तंत्र और फेफड़े, गुर्दे, त्वचा और आंखों पर प्रतिकुल प्रभाव हो सकता है (डबल्यूएचओ 2013)। अकार्बनिक और कार्बनिक दोनों प्रकार के पारा के उच्चतम स्तर गुर्दे में पाए गए है। गुर्दे में पारे के दुष्प्रभाव अधिकांश तब प्रकट होते हैं जब मूत्र में पारे की मात्रा 50 माइक्रो ग्राम पर मिलीग्राम क्रिएटिनिन से अधिक हो जाती है। पारे के प्रभाव से मूत्र में प्रोटीन की वृद्धि से लेकर गुर्दे की विफलता तक देखे गए है (डबल्यूएचओ, 2013)। गर्भवती महिलाओं का मिथाइलमर्करी के अधिक संपर्क में आने से बच्चों में मानसिक मंदता , गतिभंग, दृश्य क्षेत्र का कम होना, अंधापन, और मस्तिष्क संबंधी कई अन्य विकार देखे गए हैं (US ईपीए (2001A))। प्रायोगिक पशुओं में मरक्यूरिक क्लोराइड पेट के सम्पर्क में आने पर थायराइड और गुर्दे में ट्यूमर का बनना दिखाया गया है (अमेरिका EPA, 2001)।

भारत में पारा प्रदूषण खतरनाक स्तर तक पहुंच रहा है जिसका प्रमुख कारण बड़े पैमाने पर (0.058 से 0,268 मिलीग्राम/लीटर) औद्योगिक अपशिष्ट का पानी में उत्सर्जन हैं। पारा की अधिक मात्रा गुर्दे को गंभीर नुकसान पहुँचाती है जो कैंसर तक को जन्म दे सकता है (ATSDR आईएआरसी , DHS, ईपीए)।

भारी धातुओं के कारण होने वाली विषाक्तता की प्रणाली

गुर्दे के विशेष भागों जैसे कि व्रक्कांग (Nephrons) को भारी धातुओं से सबसे ज्यादा नुकसान होता है। अमरीका के मनहेट्टम प्रॉजेक्ट (Manhattan project) और परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम के दौरान होने वाले गुर्दे के रोगों पर पहली बार गहनता से अध्ययन हुआ था। इससे और इस जैसे कुछ और अध्ययनों से पता चला की गुर्दे की खराबी के दो प्रमुख कारण होते हैंः

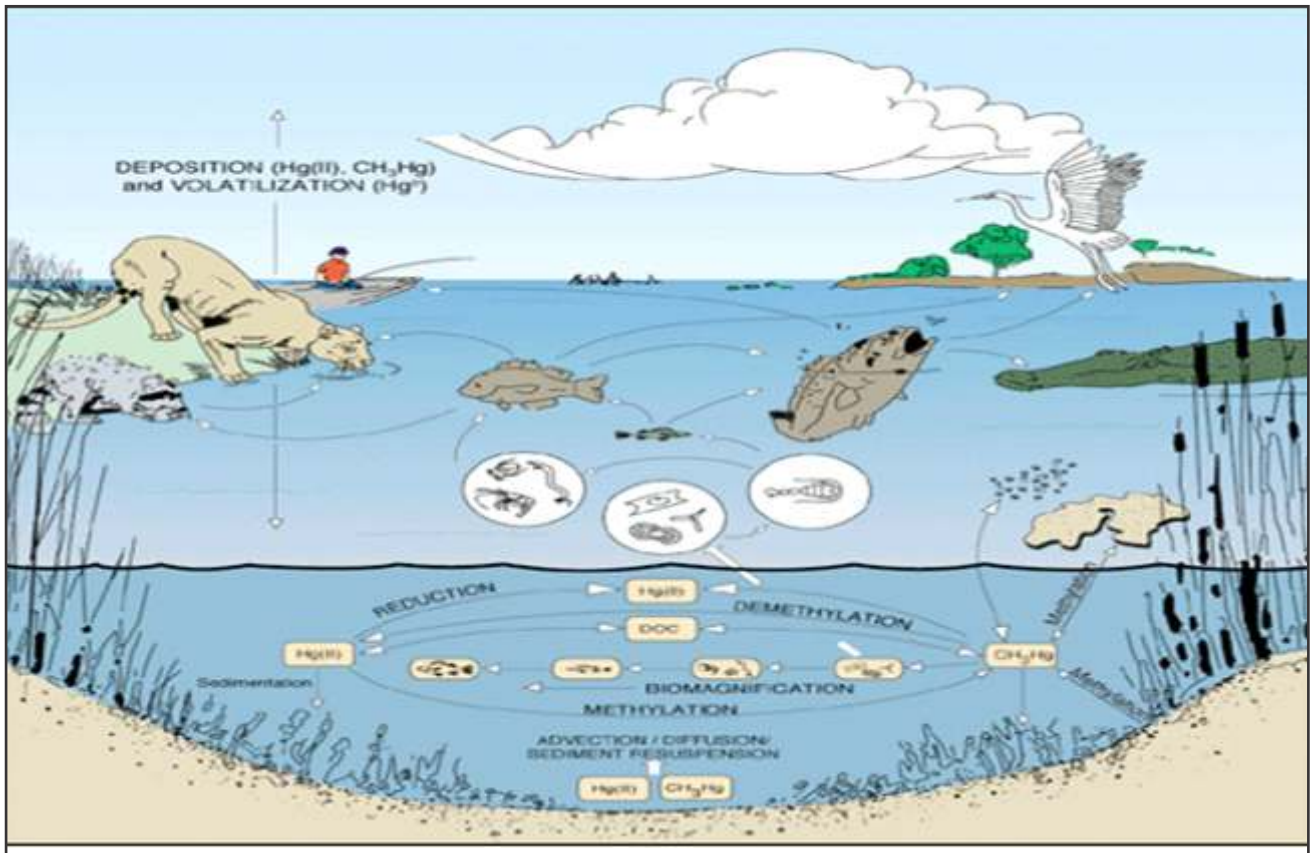

चित्र 2 : भारी धातुओं का जीवों के जीवन चक्र से सम्बंध

स्रोत U.S. Geological Survey

1. केशिकागुच्छ प्रभाव (Glomerular effects), जिसके कारण गुर्दे की रक्त को साफ करने की क्रिया प्रभावित होती है।

2. नलिका प्रभाव (tubular effect), जो कि आवश्यक पोषक तत्वों के अवशोषण को प्रभावित करता है।

दोनों कारणों से मनुष्य में श्वेतकमेह (रक्त की कमी) हो सकता है, जो कि गुर्दे के निष्प्रभावी होने का प्रथम संकेत होता है। सारे भारी तत्व जैसे कि पारा और आर्सेनिक कोशिकाओं में ऑक्सीकारक तनाव पैदा करते हैं जिसके कारण गुर्दों में कई तरह की विषमताएं पैदा होती हैं, इन सभी का सम्मिलित असर गुर्दे को स्थायी रूप से खराब कर देता है।

गुर्दे के रोगों को कैसे पहचानें

I) पेशाब में परिवर्तन

गुर्दे मूत्र बनाते हैं, जिसके कारण गुर्दे में नुकसान से मूत्र में कुछ परिवर्तन हो सकते हैं। जैसे–

- मूत्र झागदार हो सकता है।
- मूत्र पीला रंग का हो सकता है।
- सामान्य से अधिक अथवा सामान्य से कम बार पेशाब कर सकते हैं ।
- मूत्र में खून हो सकता है।
- पेशाब करने में कठिनाई अथवा दर्द हो सकता है।

ii) सूजन

विकृत गुर्दे अतिरिक्त तरल पदार्थ को शरीर से निकाल नही पाते जिसके कारण हाथ– पैरों, टखनों तथा चेहरे में सूजन आ जाती है।

iii) थकान

स्वस्थ गुर्दे एक हार्मोन (एराथ्रोपोईटिन, ईपीओ) बनाते हैं जो शरीर को ऑक्सीजन ले जाने की लाल रक्त कोशिकाओं के निर्माण को प्रेरित करता है। विकृत गुर्दे कम ईपीओ बनाते हैं जिससे रक्त कोशिकाओं का कम निर्माण होता है। कम लाल रक्त कोशिकाएँ मांसपेशियों और मस्तिष्क को सुचारु रूप से ऑक्सीजन नही पहुँचा पाती जिससे हम जल्दी थक जाते हैं।

iv) त्वचा पर लाल चकत्ते / खुजली

गुर्दे रक्त से कचरे को हटाने का कार्य करते हैं। गुर्दे खराब होने से मनुष्य के रक्त में कचरे का निर्माण होता है जो गंभीर खुजली पैदा कर सकता है ।

v) मुँह में धातु स्वाद / अमोनिया सांस

रक्त में एक अपशिष्ट पदार्थ (यूरीमिया) का निर्माण होता है जो भोजन का स्वाद अलग और बुरी साँस का कारण बन सकता है।

vi) मतली और उल्टी

रक्त में यूरीमिया का निर्माण होता है जो मतली और उल्टी पैदा कर सकता है जो भूख न लगना और वजन कम होने का कारण बन सकता है।

vii) सांस की तकलीफ

सांस लेने की दिक्कत दो प्रकार से गुर्दे से संबंधित हो सकता है। सबसे पहले, शरीर में अतिरिक्त तरल पदार्थ फेफड़ों में भर सकता हैं जिसकी वजह से आपको सांस लेने में तकलीफ हो सकती है और दूसरा, एनीमिया (ऑक्सीजन ले जाने की लाल रक्त कोशिकाओं की कमी) के कारण ।

viii) ठंड लगना

एनीमिया के कारण आप हर समय ठंड महसूस कर सकते हैं ।

ix) चक्कर आना और ध्यान केंद्रित न कर पाना

गुर्दे की विफलता से संबंधित एनीमिया के कारण आपके मस्तिष्क को पर्याप्त ऑक्सीजन नहीं मिल पाती है जिसके कारण आप को चक्कर आना तथा एकाग्रता में परेशानी आ सकती है

x) पैर / कमर में तेज दर्द

सामान्यतः दीर्घकालीन गुर्दा रोग के कारण किसी भी प्रकार का दर्द नहीं होता है और गुर्दे के पास के अधिकतर दर्द की वजह कुछ और होती है । लेकिन कुछ लोगों में दर्द भी हो सकता है।

गुर्दो को स्वस्थ रखने के लिए कुछ महत्वपूर्ण सुझाव

स्वस्थ और सक्रिय रहें स्वस्थ रहने से आपका रक्तचाप सामान्य रहता है जो दीर्घकालीन गुर्दा रोगों के जोखिम को कम कर देता है ।

i) रक्त में शर्करा के स्तर को नियंत्रित रखें

लगभग 50% मधुमेह के रोगियों में गुर्दे की खराब होती है, अतः मधुमेह के रोगियों को अपने गुर्दे की नियमित रूप से जांच कराते रहना चाहिए। शीघ्र पता चलने पर मधुमेह से गुर्दे की क्षति को कम या रोका जा सकता है ।

ii) रक्तचाप को नियंत्रित रखें

सामान्य रक्तचाप का स्तर 120 / 80 है । इस स्तर के ऊपर और 139 / 89 के बीच, आप उच्च रक्तचाप की प्रथम श्रेणी में आते हैं और आपको जीवन शैली और आहार में परिवर्तन करना चाहिए। 140 / 90 या इससे ऊपर होने पर आपको अपने डॉक्टर के साथ चर्चा करनी चाहिये और नियमित रूप से अपने रक्तचाप के स्तर की जांच करानी चाहिए। उच्च रक्तचाप, मधुमेह और उच्च कोलेस्ट्रॉल गुर्दे की क्षति करने के लिए विशेष रूप से जिम्मेदार होता है।

iii) स्वस्थ खाएं और अपने वजन को कम रखें

स्वस्थ्य जीवन शैली मधुमेह, हृदय रोग और दीर्घकालीन गुर्दा रोग के साथ जुड़े अन्य स्थितियों को रोकने में मदद कर सकते हैं। नमक का सेवन कम करें। 5–6 ग्राम (एक चम्मच के आसपास) प्रति दिन से अधिक नमक का सेवन न करें। अपने वजन को

अधिक न बढ़ने दें। बाहर का खाना कम खायें।

iv) तरल पदार्थ का सेवन बनाए रखें

प्रतिदिन कम से कम 1.5 से 2 लीटर पानी पियें। तरल पदार्थ के अधिक मात्रा में सेवन से गुर्दों को शरीर से सोडियम, यूरिया और विषाक्त पदार्थों को निकालने में मदद मिलती है, जिससे गुर्दे रोग के विकसित होने का जोखिम काफी कम हो जाता है।

v) धूम्रपान न करें

धूम्रपान गुर्दे में रक्त के प्रवाह को धीमा कर देता है । कम रक्त की वजह से गुर्दे की ठीक ढंग से काम करने की क्षमता को नुकसान पहुंचता है। धूम्रपान करने से 50 प्रतिशत गुर्दे के कैंसर का खतरा बढ़ जाता है ।

vi) बिना डॉक्टर के परामर्श के दवाए न खाएं

आम दवाओं जैसे इवुब्रुफेन गुर्दे की क्षति और रोग पैदा करने के लिए जानी जाती है। इन दवाओं का नियमित सेवन आपके गुर्दे के लिए खतरा पैदा कर सकता है। गठिया या पीठ दर्द या अन्य दर्द में केवल आपात स्थिति में ही इन दवाओं का सेवन करे। नियमित रूप से दर्द के नियंत्रण के लिए आप अपने डॉक्टर से परामर्श लेकर ही दवाओं का सेवन करें।

खाद्य एलर्जी पर एक व्यापक समीक्षा

आकांक्षा शर्मा और प्रेमेन्द्र धर द्विवेदी

खाद्य विषविज्ञान प्रभाग, खाद्य, औषधि एवं रासायन विषविज्ञान विभाग
सी.एस.आई.आर.– भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
विषविज्ञान भवन, 31 महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ, 226001, उत्तर प्रदेश, भारत

परिचय

एलर्जी एक जटिल वंशानुगत विकार है जिसमें अस्थमा, एलर्जिक राहिनिटिस, त्वचा की एलर्जी, खाद्य एलर्जी तथा नेत्रष्लेमलाशोथ (कंजक्टीवाईटिस) जैसे रोग सम्मिलित हैं। अतिसंवेदनशील व्यक्तियों में, पर्यावरण में मौजूद कुछ अहानिकारक पदार्थों (धूल, खाद्य पदार्थ, पराग कण इत्यादि) के विरुद्ध प्रतिरक्षी प्रतिक्रियाओं के परिणामस्वरूप एलर्जी होती है। हमारे शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली अच्छे स्वास्थ्य के लिए संक्रमण और अन्य खतरों से लड़ती है परन्तु जब यही प्रतिरक्षा प्रणाली कुछ अहानिकारक पदार्थों के खिलाफ एक सुरक्षात्मक प्रतिक्रिया को उत्पन्न करती है तब शरीर में कुछ असामान्य क्रियाएँ होती हैं जिनके कारण एलर्जी होती है। विश्व की कुल जनसंख्या का लगभग 20–30 प्रतिशत भाग कम से कम एक एलेर्जिक रोग से ग्रसित है तथा एलर्जी का बढ़ता हुआ प्रतिशत एक गंभीर एवं विश्वव्यापी समस्या बनता जा रहा है। जिन पदार्थों के कारण एलर्जी होती है उन्हें एलर्जी पैदा करने वाले तत्व या एलर्जन कहते हैं। अभी तक इसका कारण स्पष्ट नहीं है क्योंकि सिर्फ कुछ ही लोगों में एलर्जी/एलर्जिक रोग होते हैं जबकि अन्य में नहीं होते। एलर्जिक रोगों का प्रमुख कारण आनुवंशिकता एवं पर्यावरणीय प्रभाव हैं जो मुख्यतः विकासात्मक होते हैं।

खाद्य पदार्थों के कारण होने वाली प्रतिरक्षी प्रतिक्रियाओं को खाद्य एलर्जी कहते हैं। वर्तमान जीवन शैली व खान पान के आदतों को देखते हुए खाद्य एलर्जी एक बहुत ही प्रासंगिक मुद्दा है। अमरीका, ब्रिटेन, जापान और कनाडा जैसे देश इस मुद्दे पर बहुत गंभीर हैं और वे विभिन्न सर्वेक्षण कार्यक्रम चला रहे हैं। खाद्य एलर्जी की घटनाएँ एशियाई देशों सहित दुनिया भर में बढ़ रही हैं तथा इस रोग का प्रसार वयस्कों में लगभग 3–4% व बच्चों में लगभग 7–8% है, अतः हम कह सकते हैं कि बच्चे खाद्य एलर्जी के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं। खाद्य एलर्जी मुख्यतः किसी खास भौगोलिक क्षेत्र की खानपान की आदतों और जीवन शैली पर निर्भर करती है जैसे सोया एलर्जी जापान में, मूंगफली एलर्जी इज़रायल, ब्रिटेन व फ्रांस में और तिल एलर्जी उत्तरी अमेरिका में आम है।

खाद्य एलर्जी का कारण

जठरांत्र में विभिन्न खाद्य पदार्थों का विभाजन उनके घटकों में किया जाता है जिस से वह आसानी से अवशोषित हो जाएँ साथ ही साथ बाहरी एंटीजेंस (फॉरेन एंटीजेंस) को अवरुद्ध करके उन्हें निष्प्रभावित किया जाता है जिस से वह रक्त परिसंचरण तंत्र में प्रवेश ना कर सकें। लार, अमाशय, अग्नाशय व आंत्र स्राव के विकर खाद्य पदार्थों को छोटे शक्कर, पेप्टाइड्स और वसा में तोड़ देते हैं। कभी–कभी प्रतिरक्षा प्रणाली की निष्क्रियता अथवा अत्यधिक सक्रियता के कारण खाद्य पदार्थ यथावत रह जाते हैं व अपने घटकों में नहीं टूट पाते तथा परिसंचरण तंत्र में प्रवेश कर जाते हैं। परिणामस्वरूप विशिष्ट आई जी ई (IgE) एंटीबॉडीज का अत्यधिक उत्पादन होता है। खाद्य पदार्थों के सभी घटक एलर्जी के लिए जिम्मेदार नहीं होते बल्कि कुछ विशिष्ट प्रोटीन्स (खाद्य एलेर्जेन) के कारण एलेर्जिक प्रतिक्रियाएँ होती हैं। यह देखा गया है कि खाद्य एलेर्जेन जठरांत्र में पेप्टिक और अम्लीय पाचन के विरुद्ध स्थिर होते हैं तथा आंतों की प्रतिरक्षा प्रणाली को उत्प्रेरित करते हैं जिसके कारण शरीर मे प्रतिकूल एलर्जिक प्रतिक्रियाएँ होती हैं। खाद्य पदार्थों के विरुद्ध प्रतिरक्षा प्रतिक्रियाओं की दो व्यापक समूहों मे बांटा जा सकता है– आईजीई (IgE) मध्यस्थता प्रतिक्रियाएँ और गैर आईजीई मध्यस्थता

चित्र 1: आठ मुख्य खाद्य एलेर्जेन
स्रोत : http://www.imagesource.com

प्रतिक्रियाएँ जिसमें से आईजीई मध्यस्थता प्रतिक्रियाओं को खाद्य एलर्जी का प्रमुख कारण माना जाता है। अतिसंवेदनशील व्यक्तियों में, कुछ विशेष खाद्य पदार्थों के सेवन के 1 मिनट से 1 घंटे के उपरांत आईजीई मध्यस्थता प्रतिक्रियाएं/तत्काल प्रकार अतिसंवेदन शील प्रतिक्रियाएँ शुरू हो जाती हैं। गैर आई जी ई मध्यस्थता प्रतिक्रियाओं को पुनः 3 उपसमूहों में बांटा जा सकता है–

अ) आईजीजी मध्यस्थता प्रतिक्रियाएँ

ब) आईजीजी + आईजीई मध्यस्थता प्रतिक्रियाएँ

स) इम्यून कॉम्प्लेक्स मध्यस्थता प्रतिक्रियाएँ

बच्चों में गाय के दूध से एलर्जी आईजीजी आईजीजी मध्यस्थता प्रतिक्रियाओं का एक उदाहरण है, जबकि इम्यून कॉम्प्लेक्स मध्यस्थता प्रतिक्रियाएँ आईजीजी+आईजीई+आईजीए के कारण होती हैं जो कभी कभी अस्थमा और एक्जिमा रोगियों में देखने के लिए मिलती हैं।

मुख्य खाद्य एलेर्जेन की सूची

यह पाया गया है कि 170 खाद्य पदार्थों के कारण आईजीई–मध्यस्थता प्रतिक्रियाएँ होती हैं परंतु खाद्य और कृषि संगठन तथा विश्व स्वास्थ्य संगठन ने दुनिया भर में खाद्य एलर्जी के लिए जिम्मेदार "8" प्रमुख खाद्य पदार्थों की एक सूची तैयार की है जिनके कारण लगभग 90% खाद्य एलर्जी प्रतिक्रियाएँ होती हैं। यह प्रमुख खाद्य पदार्थ निम्नलिखित हैं–

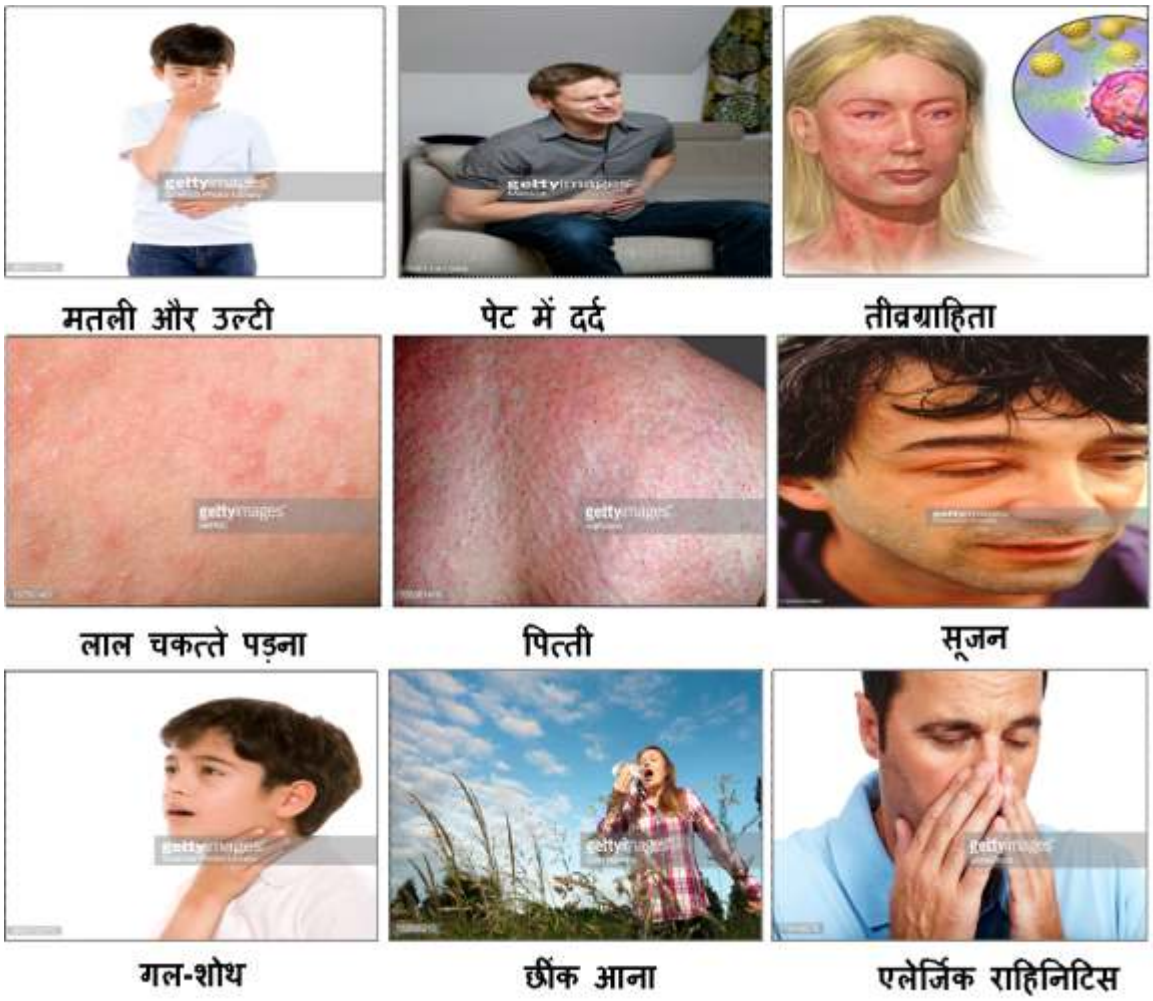

चित्र 2: खाद्य एलर्जी के लक्षण

स्रोत : http://www.gettyimages.in

1. मूँगफली
2. सोयाबीन
3. अंडा (मुर्गी)
4. दूध (गाय, बकरी, भैंस)
5. मछली
6. समुद्री भोजन (झींगा, केकड़ा, सीप)
7. गेहूं
8. ट्री नट्स (अखरोट, काजू, पिस्ता, ब्राजील, पाइन नट, बादाम)

इनमें आठ संभावित एलर्जी कारकों के अलावा, कुछ अन्य असामान्य खाद्य पदार्थों को भी संवेदनशील व्यक्तियों में एलर्जी का कारण माना जाता है जिसमें सरसों, तिल के बीज, फल, सब्जियाँ, रेड मीट, बैंगन, अनाज तथा मसाले मुख्य हैं।

खाद्य एलर्जी के लक्षण

खाद्य एलर्जी प्रमुख रूप से त्वचा, जठरांत्र संबंधी मार्ग तथा श्वसन तंत्र को प्रभावित करती हैं परन्तु गंभीर मामलों में यह हृदय प्रणाली को भी प्रभावित कर सकती है जिस से कुछ संवेदनशील व्यक्तियों की मृत्यु तक हो सकती है।

त्वचा पर लक्षण

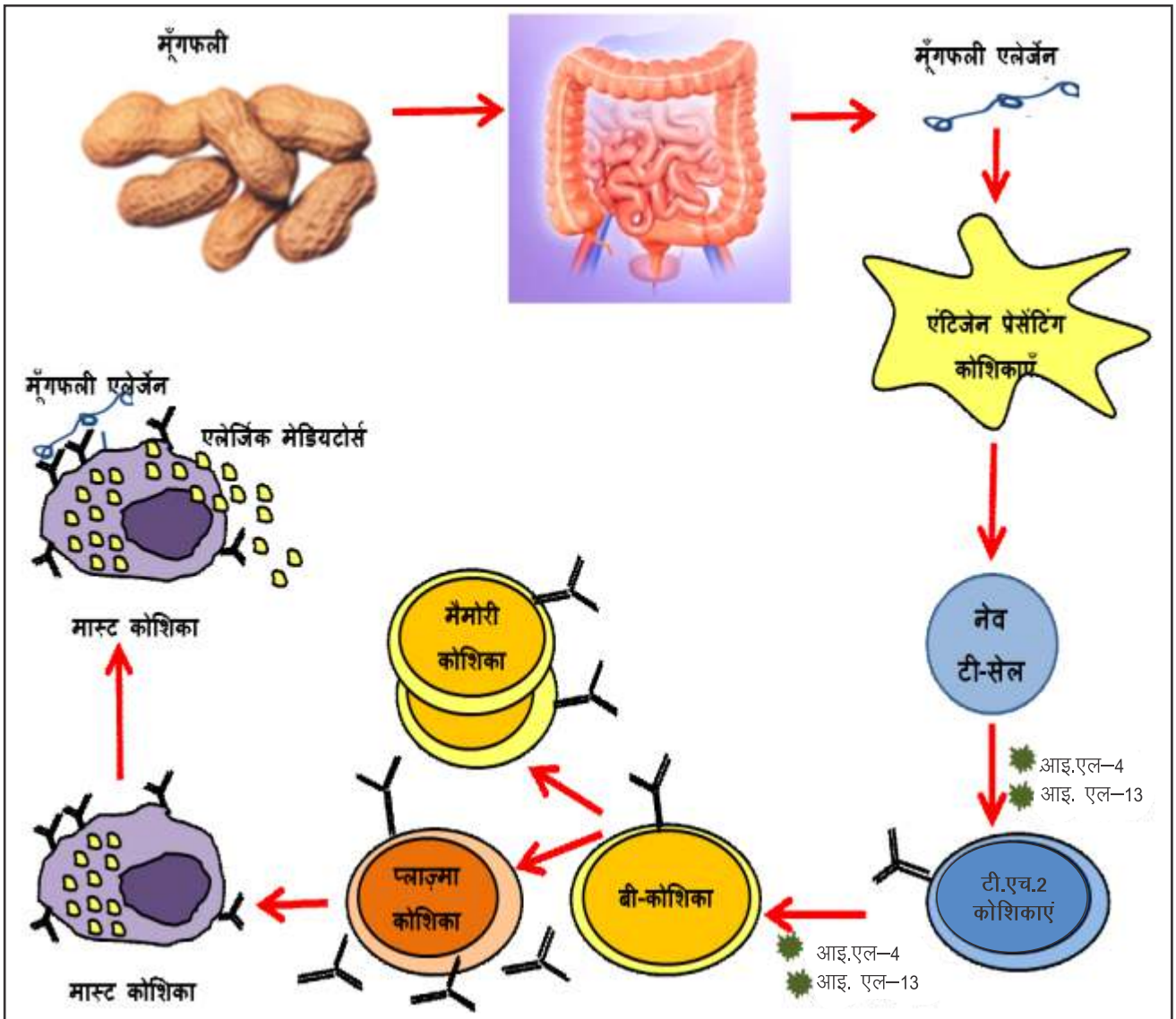

चित्र 4: खाद्य एलर्जी की क्रियाविधि

इसमें पित्ती, एक्जिमा, खुजली, चकत्ते पड़ना, खराश होना तथा सूजन आदि लक्षण मुख्य हैं।

श्वसन तंत्र के लक्षण

छींकना, खाँसना, अत्यधिक बलगम बनना, सांस के साथ आवाज आना, एलेर्जिक राहिनिटिस तथा अस्थमा प्रमुख लक्षण हैं।

जठरांत्र संबंधी मार्ग के लक्षण

मतली और उल्टी, पेट दर्द, अतिसार, वजन घटना, गैस बनना, पेट में कसावट रहना तथा भोजन निगलने में कठिनाई होना आदि मुख्य लक्षण हैं।

तीव्रग्राहिता अतिरंजित प्रतिक्रिया

खाद्य एलर्जी तीव्रग्राहिता का सबसे सामान्य कारणों में से एक है। मास्ट कोशिकाओं व बेसोफिल से बड़े पैमाने पर एलेर्जिक मीडिएटर्स जैसे हिस्टमीन के स्राव के कारण गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल लक्षण के अलावा पित्ती, अस्थमा, सूजन, राहिनिटिस, नेत्रश्लेष्मलाशोथ, हाइपरटेंशन, सदमा, रक्तचाप में गिरावट, उलझन,

तालिका 1 : खाद्य एलर्जन तथा उनका सीरम विशिष्ट आईजीई स्तर		
क्रम सं०	खाद्य एलेर्जेन	सीरम विशिष्ट आईजीई स्तर (कि.यू./ली.)
1	अंडा	7
2	दूध	15
3	मूँगफली	14
4	मछली	20
5	सोयाबीन	65
6	गेहूँ	80

बेहोशी, कम नाड़ी दर, सीने मे दर्द तथा कार्डियक एरिदमिया का अनुभव हो सकता है।

खाद्य एलर्जी की क्रियाविधि

खाद्य एलर्जी जैव रासायनिक प्रतिक्रियाओं की एक जटिल श्रृंखला है जिसमें विभिन्न प्रतिरक्षा कोशिकाएँ, एलर्जी मध्यस्थ (एलेर्जिक मीडिएटर्स) और साइटोकाइन्स महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मास्ट कोशिकाएं तथा बेसोफिल्स दो मुख्य प्रतिरक्षा कोशिकाएँ हैं जो खाद्य एलर्जी के रोग जनन के लिए अत्यधिक आवश्यक हैं। खाद्य एलर्जी प्रतिक्रियाओं को टी.एच.2 (Th_2) प्रतिक्रियाएँ कहते हैं। शरीर में, खाद्य एलर्जन के प्राथमिक प्रदर्शन अनावरण के पश्चात सबसे पहले कुछ खास प्रतिजन कोशिकाएँ (एंटिजन प्रसेंटिंग कोशिकाएँ) उनका फेगोसाइटोसिस (निगलना) कर लेती हैं जहां उनको छोटे–छोटे टुकड़ों (8–10 अमीनो अम्ल) में तोड़ दिया जाता है, इस प्रक्रिया को प्रोसेसिंग ऑफ एंटिजन कहते हैं। इसके पश्चात इन छोटे छोटे टुकड़ों को एमएचसी II (MHC II) के द्वारा नेव टी–सेल्स (naive T-cells) को प्रदर्शित किया जाता है परिणामस्वरूप वह नेव टी–सेल्स एलर्जेन विशिष्ट टी.एच.2 कोशिकाओं (Th2 कोशिकाएँ) में विभाजित हो जाती हैं। यह एलेर्जेन विशिष्ट टी.एच.2 कोशिकाएँ कुछ टी.एच.2 साइटोकाइन्स (आइ. एल.– 4, आइ. एल.– 5 तथा आइ. एल.– 13) स्रावित करती हैं जो पुनः बी–सेल्स पर उपस्थित कुछ रिसेप्टर्स के साथ आबद्ध होते हैं तथा उन्हें सक्रिय कर देते हैं। तत्पश्चात, यह सक्रिय बी–कोशिकाएँ प्लाज्मा कोशिकाओं व मैमोरी कोशिकाओं में विभाजित हो जाती हैं। प्लाज्मा कोशिकाएँ, एलर्जन विशिष्ट आईजीई एंटीबॉडीस स्रावित करती हैं तथा मैमोरी कोशिकाएँ शरीर में उस एलेर्जेन की याददाश्त के तौर पर रह जाती हैं। एलर्जन विशिष्ट आईजीई एंटीबॉडीस, मास्ट कोशिकाओं तथा बेसोफिल्स पर उपस्थित एफसी इप्सिलान आर वन रिसेप्टर की सहायता से स्वयं को आबद्ध कर लेती हैं। उस एलर्जन का पुनः अनावरण होने पर, वह मास्ट कोशिकाओं पर स्थित एफ सी इप्सेलॉन आर वन रिसेप्टर पर आबद्धित दो आईजीई एंटीबॉडीस के साथ जुड़ जाता है जिस से मास्ट कोशिकाएँ सक्रिय हो जाती हैं और उनमें जैव रासायनिक प्रतिक्रियाओं की एक श्रृंखला शुरू हो जाती है जिसकी वजह से उनसे विभिन्न एलर्जिक मीडिएटर्स स्रावित होते हैं। ये एलर्जिक मीडिएटर्स भिन्न–भिन्न ऊतकों पर कार्य करते हैं तथा केशिकाओं (केपीलेरीस) की पारगम्यता बढ़ाते हैं साथ ही साथ वाहिकाप्रसरण (वेसोडाईलेशन) भी करते हैं जिसकी वजह से शरीर का तापमान कम होता है और एलर्जी के लक्षण उत्पन्न होते हैं।

खाद्य एलर्जी की जाँच

खाद्य एलर्जी की जाँच के लिए प्रयुक्त होने वाली विभिन्न तकनीकें निम्नलिखित हैं–

पारिवारिक इतिहास पर आधारित प्रश्नावली
खाद्य एलर्जी की जाँच के लिए मरीज के पारिवारिक चिकित्सा इतिहास से संबन्धित प्रश्न पूछना पहला चरण होता है। प्रश्नावली के आधार पर चिकित्सक यह अंदाजा लगाता है कि व्यक्ति विशेष को किन किन खाद्य पदार्थों से एलर्जी हो सकती है तथा उसके

उपरांत शारीरिक परीक्षण करता है। प्रश्नावली हमेशा स्पष्ट परिणाम प्रदान नहीं करती है, अतः एलर्जी का निदान करने के लिए अन्य परीक्षण भी किए जाते हैं।

सीरम आईजीई स्तर : आमतौर पर सामान्य व्यक्तियों की सीरम में आईजीई एंटीबॉडी की कम सांद्रता पाई जाती है। सीरम में आईजीई का उच्च स्तर खाद्य एलर्जी हो जाने की संभावना का संकेत माना जा सकता है। यदि व्यक्ति के सीरम में एंजाइम लिंक्ड इम्युनो सोरबेंट एस्से (ELISA) द्वारा विशिष्ट आईजीई की सांद्रता 0.35 के.यू./ली. पाई जाती है तो उसे *इन विट्रो* परीक्षण के लिए कट–ऑफ स्तर के रूप में माना जाता है हालांकि इसे खाद्य एलर्जी का बहुत अच्छा सूचक नहीं माना जा सकता है। विभिन्न खाद्य एलर्जन विशिष्ट आईजीइ का कट–ऑफ स्तर तालिका में दिया गया हैः

शिशुओं में विशिष्ट आईजीई का स्तर व्यस्कों की तुलना में कम होता है जैसे अंडे के लिए 2 के.यू./ली. तथा दूध के लिए 5 के.यू./ली. पाया गया है।

त्वचा चुभन परीक्षण (स्किन प्रिक टेस्ट): त्वचा चुभन परीक्षण एक सस्ती तकनीक है जिसे चिकित्सक कार्यालय में ही कार्यान्वित किया जा सकता है तथा इसके परिणाम भी तत्काल ही मिल जाते हैं। खाद्य एलर्जन व आईजीई एंटीबॉडीस की परस्पर क्रिया के परिणामस्वरूप खाद्य एलर्जी के लक्षण उत्पन्न होते हैं। किसी भी संदिग्ध भोजन के प्रति खाद्य एलर्जी की जांच करने के लिए उस भोजन के विरुद्ध विशिष्ट आईजीई एंटीबॉडीस की उपस्थिति मापने के लिए त्वचा चुभन परीक्षण किया जाता है। इस परीक्षण में खाद्य एलर्जन की एक बूंद को हाथ या पीठ पर लगाया जाता है तत्पश्चात चिकित्सक एक विसंक्रमित सुई की सहायता से त्वचा को हल्का सा खरोंचता है जिससे खाद्य एलेर्जेन कम मात्रा में इंट्राडरमली डिफफ्यूस होता है। इसके पश्चात 20–30 मिनट प्रतीक्षा करते हैं तथा यह निरीक्षण करते हैं कि त्वचा के जिस भाग पर खाद्य एलेर्जेन लगाया गया था वहाँ सूजन या लालपन हुआ है या नहीं। यदि सूजन या लालपन दिखता है तो वह व्यक्ति उस विशेष खाद्य एलर्जन के प्रति संवेदनशील माना जाता है और यह कहा जा सकता है कि यदि भोजन में वह खाद्य एलर्जन उपस्थित है तो उस व्यक्ति में खाद्य एलर्जी के लक्षण उत्पन्न हो सकते हैं। सामान्यतः त्वचा चुभन परीक्षण में दर्द नहीं होता और खून भी नहीं निकलता है बस त्वचा पर नाखून की खरोंच जैसा महसूस होता है।

रक्त परीक्षणः खाद्य एलर्जन के विरुद्ध विशिष्ट आईजीइ एंटीबॉडी की उपस्थिति मापने के लिए रक्त की जाँच की जाती है। पहले इस परीक्षण को रास्ट (RAST) (रेडियोअलेर्गोसोरबेंट ऐंस्सें) कहा जाता था क्यूंकि इसमें रेडियोधर्मिता का उपयोग किया जाता था परन्तु आधुनिक परीक्षण में इसका उपयोग नहीं किया जाता। इस परीक्षण की सहायता से खाद्य एलर्जन विशिष्ट आईजीई एंटीबॉडी की सांद्रता का पता लगाया जा सकता है जबकि त्वचा चुभन परीक्षण मे सिर्फ खाद्य एलर्जन विशिष्ट आईजीई एंटीबॉडी की उपस्थिति का पता चलता है।

ओरल फूड चेलेंजः कभी–कभी त्वचा चुभन और रक्त परीक्षण के प्रदर्शन के बाद भी चिकित्सक एक निश्चित निदान पर पहुंचने में असमर्थ होता है तब ओरल फूड चेलेंज तकनीक का प्रयोग किया जाता है। यह खाद्य एलर्जी के लिए एक बेहद सटीक नैदानिक परीक्षण है। कभी–कभी इस परीक्षा के परिणाम गंभीर हो सकते हैं अतः इसे सिर्फ चिकित्सीय देखरेख तथा विशिष्ट उपकरणों की उपस्थिति में ही करना चाहिए। खाद्य चैलेंज के दौरान, विशेषज्ञ की उपस्थिति में पहले संदिग्ध खाद्य एलर्जन की इतनी कम मात्रा दी जाती है जिससे खाद्य एलर्जी के लक्षण उत्पन्न होने की संभावना नहीं होती। प्रत्येक चैलेंज के बाद एक निश्चित अवधि के लिए उस खाद्य एलेर्जेन के विरुद्ध व्यक्ति विशेष की प्रतिक्रिया का गहन निरीक्षण किया जाता है। यदि खाद्य एलर्जी के लक्षण उत्पन्न नहीं होते हैं तब उस खाद्य एलेर्जेन की मात्रा को थोड़ा बढ़ा दिया जाता है तथा फिर से उस व्यक्ति को खाद्य चैलेंज दिया जाता है परन्तु यदि खाद्य एलर्जी के लक्षण उत्पन्न होते हैं तब खाद्य चैलेंज को वहीं रोक दिया जाता है। यह परीक्षण बहुत विशिष्ट होता है क्योंकि इसके द्वारा हम प्रत्यक्ष रूप से यह पता लगा सकते हैं कि एक व्यक्ति विशेष को किस खाद्य पदार्थ

से एलर्जी है।

खाद्य चैलेंज को निम्नलिखित तीन उपसमूहों मे विभाजित किया जा सकता है–

अ) डबल ब्लाइंड, प्लेसीबो–नियंत्रित खाद्य चैलेंजः इस परीक्षण को खाद्य एलर्जी के निदान के लिए "सोने के मानक" माना जाता है। रोगी को संदिग्ध खाद्य एलर्जन या प्लेसीबो (एक हानिरहित पदार्थ) की खुराक बढ़ती हुई मात्रा में दी जाती है। एलर्जन और प्लेसीबो एक जैसे दिखते हैं, इसलिए रोगी और डॉक्टर दोनों को यह नहीं पता होता कि रोगी को किससे चैलेंज किया जा रहा है इसलिए इस चैलेंज को डबल ब्लाइंड कहा जाता है। उदाहरण के लिए, दूध एलर्जी के परीक्षण के लिए रोगी को एक हैमबर्गर दिया जाता है जिसमें दूध पाउडर है तथा दूसरा हैमबर्गर जिसमें दूध पाउडर नहीं है। यह परीक्षण सुनिश्चित करता है कि परिणाम यथातथ्य आएंगे क्योंकि रोगी की व्यग्रता और चिकित्सक के पूर्वाग्रह का परिणाम पर कोई असर नहीं पड़ेगा।

ब) सिंगल ब्लाइंड खाद्य चैलेंजः इस परीक्षण में सिर्फ चिकित्सक को पता होता है कि रोगी को खाद्य एलर्जन दिया जा रहा है जबकि स्वयं रोगी को इसका पता नहीं होता है।

स) ओपन–खाद्य चैलेंजः इस परीक्षण मे चिकित्सक तथा रोगी दोनों को पता होता है कि रोगी को खाद्य एलर्जन दिया जा रहा है। यह परीक्षण सामान्यतः तब किया जाता है जब यह सुनिश्चित हो कि रोगी की घबराहट परिणामों को प्रभावित नहीं करेगी।

खाद्य उन्मूलनः खाद्य एलर्जी निदान करने के लिए, चिकित्सक अस्थायी रूप से रोगी के आहार से विशिष्ट खाद्य पदार्थों को हटाने का सुझाव देता है। खाद्य पदार्थों का उन्मूलन सामान्यतः 2–4 सप्ताह तक किया जाता है। इस अवधि के दौरान चिकित्सक रोगी के लक्षणों पर नजर रखता है। अगर उन्मूलित खाद्य पदार्थ रोगी में खाद्य एलर्जी उत्पन्न करते हैं तो 2–4 सप्ताह की अवधि में इसके लक्षण गायब हो जाते हैं। कुछ मामलों में, चिकित्सक धीरे–धीरे संदिग्ध खाद्य पदार्थों को भोजन में सम्मिलित करता है। यदि खाद्य एलर्जी के लक्षण फिर से दिखने लगते हैं तो यह माना जा सकता है कि रोगी को उन खाद्य पदार्थों से एलर्जी की संभावना है।

खाद्य एलर्जी के उपचार

निश्चित रूप से खाद्य एलर्जी ऐसी समस्या नहीं है जो "हर बीमारी के लिए एक दवा है" इस अंकन में फिट होती है। खाद्य एलर्जी का उपचार एक साथ कई दिशाओं में किया जाता है जिसमें खाद्य पदार्थों का उन्मूलन, रोगी की प्रतिरक्षा को संशोधित करना, एंटीऑक्सीडेंट्स से युक्त भोजन खिलाना तथा इम्यूनोथेरेपी द्वारा उपचार करना आदि मुख्य तरीके हैं। खाद्य एलर्जी से बचने का प्रमुख तरीका है कुछ विशेष खाद्य पदार्थों का उन्मूलन है जिनसे एलर्जी होने की संभावना होती है। एलर्जी शॉट्स और प्रोबायोटिक्स सहित अन्य उपचार खाद्य एलर्जी में ज्यादा उपयोगी सिद्ध नहीं हुए हैं। उपरोक्त तकनीकों का प्रयोग करके यह पता लगाया जा सकता है कि रोगी को किन किन खाद्य पदार्थों से एलर्जी हो सकती है तत्पश्चात उसके अनुसार ही विभिन्न उपचार के तरीके अपनाए जा सकते हैं जो निम्नलिखित हैं–

एलर्जी उत्पन्न करने वाले खाद्य पदार्थों का उन्मूलनः व्यक्ति विशेष को जिन खाद्य पदार्थों से एलर्जी की संभावना है उनसे परहेज किया जाना चाहिए। हालांकि भोजन से खाद्य पदार्थों के उन्मूलन के कारण शरीर में पोषक तत्वों की कमी हो सकती है जहां अतः कुछ पूरक आहार (सपलीमैंट्री फूड्स) दिया जाना आवश्यक होता है। प्रोसेस्ड खाद्य पदार्थों में कुछ छुपे हुए खाद्य एलेर्जेन हो सकते हैं जैसे दूध, अंडा तथा सोया की प्रोटीन को स्वाद बढ़ाने के लिए खाद्य पदार्थों में डाला जा सकता है जबकि मूंगफली और अखरोट को विभिन्न उत्पादों को गाढ़ा करने और स्वाद बढ़ाने के लिए डाला जाता है। मरीजों को प्रोसेस्ड खाद्य पदार्थों में छिपे भोजन के घटकों की पहचान करना सिखाया जाना चाहिए। आमतौर पर इस्तेमाल किये जाने वाले 'छुपे' हुए खाद्य एलेर्जेन अंडे की प्रोटीन "एल्बुमिन" तथा दूध की प्रोटीन "केसीन और लैक्टोज" होती हैं। अक्सर खाद्य पदार्थों में और सौंदर्य प्रसाधनों दोनों में मूंगफली उत्पादों का वर्णन

करने के लिए "अरेकिस" नाम का प्रयोग किया जाता है। अतः बाजार से कोई भी खाद्य पदार्थ खरीदने से पहले संवेदनशील व्यक्तियों को उसके अवयवों के बारे मे अवश्य पढ़ लेना चाहिए। इसके अलावा किसी भी जलपान गृह में भोजन करने से पहले यह पता लगा लेना चाहिए कि भोजन में कौन–कौन से खाद्य पदार्थों का उपयोग किया गया है तथा उसके अनुसार भोजन ग्रहण करना चाहिए।

औषधियों का प्रयोगः खाद्य एलर्जी के उपचार के लिए चिकित्सक की सलाह के अनुसार विभिन्न औषधियों का प्रयोग किया जा सकता है जो निम्लिखित हैं–

अ) स्टेरॉयड्स– विभिन्न स्टेरॉयड्स जैसे कोर्टीसोन का प्रयोग खाद्य एलर्जी के प्रारम्भिक इलाज के तौर पर किया जाता है परन्तु आपातकालीन उपचार तथा अधिक पुरानी खाद्य एलर्जी के उपचार के लिए यह अधिक लाभदायक नहीं सिद्ध हुए हैं।

ब) एंटीहिसटामीन– एंटीहिसटामीन को एच–1 ब्लॉकर्स के रूप में भी जाना जाता है। इनका प्रयोग खाद्य एलर्जी के हल्के लक्षणों में राहत देने के लिए किया जाता है क्योंकि यह गंभीर प्रतिक्रिया को नियंत्रित नहीं कर सकते हैं। इस वर्ग में दवाएं डाईफिनाइल हाइड्रामीन (Benadryl®) और सेट्रीजिन (Zyrtec®) शामिल हैं।

स) एपिनेफ्रीन– एपिनेफ्रीन का प्रयोग तीव्रग्राहिता के लक्षणों को कम करने के लिए किया जाता है। यह एक ऑटो इंजेक्टर के रूप में (Auvi-D,w™), एड्रेनाक्लिक (Adrenaclick®) या एपीपेन (EpiPen®) नाम से उपलब्ध होती है। यह एक सुरक्षित दवा है परन्तु बुजुर्ग मरीजों या अधिक रक्तचाप से समस्याग्रस्त रोगियों मे इसका उपयोग सावधानीपूर्वक करना चाहिए।

एंटीऑक्सीडेंट्स का उपयोगः विटामिन सी को एंटी एलर्जिक पदार्थ के रूप में उपयोग किया जा सकता है। विटामिन सी मास्ट कोशिकाओं पर क्रिया करके उन्हें स्थिर करता है तथा इन कोशिकाओं से विभिन्न एलर्जिक मीडिएटर्स के स्राव को कम करता है। क्वरसेटिन (Quercetin) एक फ्लेवेनोइड है जो खाद्य एलर्जी कि रोकथाम में सहायक सिद्ध हुआ है। यह पाया गया है कि प्रति दिन क्वरसेटिन की खुराक (4 से 6 ग्राम) लेने से यह कुछ एलर्जी के रोगियों के लिए उपयोगी हो सकता है। पेन्टोथीनिक एसिड का प्रयोग कभी कभी सामान्य एलर्जी से राहत पाने के लिए किया जाता है। यह एड्रीनल ग्लैंड पर कार्य करके एपिनेफ्रीन नामक हारमोन स्रावित कराता है जिस से एलर्जी के लक्षणों से राहत मिलती है।

इम्यूनोथेरेपीः खाद्य एलर्जी के उपचार के लिए इम्यूनोथेरेपी एक अच्छी तकनीक है। यह 2 प्रकार की होती है–

अ) ओरल इम्यूनोथेरेपी– यह खाद्य एलर्जी के रोगियों के लिए एक अच्छी व आशाजनक तकनीक है। इस तकनीक में चिकित्सक अपने रोगियों को खाद्य एलर्जन की नियंत्रित खुराक देता है। सबसे पहले, मरीजों को मौखिक रूप से एक बहुत छोटी मात्रा में खाद्य एलर्जन दिया जाता है तथा समय के साथ उस खाद्य एलर्जन की खुराक में वृद्धि की जाती है जिससे धीरे–धीरे रोगी के शरीर में उस एलेर्जेन के प्रति प्रतिरोध क्षमता उत्पन्न हो जाता है खाद्य एलर्जी की तीव्रता कम हो जाती है।

ब) सबलिंगुयल इम्यूनोथेरेपी– सबलिंगुयल इम्यूनोथेरेपी एलर्जी के उपचार के लिए एक और प्रभावी विकल्प है। अमेरिकी खाद्य एवं औषधि प्रशासन (एफडीए) ने हाल ही में घास के पराग एलर्जन के इलाज के लिए सबलिंगुयल इम्यूनोथेरेपी को मंजूरी दे दी है। शोधकर्ता अब खाद्य एलर्जी के इलाज के लिए इसकी संभावित उपयोगिता देख रहे हैं। विभिन्न अध्ययनों से यह पता चलता है कि सबलिंगुयल इम्यूनोथेरेपी के साइड इफेक्ट ओरल इम्यूनोथेरेपी से कम है परन्तु यह गंभीर एलर्जी प्रतिक्रियाओं को कम करने में ओरल इम्यूनोथेरेपी जितनी प्रभावी नहीं है।

एंटी–आईजीई थेरेपीः एलर्जी के इलाज के लिए एंटी–आईजीई थेरेपी एक अन्य आशाजनक तकनीक है। एलर्जी की प्रतिक्रिया के दौरान शरीर में एलर्जन के विरुद्ध आईजीई एंटीबॉडी पैदा होती हैं। एलर्जी के निदान के लिए चिकित्सक रोगी को एंटी–आईजीई

एंटीबॉडीस का इंजेक्शन देते हैं जो शरीर में पहले से उपस्थित आईजीई एंटीबॉडीस के साथ स्वयं को बाध्य कर लेती हैं और एलर्जी के लक्षण कम हो जाते हैं। वर्तमान में गंभीर एलर्जी प्रतिक्रियाओं की रोकथाम के लिए एंटी–आइ.जी.ई. थेरेपी जैसे ओमालीजूमैब (Omalizumab) का क्लिनिकल अधध्यन व परीक्षण किया जा रहा है।

निष्कर्ष

खाद्य एलर्जी धीरे–धीरे एक विश्वव्यापी समस्या बनती जा रही है। इस से पहले कि यह एड्स व कैंसर की तरह लाइलाज बीमारी बन जाए, इसके कुछ गंभीर पहलुओं पर ध्यान देने की आवश्यकता है। अब तक बड़ी संख्या में, पौधों और पशुओं से उत्पन्न होने वाले विभिन्न एलर्जन्स की खोज की जा चुकी है और निरंतर नए खाद्य एलर्जन खोजे जा रहे हैं। खाद्य एलर्जी के निदान के लिए लगातार नए–नए तरीकों को विकसित किया जा रहा है जो कि पहले से ज्यादा सस्ते व विश्वसनीय हैं। विशिष्ट प्रतिरक्षा चिकित्सा (इम्यूनोथेरेपी), विरोधी आईजीई चिकित्सा (एंटी–आइ.जी.ई. थेरेपी) और मोनोक्लोनल एंटीबॉडी उत्पादन, खाद्य एलर्जी के चिकित्सा विज्ञान में बहुत ही महत्वपूर्ण मील के पत्थर साबित हुए हैं। प्रोसेस्ड तथा डिब्बाबंद खाद्य पदार्थों में खाद्य एलर्जन्स की खोज के लिए रीयल टाइम पी. सी. आर. (Real Time PCR) तथा एलाईजा (ELISA) अत्यंत महत्वपूर्ण तकनीक हैं। इन तकनीकों के द्वारा खाद्य पदार्थों मे छुपे हुए एर्लजन्स की पहचान की जा सकती है तथा संवेदनशील व्यक्तियों (विशेष रूप से छोटे बच्चों और बुजुर्गों) को उन खाद्य एर्लजन्स से बचाया जा सकता है। अंत में, खाद्य एलर्जी व इसके प्रभावों से निपटने के लिए मल्टीडिसीप्लीनरी दृष्टिकोण अपनाना अत्यावश्यक है।

सीनोरैबिडाइटिस एलिगन्स पर नैनोकणों की विषाक्तता का मूल्यांकन

योगेन्द्र नागर एवं अरुणा सतीश
ईकोटोक्सिकोलोजी प्रभाग, पर्यावरण विषविज्ञान विभाग
सी.एस.आई.आर.– भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
विषविज्ञान भवन, 31 महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ, 226001, उत्तर प्रदेश, भारत

नैनो तकनीकी से नवनिर्मित नैनोकणों का निर्माण और इस्तेमाल उनके अद्वितीय गुणों की वजह से उपभोक्ता उत्पादों में किया जा रहा है। उपभोक्ता उत्पादों में नैनोकणों के उपयोग होने से, इनके पर्यावरण में आने की संभावना बढ़ती जा रही है। जिससे पर्यावरण और मानव के स्वास्थ्य की सुरक्षा की चिंता बढ़ रही है। इन्हीं कारणों की वजह से नैनोकणों का विषाक्तता परीक्षण कई प्रकार के मॉडल जन्तुओं पर किया जा रहा है। इनमें से *सी. एलिगन्स* भी एक मॉडल जन्तु है, जिसका शरीर संरचनात्मक और जैविक रूप से सरल एवं पारदर्शी होने के कारण, इस जन्तु को नैनोकणों की विषाक्तता की जांच के लिए प्रयोग में लिया जा रहा है। अब तक *सी. एलिगन्स* पर 24 से अधिक आकार, प्रकार तथा माप के नैनोकणों का विषाक्तता परीक्षण किया जा चुका है। *सी. एलिगन्स* पर नैनोकणों के विषाक्तता का मूल्यांकन कर, नैनोकणों से मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण पर पड़ने वाले विषाक्तता को सफलतापूर्वक समझा जा सकता है। *सी. एलिगन्स* पर विषाक्तता परीक्षण का अध्ययन, निकट भविष्य मे नैनोकणों के प्रभाव के बारे में समझ को बढ़ाने में लाभदायक हो सकता है।

प्रस्तावना

नैनो तकनीकी (नैनो टेक्नोलोजी) 21वीं सदी का एक उभरता हुआ तकनीकी विज्ञान है जिसके अन्तर्गत नैनोमीटर (एक मीटर के एक अरबवें भाग के बराबर) पैमाने पर प्रदार्थों का निर्माण तथा उनके गुणों का अध्ययन किया जाता है। जब किसी भी पदार्थ के विशेष प्रकार, आकार और माप के नैनोकणों (NPs) का निर्माण किया जाता है तो क्वांटम प्रभाव के कारण से उनके भौतिक और रासायनिक गुणों में मूल प्रदार्थ की तुलना मे बहुत सारे नये बदलाव आ जाते हैं। नये गुणों की वजह से नैनोकणों को इलेक्ट्रॉनिक्स, कंप्यूटर, ऑटोमोबाइल, रक्षा, एयरोस्पेस, ऊर्जा, पर्यावरण, खाद्य, कृषि, आवास निर्माण, चिकित्सा और फार्मास्यूटिकल्स जैसे विभिन्न क्षेत्रों मे विकास करने के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है। यू.एस.ए. गवर्मेण्ट एकाउण्टेबिलिटी ऑफिस (USA Government accountability office GAO) की 2010 की रिपोर्ट के अनुसार नैनो तकनीकी और उत्पादों का विश्व बाजार, 2005–07 में लगभग 38–90 लाख डॉलर अनुमानित था और जिसके वर्ष 2020 तक लगभग 26–30 खरब डॉलर पहुंचने की उम्मीद है। कार्बन और धातु आधारित नैनोकणों का उत्पादन और उनसे निर्मित उत्पाद दुनिया भर में बढ़ते जा रहे हैं। कार्बन ब्लैक नैनोकणों का उत्पादन 10,000 टन, बेरियम ऑक्साइड का लगभग 15,000 टन, सीरियम ऑक्साइड (CeO_2) 2,80,000 टन, जिंक ऑक्साइड (ZnO) और टाइटेनियम ऑक्साइड (TiO_2) का 9.6 मिलियन टन आँका गया। विशिष्ट गुणों की वजह से उपभोक्ता उत्पादों में जिंक ऑक्साइड और टाइटेनियम ऑक्साइड नैनोकणों के उपयोग में वृद्धि हो रही है, जैसा कि कांच, सीमेंट, रबर, स्नेहक, पेंट, पिगमेंट, खाद्य पदार्थ (Zn पोषक तत्व के रूप में) और कॉस्मेटिक उत्पादों में। कार्बन ब्लैक नैनोकणों को वाहन के टायरों के निर्माण मे उपयोग किया जा रहा है। संक्रमण धातु आक्साइड जैसे कॉपर और लोहे के नैनोकणों को बड़े पैमाने पर उत्प्रेरक के रूप में, लिथियम आयन बैटरी में सुधार करने के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है। नैनो तकनीकी के माध्यम से नैनोक्ले और नैनोजीयोलाइट (मधु मक्खी के छत्ते की तरह) को विकसित किया है, जिनके नैनोफार्मस में नाइट्रोजन, पोटैशियम, फॉस्फोरस, कैल्शियम और आवश्यक पोषक तत्वों से भरा जाता है और जिसका

उपयोग कृषि क्षेत्र में देखा गया है। जैव–चिकित्सा के क्षेत्र में आयरन ऑक्साइड और सीरियम ऑक्साइड को (एंजाइमों के आधार पर) बायोसेंसर डिजाइन करने के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है, जिससे बीमारियों का नैदानिक निदान हो सकता है। कैडमियम सल्फाइड/जिंक सल्फाइड, क्वांटम डॉट्स, सुपर समचुंबक लोहे के आक्साइड नैनोकणों को जीवित प्राणियों और इन विट्रो संवर्धन में जैव इमेजिंग (इन्फ्रा रेड और प्रतिदीप्ति तकनीकी के माध्यम से) और फोटोअनकेजिंग के अध्ययन के लिए डिजाइन किया जा रहा है। चुंबकीय नैनोकणों को चुंबकीय अनुनाद इमेजिंग (एमआरआई), कैंसर सलयाकरण (चुंबकीय हाइपरथर्मिया या लक्षित कर दवाओं के माध्यम से), दवा वितरण और जीन के स्थानांतरण के तौर पर इस्तेमाल किया जा चुका है। लिपिड नैनोकणों (ठोस लिपिड नैनोस्ट्रक्चर्ड और लिपिड वाहक) को भी दवाओं के वितरण के लिए विकसित किया जा रहा है। सिल्वर ऑक्साइड (AgO) और नैनोक्ले जैसे नैनोकणों को व्यापक रूप से बैक्टीरियल प्रतिरोधक के रुप में खाद्य पदार्थों की पैकेजिंग और कोटिंग सामग्री में उपयोग किया जा सकता है। नेनोटेक्नोलोजी के विस्तार से नैनोकणों का बड़े पैमाने पर उत्पादन और उपभोक्ता उत्पादो में इस्तेमाल होने से पर्यावरण में पहुंचने की संभावनायें दिनो दिन बढ़ती जा रही है। वर्ष 2013 मे चालेव एवं सहकर्मियों ने अमेरिका के सतही जल में नैनोकणों का स्तर जैसे टाइटेनियम ऑक्साइड (24.5 माइक्रोग्राम/लीटर), सिल्वर Ag (10 माइक्रोग्राम/लीटर) और जिंक ऑक्साइड (74 माइक्रोग्राम/लीटर) का पता लगाया।

प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से नैनोकणों के प्राकृतिक जल निकायों (जलाशयों, झीलों, नदियों) में अपशिष्ट के रूप में निस्कासन से, जलीय तथा मृदा जीवों के लिए जोखिम की संभावना बढ़ गई है। नैनोकणों की पर्यावरण में उपस्थिति न केवल पर्यावरण के लिए हानिकारक है, अपितु इसका मानव जीवन के स्वास्थ्य पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है।

नैनोकणों का प्रयोग विभिन्न प्रकार के उपभोक्ता उत्पादों, खाद्य पदार्थों, कृषि, आवास निर्माण, चिकित्सा और फार्मास्यूटिकल्स जैसे विभिन्न क्षेत्र में होता है पर उसे करने से पहले इन नैनोकणों की विषाक्तता की जाँच कर लेना बहुत आवश्यक है। पिछले वर्षों के वैज्ञानिक अध्ययनों से पता चला है कि सिल्वर, जिंक ऑक्साइड, टाइटेनियम ऑक्साइड, कॉपर ऑक्साइड, सिलिकन डाई ऑक्साइड और कार्बन नैनो ट्यूब के नैनोकण बैक्टीरिया, शैवाल, क्रसटेशियन, निमाटोड और मछलियों पर विषाक्त पाये गए है। नैनोकण का द्विआधारीय मिश्रण जलीय जीव *डेफ्नीया मेग्ना* (*Daphnia magana*) के लिए अधिक विषाक्त पाया गया। साल्मोनेला बैक्टीरिया में मैग्नेटाइट के नैनोकण उत्परिवर्तजनीयता और जीनोटाक्सिसिटी को प्रेरित करते है। जबकि कॉपर आक्साइड एल्यूमीनियम ऑक्साइड और जिंक ऑक्साइड के नैनोकण न केवल कशेरुकी अपितु अकशेरुकी जीवों की तंत्रिका तंत्र को भी नुकसान पहुँचाते हैं। एक अन्य अध्ययन में पाया गया है कि जिंक ऑक्साइड, कॉपर ऑक्साइड और निकिल ऑक्साइड के नैनोकण समुद्री जल जीवों के अंदर जमा हो जाते है। नैनोकणों का जीवों में जमाव, ऊपरी उपभोक्ता (मछली और पक्षियों) जीवों के लिए विषाक्तता की संभावनायें उत्पन्न करता है। जो एक जलीय पारिस्थितिक तंत्र के लिए भी खतरा है।

भविष्य में नैनोकणों से उत्पन्न होने वाले खतरों से पर्यावरण और मानव के स्वास्थ्य की सुरक्षा को ध्यान में रख कर राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय ऑर्गनाइजेशन जैसे कि भारतीय मानक प्राधिकरण (BIS), अमेरीकन पर्यावरण संरक्षण संस्था (EPA) खाद्य एवं औषधि प्रशासन (FDA), यूरोपियन कमीशन (European Commission) और यूरोपीय रासायनिक एजेंसी (ECHA) आदि नैनोकणों के इस्तेमाल के लिए नए मापदंडों को निर्धारित कर रही है। रेग्युलेटरी ऑर्गनाइजेशन को नैनोकणों की विषाक्तता को जाँचने के लिए –

नये सिद्धांतों का विकास करने की आवश्यकता है, जिससे नैनोकणों की विषाक्तता का मूल्यांकन किया जा सके।

ऐसे परिणामिक पाथवेज का पता करने की जरूरत है

जो नैनोकणों के जोखिम से प्रभावित होते हों।

ऐसे उपकरणों का विकास करने की आवश्यकता है जिनके माध्यम से शीघ्रता से नैनोकणों की विषाक्तता का मूल्यांकन किया जा सके और नैनोकणों की विषाक्तता के प्रति ज्ञान को विकसित करने की आवश्यकता है जिससे पर्यावरण और मानव स्वास्थ की सुरक्षा की जा सके।

इन्हीं कारणों की वजह से नए डिजाइन के नैनोकणों की विषाक्तता के बारे मे शोध और अध्ययन की जरूरत है। विषवैज्ञानिकों द्वारा नैनोकणों की विषाक्तता मूल्यांकन के लिए कई प्रकार के मॉडल का इस्तेमाल किया जा रहा है। जैसे कि *ई.कोलाई, ड्रोसोफिला, डैफ्नीया, सी. एलिगन्स,* और चूहे। नैनोंकणो की विषाक्तता के लिए उच्च मॉडल जन्तु जैसे चूहों और खरगोश को इसलिए प्रयोग में लाया जाता है, क्योंकि इनकी मनुष्य के साथ जीनोमिक समानताएँ अधिक होती है परंतु नैतिक कारणों की वजह से और भारी संख्या मे जानवरों की आवश्यकता होने से आमतौर पर बहुत प्रकार के नैनोकणों की जाँच के लिए उच्च मॉडल जीवों का उपयोग कठिन होता है। उच्च मॉडल जीवो पर बहुत प्रकार के नैनोकणों की विषाक्तता अध्ययन करना ज्यादा खर्चीला होगा और साथ ही साथ बहुत ज्यादा समय की भी आवश्यकता होगी। यूरोपीय रासायनिक एजेंसी (ECHA) का व्यावहारिक गाइडलाइन–10 बताता है कि वैकल्पिक मॉडल के इस्तेमाल कर, अनावश्यक ही उच्च मॉडल जीवों पर परीक्षण से बचा जा सकता है। 21 वीं सदी मे शोधकर्ताओं को विषाक्तता परीक्षण के लिए वैकल्पिक मॉडल पर ध्यान केंद्रित करने की और सुरक्षा के मूल्यांकन के लिए ज्ञान के आधार को विकसित करने की आवश्यकता है।

विभिन्न प्रकार के वैकल्पिक मॉडलों में से नैनोकणों की विषाक्तता परीक्षण के लिए *सी. एलिगन्स* को भी इस्तेमाल किया जा रहा है क्योंकि यह मिट्टी में पाया जाने वाला निमेटोड है। इसमे द्विलिंग और पुरुष होते है, इसको प्रयोगशाला मे आसानी से कल्चर किया जा सकता है और इससे किसी प्रकार रोग नही होता है। *सी. एलिगन्स,* बैक्टीरिया *ई.कोलाई* OP_{50} को भोजन के तौर पर खा लेता है तथा इसे द्रवित और अर्ध ठोस सतह पर कल्चर किया जा सकता है। जिसके कारण *सी. एलिगन्स* पर नैनोकणों को द्रव्य प्रदार्थों मे समान रूप से विसरित करके उनके प्रभावों का आसानी से परीक्षण किया जा सकता है।

सी. एलिगन्स के अंदर कुछ विशेषताएँ होती हैं जिसकी वजह से वैज्ञानिकों को नैनोकणों की

चित्र 1 : *सी. एलिगन्स* में नैनोकणों का वितरण

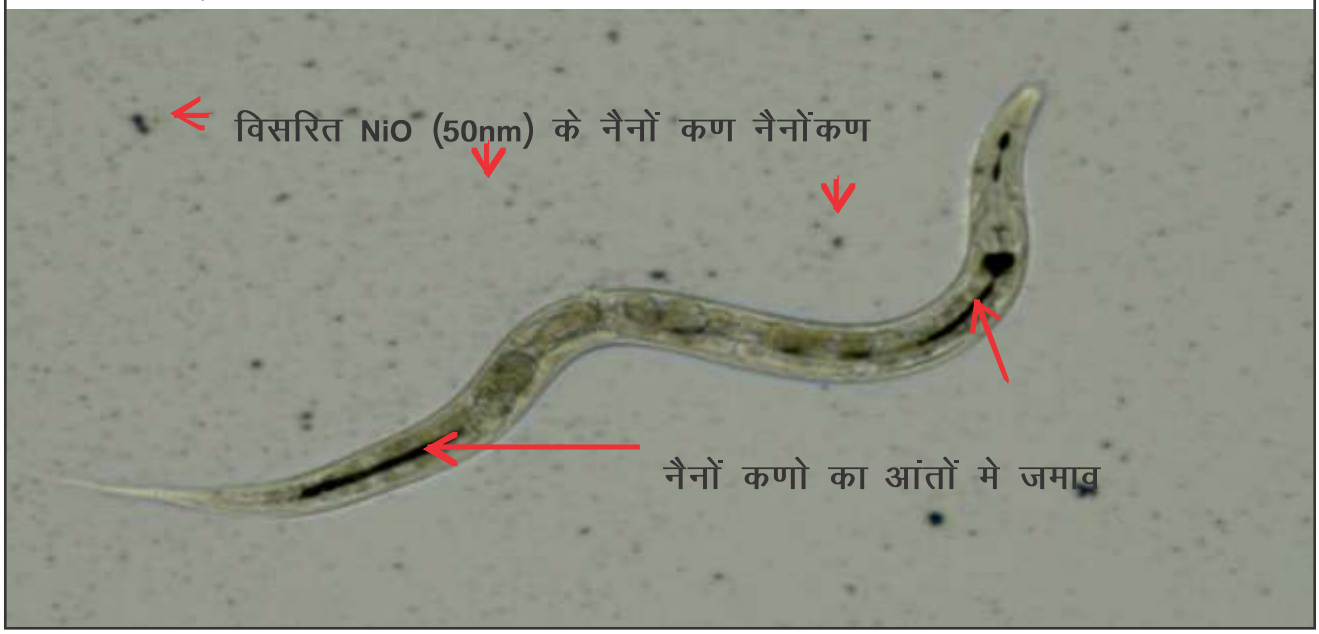

विषाक्तता अध्ययन के लिए अपनी ओर आकर्षित करती है जो निम्नलिखित है–

1. *सी. एलिगन्स* का शरीर पारदर्शी, संरचनात्मक और जैविक रूप से सरल होता है जिसकी वजह से यह नैनोकणों के विश्लेषण करने के लिए उपयुक्त है। क्वांटम डॉट्स और फ्लोरोसेंट नैनोकणों का अवशोषण, वितरण, चयापचय और उत्सर्जन के साथ–साथ नैनोकणों के प्राइमरी और सेकेण्ड्री अंगों में स्थानान्तरण वाले पथ के निर्धारण का प्रणालीगत

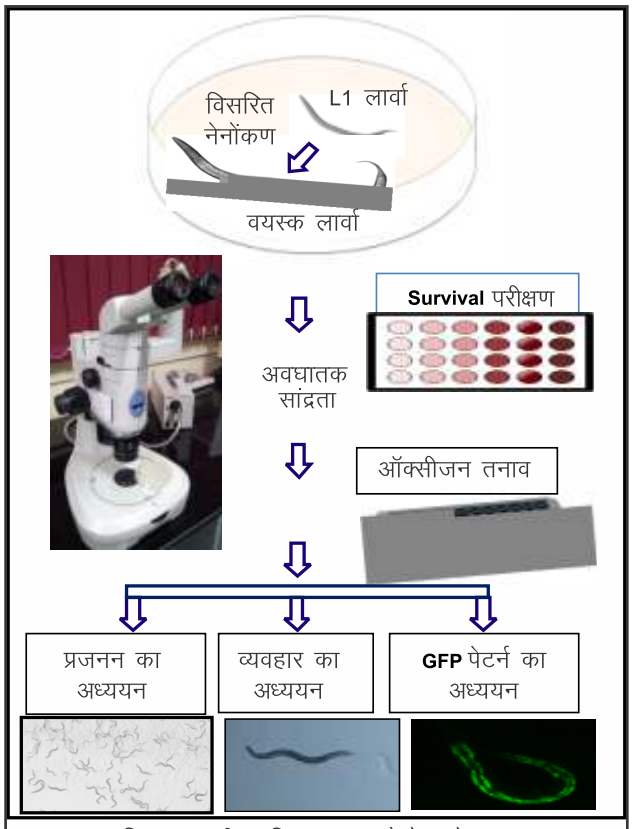

चित्रः 2 *सी. एलिगन्स* पर नैनोकणो का जाँच परीक्षण की रूपरेखा।

अध्ययन बायो–इमेजिंग की मदद से कर सकते हैं।

2. *सी. एलिगन्स* की चार लार्वा अवस्थाये L_1-L_4 होती है और 3 दिनों का जीवन चक्र होता है जिसकी वजह से इसके उपर 6 घंटों से लेकर 72 घंटों के चरणों में भी अध्ययन किया जा सकता है और साथ ही साथ छोटा जीवन काल होने के कारण (लगभग 3 सप्ताह) नैनोकणों का जीवन काल पर पड़ने वाले प्रभावों का भी मूल्यांकन कर सकते है।

3. इसका आकार अत्यंत छोटा (~1मिलीमीटर) होने के कारण मल्टी वेल प्लेट में नैनोकणों का परीक्षण कर सकते है और प्रभावों को जैव रासायनिक जांच और हरित प्रतिदीप्ति प्रोटीन (GFP) से जुड़े स्ट्रेस बायोमार्कर का क्रमशः ऑप्टिकल घनत्व और प्रतिदीप्ति की तीव्रता को माप कर प्रतिकूल प्रभावों का आसानी से पता लगा सकते है।

4. सरल तंत्रिका तंत्र होने के कारण नैनोकणों के जोखिम के खिलाफ, व्यवहार पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना आसान है।

5. *सी. एलिगन्स* के पूरे जीनोम का डीएनए अनुक्रम निर्धारण वर्ष 1998 में हो चुका है। जिससे *सी. एलिगन्स* के जीन का मानव के साथ 60–80% अनुरूपता का पता चलता है, और 17 मे से 12 सिग्नल ट्रांसडक्शन पाथवेज़ मानव में संरक्षित देखे गये है। *सी. एलिगन्स* के 3000 से अधिक उत्परिवर्ती उपभेदों के साथ साथ कई प्रकार के ट्रांसजेनिक जीएफपी प्रजातीय सीनोरैहब्डिटिस जेनेटिक सेन्टर (सीजीसी), मिनेसोटा विश्वविद्यालय (मिनियापोलिस, एम.एन., संयुक्त राज्य अमरीका) पर उपलब्ध हैं।

6. पूरा जीनोमिक डेटा, वेबसाइट http://www-wormbase-org पर उपलब्ध है जो अध्ययन की योजना को निर्मित करने में सहायक होती है और विभिन्न समूहों के बीच तुलनात्मक आंकड़ों के विश्लेषण के लिए एक उपकरण की भाँति काम ले सकते है। नैनोकणों की विषाक्तता को बेहतर ढंग से समझने के लिए, *सी. एलिगन्स* के आरएनएआई संग्रहण (लाइब्रेरी) का उपयोग कर विषाक्तता के लिए जिम्मेदार व्यक्तिगत जीनों के कार्यो का पता कर सकते है।

7. *सी. एलिगन्स* के लिए उपलब्ध विभिन्न प्रकार के आणविक, आनुवंशिक और जीनोमिक उपकरणों और तकनीकी के प्रयोग द्वारा नैनोकणों का मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों को सफलतापूर्वक समझ सकते है।

इन सब विशेषताओं के कारण *सी. एलिगन्स* पर 24 से अधिक माप, आकार तथा प्रकार के नैनोकणों का परीक्षण किया जा चुका है। साथ ही साथ नैनोकणों

और नैनो–डिवाइस का जैव चिकित्सा की दृष्टि से विषाक्तता स्क्रीनिंग के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है। *सी. एलिगन्स* में नैनोकणों के विषाक्तता के मूल्यांकन का वर्णन निम्न प्रकार है–

1. नैनोकणों का *सी. एलिगन्स* के विकास, प्रजनन और तंत्रिका तन्त्र पर प्रभाव

सी. एलिगन्स को विसरित नैनोकणों के साथ 6–72 घंटो के लिए जोखिम दे कर उनके उपर घातक सान्द्रता (LC) का निर्धारण किया जा चुका है। टाइटेनियम ऑक्साइड, जिंक ऑसाइड (4nm and 10nm) और एलुमीनियम ऑक्साइड नैनोकणों की LC_{50} (जिस सान्द्रता पर 50% वर्म मर जाते है) क्रमशः 2.3–माइक्रोग्राम/लीटर, 80–माइक्रोग्राम/लीटर और 82–माइक्रोग्राम/लीटर *सी. एलिगन्स* पर निर्धारित हुई है। खरे और उनके सहकर्मियों ने टाइटेनियम ऑक्साइड तथा जिंक ऑसाइड के <25nm के नैनोंकणो का क्रमशः 77 मिलीग्राम/लीटर और 0.32 मिलीग्राम/लीटर LC_{50} सूचित किया। सिल्वर के नैनोकण (10नैनोमीटर) लार्वा के विकास को धीमा कर देते हैं। जिंक ऑक्साइड, टाइटेनियम ऑक्साइड और सिलिकान ऑक्साइड के एक ही आकार (10 नैनोमीटर) के नैनोंकणो मे *सी. एलिगन्स* की L_1 लार्वा अवस्था पर जिंक ऑक्साइड के नैनोंकण अधिक विषाक्त पाये गए। *सी. एलिगन्स* के प्राथमिक अंगों में क्यू डी का संचय होने से सीधे वर्म की शारीरिक क्रिया प्रभावित होती है। जिंक सल्फाइड क्यू डी ZnSQD लार्वा के विकास को अवरुद्ध करती है। कोर कैडमियम सेलेनियम/जिंक ऑक्साइड (Core CdSe/ZnS) और एंडोहेड्रल मैटालोफूलेरिन डेरिवेटिव(derivative), Gd/C(82)(OH)core(22) के नैनोकणों का लघु अवधि (एक पीढ़ीगत) और कई पीढ़ियों तक (बहुप्रक्षीयत) विषाक्तता परीक्षण का अध्ययन कर, कॉट्रेराज और उनके साथियों ने बताया कि यह नैनो कण पहली पीढ़ी से लेकर चौथी पीढ़ी तक विकासात्मक (उम्र, प्रजनन और विकास) और व्यवहार में असमानताएँ उत्पन्न कर देते हैं। प्लेटिनम के नैनोकण *सी. एलिगन्स* में सुपर ऑक्साइड डिस्म्यूटेस और कैटालेज एंजाइमों के अनुकरण में वृद्धि को बढ़ा देते है जिससे *सी. एलिगन्स* के जीवन काल में वृद्धि हो जाती है टाइटेनियम ऑक्साइड के 25 नैनोमीटर से छोटे नैनोंकण *सी. एलिगन्स* की उपापचय पाथवेज में अड़चन पैदा करते है। भोजन के रूप में *ई कोलाई* जब शरीर में जाता है तो उनके साथ नैनोकण भी प्रवेश कर जाते हैं और प्राथमिक अंगों (आंत के उपकला कोशिकाओं) के माध्यम से द्वितीय अंगों (न्यूरॉन्स और प्रजनन अंगों) तक पहुँच जाते हैं। बहुदीवार कर्बन नैनो ट्यूब (MWCNTs) के विषाक्त प्रभाव प्राथमिक (आंत) एवं अन्य अंगों पर इसी तरह प्रवेश के कारण होते हैं। बहुदीवार कार्बन नैनोट्यूब *सी. एलिगन्स* की जर्मलाइन और शुक्रगाहिका मे पहुंचने से प्रजनन और व्यवहार पर विपरीत प्रभाव डालते हैं। लेकिन कार्बोलिक एसिड और पॉली इथाइलीन ग्लाइकॉल की कोटिंग एमडब्ल्यूसीएनटी पर करने से स्थानान्तरण रुक जाता है और अंगों पर कोई प्रभाव नही पड़ता। टाइटेनियम ऑक्साइड और जिंक ऑसाइड के नैनोकण भी *सी. एलिगन्स* के विकास और प्रजनन को प्रभावित करते है। सीरियम ऑक्साइड (15 और 45 नैनोमीटर) और टाइटेनियम ऑक्साइड (7 नैनोमीटर) के नैनोकण साइटोक्रोम पी 35 ए 2 ($cyp_{35}a_2$) जीन की उच्च अभिव्यक्ति के लिए जिम्मेदार पाये गए जिसकी वजह से *सी. एलिगन्स* की प्रजनन की क्षमता घट जाती है।

चित्र 3 : (अ.) UNC-25 GFP टैग्ड प्रोटीन का असमान्य वर्म के GABAergic न्यूरॉन्स मे अभिव्यक्ति, (ब.) TiO_2 (<25 नैनोमीटर) treated वर्म की GABAergic न्यूरॉन्स मे UNC-25 की क्षति।

सी. एलिगन्स मे न्यूरॉन और मांसपेशियों प्रणालियों के सरल होने और व्यवहार का आसानी से अध्ययन होने की वजह से नैनोकणों की न्यूरोटॉक्सिटी स्क्रीनिंग में इसका इस्तेमाल किया गया है। इसका तंत्रिका तंत्र कुल 302 न्यूरॉन से बना होता है। इसका दैहिक तंत्रिका तंत्र 282 न्यूरॉन्स से तथा ग्रसनी तंत्रिका तंत्र 20 न्यूरॉन्स से मिलकर बना होता है। *सी. एलिगन्स* मे पांच प्रमुख न्यूरोट्रांसमीटर होते हैं, कोलिनर्जिक, गाबा अमीनो ब्यूटाईरिक एसिड (GABAergic), ग्लूटानर्जिक, डोपामिनर्जिक (Dopamine) और सीरोटोनार्जिक, कृमि का व्यवहार जैसे कि हेड ट्रेशेज, बॉडी बैंड ग्रसनी पंप, अंडा निष्काशन और संभोग व्यवहार आदि का अध्ययन किया जाता है। GABAergic और उत्तेजक कोलोनरजिक न्यूरॉन मोटर कार्यों के लिए होते हैं। कोलोनरजिक संचरण प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कई व्यवहार में भूमिका निभाता है। जीएफपी ट्रांसजेनिक प्रजाति मे टाइटेनियम ऑक्साइड (4 नैनोमीटर) (0.01–23.1 मिलीग्राम / लीटर) के नैनोकणों के जवाब में एवीएल और डीवीबी न्यूरॉन्स पर प्रभाव देखा गया। जो उसके बॉडीबेन्ड और हेड ट्रैशेश व्यवहार को प्रभावित करता है। ली और उनके सहकर्मीयों ने वर्ष 2013 में बताया है कि एल्युमीनियम ऑक्साइड के नैनोकण न्यूरो ट्रांस्पोर्टर जैसे कि ईट–4 (ग्लूटामेट ट्रांसपोर्टर), मोड–5 (सीरोटॉनिन ट्रांसपोर्टर) और डैट–1 (डोपामीन ट्रांसपोर्टर) में अडचन उत्पन्न करते है जिससे *सी. एलिगन्स* के व्यवहार में कमी आती है। रतनशेखर एवं सहकर्मियों ने 2015 में बताया कि टाइटेनियम ऑक्साइड के 25 नैनोमीटर से छोटे नैनोंकण (7.7 और 38.5 मि.ग्रा. / मि.ली.) गाबानर्जिक न्यूरॉन को प्रभावित करते हैं।

मरकेप्टो सक्सीनिक एसिड कैप्ड क्वाण्टम डॉटस अंडा निष्कासन में दोष उत्पन्न करती है जिसके कारण अंडा बाहर नहीं आ पाता और अंडा जनक निमेटोड के अंदर हैच हो जाता है। जिसे बैगिंग कहते है। बैगिंग के कारण जनक निमेटोड की मृत्यु हो जाती है।

2. नैनोकणों की विषाक्तता के कारण और उनसे प्रभावित सिगनल ट्रांसडक्शन पाथवेज एवं जीन नैनोकणों की विषाक्क्ता उनके माप, आकार और प्रकार पर निर्भर करती है। नैनोकण आकार में छोटे होने की वजह से उनके ब्लॉक कणों की तुलना में आसानी से शरीर में पहुँच जाते हैं और प्राथमिक तथा माध्यमिक अंगों को प्रभावित करते हैं तथा उनके सतह पर चार्ज घनत्व अधिक होने से ये बहुत ज्यादा विषाक्क्ता उत्पन करते हैं। कई नैनो कण प्राथमिक विघटन से आयनिक प्रजातियों (जैसे जिंक आक्साइड मे Zn^{2+}) को निष्कासित करते हैं जो विषाक्त होती हैं। फोटो उत्प्रेरक जिंक ऑक्साइड और टाइटेनियम ऑक्साइड नैनोकण प्रकाश की उपस्थिति में प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों (ROS) का उत्सर्जन करते हैं, जो नैनोकणों की विषाक्ता के लिए जिम्मेदार कारक हैं। निमेटोड के अंदर देखा गया है की टाइटेनियम ऑक्साइड, जिंक ऑक्साइड सिल्वर, सेरियम ऑक्साइड, कैडमियम, फुलुरेन, क्वाण्टम डॉटस, सिलिकॉन ऑक्साइड जैसे विभिन्न प्रकार के नैनोकण और संशोधित सक्सीनिक एसिड क्यू डी

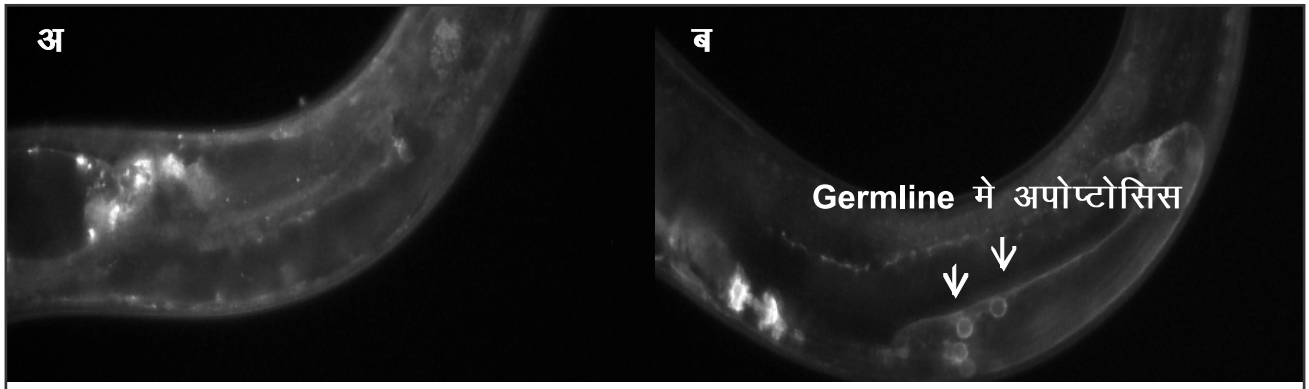

चित्र 4 : ZnO के बल्क कणो (अ) की तुलना मे <11नैनोमीटर के नेनोंकणो (ब) के द्वारा germline मे अपोप्टोसिस का उत्प्रेरण

तालिका 1 : *सी. एलिगन्स* पर नैनोकणों की विषाक्तता।		
नैनोंकण तथा माप	**सांद्रता तथा लार्वा अवस्ता, समय**	**विषाक्तता**
एलुमिनियम ऑक्साइड (60नैनोमीटर)	8.1-30.6 मिग्रा / ली. (24-h) 23.1-30.6 मिग्रा / ली. (10 days) 0.01-23.1 मिग्रा / ली.	आंतों में लिपोफ्यूसीन का जमाव आंतों में आटो फ्लोरिसेंस को बढ़ावा गति व्यवहार में कमी
एमोर्फस सिलिका (50नैनोमीटर)	2.5 मिग्रा / ली. (24-h)	Bagging में बढ़ावा और प्रजनन में कमी
सिलिकॉन ऑक्साइड NPs (30नैनोमीटर)	5 माइक्रोग्राम / ली.,L1 to Adult	गति व्यवहार में कमी
सीरियम ऑक्साइड (15,45 नैनोमीटर)	1 मिग्रा. / ली	प्रजनन में कमी
सीरियम ऑक्साइड (8.5 नैनोमीटर)	एल1–एल4	विकास में रूकावट और जीवन काल में कमी
सिल्वर (10 नैनोमीटर)	10 माइक्रोग्राम / ली., एल1–एल4	लारवा के विकास में रूकावट
डी एम एस ए कोटेड आयरन ऑक्साइड	100 माइक्रोग्राम / ली., एल1–एल4	गति व्यवहार में कमी और ROS की उत्पत्ति
आयरन ऑक्साइड	एल1–एल4 लार्वा	गति व्यवहार में कमी
हड्रोक्सीलटेड–फुलिरेन	100 माइक्रोग्राम / ली., एल4	जीवन काल में कमी
जिंक ऑक्साइड (30 नैनोमीटर)	>0.05 माइक्रोग्राम / ली., एल1–एल4	गति व्यवहार प्रभावित
सिलिकॉन ऑक्साइड (30 नैनोमीटर)	>5 माइक्रोग्राम / ली., एल1–एल4	गति व्यवहार प्रभावित
टाइटेनियम ऑक्साइड (4 तथा 10 नैनोमीटर)	1 नैनोग्राम / ली., एल1–एल4	गति व्यवहार में कमी
7 नैनोमीटर	1 मिग्रा / ली., एल1–एल4	प्रजनन में कमी
30 नैनोमीटर	>0.05 माइक्रोग्राम / ली.	गति व्यवहार प्रभावित
क्यू डी स्कोर और कोर शेल (CdSe/ZnS)	10 मिग्रा / ली.	अनेक पीढ़ियों तक विकास और गति व्यवहार प्रभावित
क्यू डी एम एस ए (मरकैपटोसक्सिनिक एसिड)	1 माइक्रोमोल	अंडा निष्कासन में कमी
बहु दीवार कार्बन ननो ट्यूब	0.1 माइक्रोग्राम / ली.	आंतों में नुकसान
एमाइड मॉडिफाइड एस डब्लू सी एन टी		विकास मे रुकावट, जीवन काल मे और अंडा उत्पादन मे कमी
ग्राफीन ऑक्साइड	0.5–100 मिग्रा / ली.	प्राथमिक एवं माध्यमिक अंगो को नुकसान
नैनो पी टी	0.5 मिलीमोल	जीवन काल में बढ़ोत्तरी

और मरकेप्टो सिट्रेट कोटेड गोल्ड के नैनोकण ऑक्सीडेटिव तनाव को उत्पन्न करते हैं। कोशिकाओं में रिएक्टिव ऑक्सीजन स्पीशीज़ का ऊंचा स्तर डीएनए की क्षति, लिपिड झिल्ली की अखंडता और प्रोटीन के कार्बोनाइलीकरण को प्रेरित करता है जिससे जैव अणुओं की संरचना और कार्य में परिवर्तन आ जाता है। नैनोंकणो की वजह से ऑक्सीजन तनाव अधिक होने के कारण कोशिकाओं के भीतर के

तालिका 2 : नैनोकणो के प्रति *सी. एलिगन्स* मे जीनो के अभिव्यक्ति पैटर्न।

नैनोकण एवं माप	समय एवं सान्द्रता	जीन का नाम	अप एवंडाउन
सीरियम ऑक्साइड (15,30,45नैनोमीटर)	24 घंटों	*hsp-16.1, hsp-16.2, cyp35a2, gst-4, mtl-1*	↑
		cdr-1 कैडमियम रेस्पॉन्सिव sod-1 (सुपरऑक्साइड	↑
		डिस्म्यूटेज ctl-1 (catalase-1) cep-1 (सी.एलिगन्स)	↑
		P-53-like प्रोटीन)	↑
टाइटेनियम ऑक्साइड (7 नैनोमीटर)	24 घंटों	*cyp35a2, cep-1, ape-1* (अपोपटॉसिस वर्धक)	↑
		vit-2 (वाई टेलोजेनिंन स्ट्रक्चल जीन), *vit-6*	↑
सिट्रेट कोटेड गोल्ड (4नैनोमीटर)	5.9 मि.ग्रा./ली.	26 pqn/abu genes (नॉन कैनोनिकल अनफोल्डेड	↑
		प्रोटीन पथवेस)	↑
		hsp-16.1 hsp-70, hsp-3, hsp-4	↑
सिल्वर	0.1–0.5 मिग्रा./ली.	*cyp35a2, hif-1* हाई पोक्सिया इंड्यूस फैक्टर)	↑
		egl-9 (egg laying defective - 9 gene)	↑
		fmo-2 फ्लेविन मोनो ऑक्सीजीन्स 2 gene)	↑
		sod-3, daf-12 (डायर फार्मेशन प्रोटीन –12)	↑
सिल्वर 20 नैनोमीटर	24 घंटों	*Hsp-16.1, hsp-16.2, hsp-16.41 hsp-70*	↑
		col-131 and *col-101* (कॉलेजनस)	↑
		daf-12 and *daf-21* (Abnormal dauer formation	↑
		प्रोटीन), *age-1* (एजिंग अल्टरेशन प्रोटीन)	↑
		sod-1, sod-3, gst-1, ctl-2,ctl-3 mtl-1 and *mtl-2*	↑
एलुमिनियम ऑक्साइड 60 नैनोमीटर	10 घंटों	sod-2, sod-3	↓
		ubq-1 (युबिक्विटीन प्रोटीन –1)	↓
			↑

वातावरण को समस्थैतिकता बनाए रखने के लिए, कोशिकाओं मे कई सारे जैव रसायनिक बदलाव होते है जैसे कि सुपर ऑक्साइड डिस्म्यूटेज, कैटालेज , ग्लूटाथायोन एवं ट्रांसफरेज (जीपीएक्स), और थायोरिडाक्सिन रिडक्टेज जैसे एंटीऑक्सीडेंट का अधिक होना। एलुमीनियम ऑक्साइड के नैनोकण *सी. एलिगन्स* में लिपिड परऑक्सिडेशन को प्रेरित करते हैं जिसकी वजह से L_4 लार्वा मे लीपोफ्यूजिन का जमाव देखा गया। वर्ष 2012 में इओम और उनके साथियों ने बताया है कि सिल्वर ऑक्साइड के नैनो कण (10 नैनोमीटर) सिग्नल ट्रांसडक्शन को सक्रिय करते है तथा PMK-1 p_{38} MAPK के माध्यम से प्रजनन विषाक्तता उत्पन्न करते हैं। वर्ष 2015 में खरे और उनके साथियों ने बताया कि जिंक ऑक्साइड के 11 नैनोमीटर के नैनोकणों के द्वारा आईजीएफ/इंसुलिन सिगनल ट्रान्सड्क्सन के सक्रिय होने से एपोपटोटिक जीनों की अभिव्यक्ति बढ़ जाती है जो *सी. एलिगन्स* की जननांगों मे एपोप्टोसिस को बढ़ावा देते हैं फलतः प्रजनन कम हो जाता है। हाइड्रो जाइलेटिड फ्लोरीन के नैनोंकण भी एपोप्टोसिस के माध्यम से कोशिका की मृत्यु को प्रेरित करते हैं।

सी. एलिगन्स में जीनों की अभिव्यक्ति पैटर्न पर नैनोकणों के प्रभाव के असंतुलन को भी प्रेरित करते हैं (संक्षेप वर्णन तालिका 2 में) जिसके कारण वर्म का भौतिक प्रारूप भी प्रभावित होता है। वर्ष 2009 रोह और उनके साथियों ने माइक्रोऐरे विश्लेषण के आधार पर बताया कि 1217 जीनों की अभिव्यक्ति पैटर्न में मात्रात्मक बदलाव आ जाते हैं जब *सी. एलिगन्स* को सिल्वर ऑक्साइड के नैनोंकण का जोखिम देते है। दूसरे अध्ययन मे झांग उनके साथियो ने वर्ष 2012 मे कॉपर ऑक्साइड नैनोकणों की विषाक्तता के खिलाफ 3 जीनों (TBA-1, Y45F10D-4 और PMP-3) को जिम्मेदार बताया।

जैव चिकित्सा की दृष्टि से बायो–सेंसर और नैनो–डिवाइस का *सी. एलिगन्स* में अध्ययन

सी. एलिगन्स के पारदर्शी, प्रभावी लागत और सुरक्षित होने की वजह से इसके ऊपर कई प्रकार के नैनोप्रोब और डिवाइस का विषाक्तता का परीक्षण किया जा रहा है जिस की वजह से जैव चिकित्सा के लिए बायो–सेंसर और बायो ईमेजिंग को विकसित करने में प्रयोग किया जा सकता है। वर्ष 2011 में झोउ और उनके साथियों ने मिलकर बायोप्रोब NaYF(4),Yb,Tm नैनोक्रिस्टल को बिना विषाक्तता के *सी. एलिगन्स* के आंत की इमेजिंग के लिए विकसित किया। चौहान और उनके साथियों ने वर्ष 2013 मे प्रतिदीप्ति माइक्रोस्कोपी की सहायता से एक मानक के रूप में फ्लोरोफोर 5 (और –6) कार्बोक्सी टेट्रा मिथाइल रोडामीन (Tamra) जैसे नैनो कंजुगेट्स का विकास किया, जिसका उपयोग करके *सी. एलिगन्स* की आंतों और ग्रसनी की pH को मापा गया और पाया कि ल्यूमेन के पीछे आंत का पीएच 3.59 ± 0.09 तथा पूर्वकाल ग्रसनी में 5.96 ± 0.31 होता है। चुंबकीय बायोकम्पेटिबल नैनोकण (आयरन आक्ससाइड क्लेड) को बाहरी चुंबकीय क्षेत्र का उपयोग कर, बिना किसी व्यवहार्यता और प्रजनन में फेरबदल के शरीर से अलग करने मे सफलता हासिल हुई।

भविष्य की भावी संभावनाएं

नैनोकणों की विषाक्ता के लिए *सी. एलिगन्स* को भविष्य में मॉडल के तौर पर उपयोग कर सकते हैं। यह एक सरल और बहुत अध्यनित मॉडल जन्तु है तथा इसका जीनोमिक डेटा बेस, उत्परिवर्ती और जीएफपी उपभेदों की उपलब्धता होने से यह नैनोकणों के उभरते प्रदूषण के जहरीले प्रभाव के बारे में हमारी समझ को बढ़ाने के लिए मददगार हो सकता है। इसकी पारदर्शिता की वजह से बायो–सेंसर और बायो ईमेजिंग को विकसित करने के लिए नये–नये नैनोमटिरियल पता करने में और नैनो उपकरणों को विशेष प्रयोजन के लिये बनाने मे, एक फायदे मंद मॉडल साबित हो सकता है। नए डिजाइन नैनो–डिवाइस का जैव चिकित्सा के प्रयोजन हेतू, सुरक्षित उपयोग के लिए विषाक्तता मूल्यांकन में कारगर हो सकता है। नवनिर्मित नैनो यौगिकों और नैनो उपकरणों को दवाओं का लक्ष्य–निर्धारण के लिए और बायोकाम्पेटिबल बनाने के लिए, *सी. एलिगन्स* के ऊपर प्राथमिक विषाक्तता जांचकर, शोध की प्रभावी लागत तथा समय में कमी कर सकते है। *सी. एलिगन्स* का संक्षिप्त जीवन चक्र बहुपीढ़ीगत विषाक्तता विश्लेषण करने के लिए एक खुला अवसर भी देता है।

स्वर्ण जयंती प्रकाशन

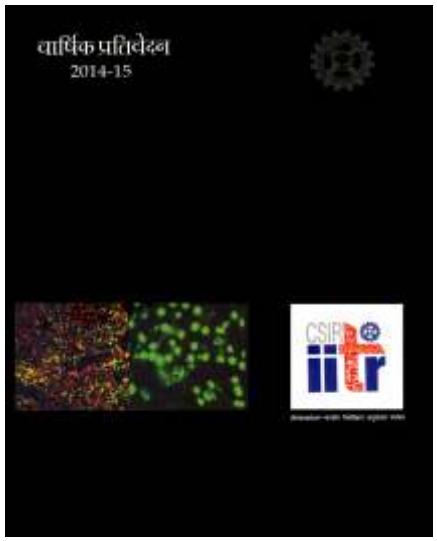

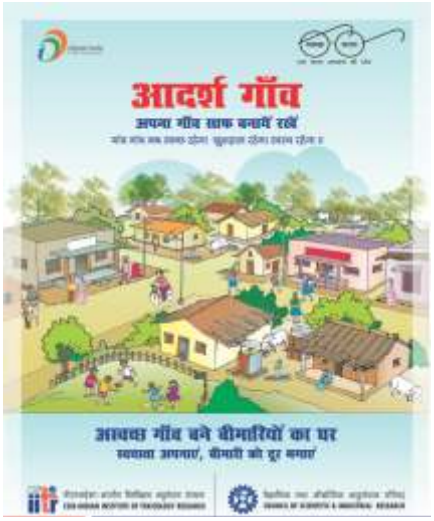

हिंदी सप्ताह उद्घाटन समारोह

अनुवाद प्रतियोगिता

आशुभाषण प्रतियोगिता

निबन्ध लेखन एवं टिप्पणी प्रतियोगिता

हिंदी सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता

हिंदी सप्ताह पुरस्कार वितरण समारोह

पाठकों के पत्र

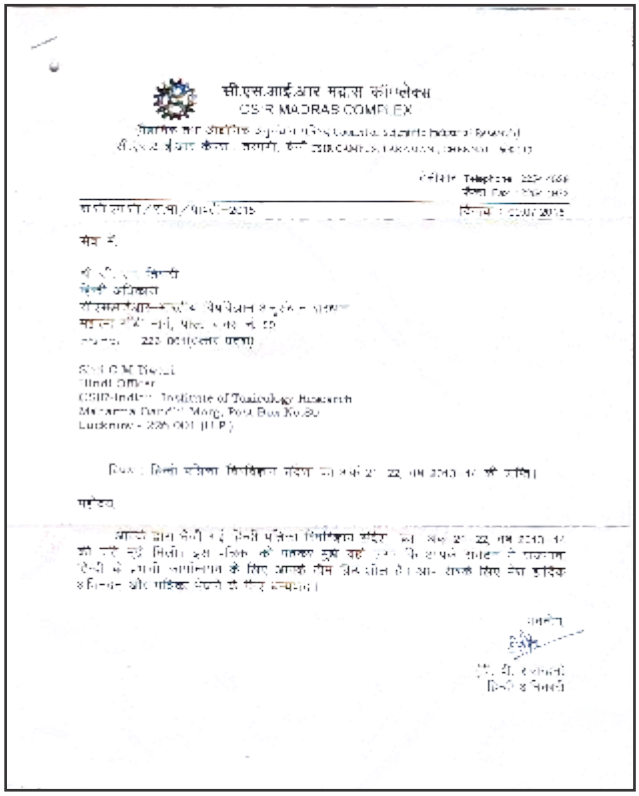
सी.एस.आई.आर मद्रास कॉम्प्लेक्स
CSIR MADRAS COMPLEX

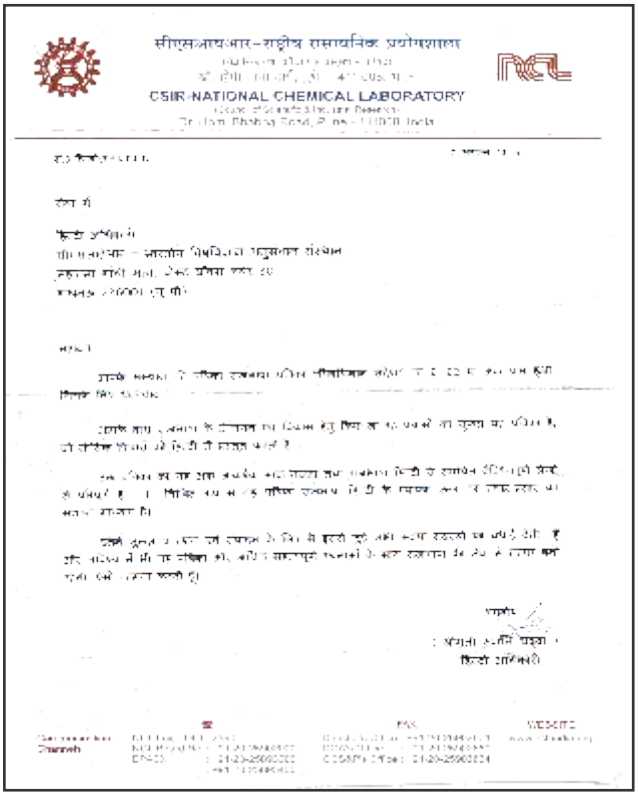
सीएसआयआर–राष्ट्रीय रासायनिक प्रयोगशाला
CSIR-NATIONAL CHEMICAL LABORATORY

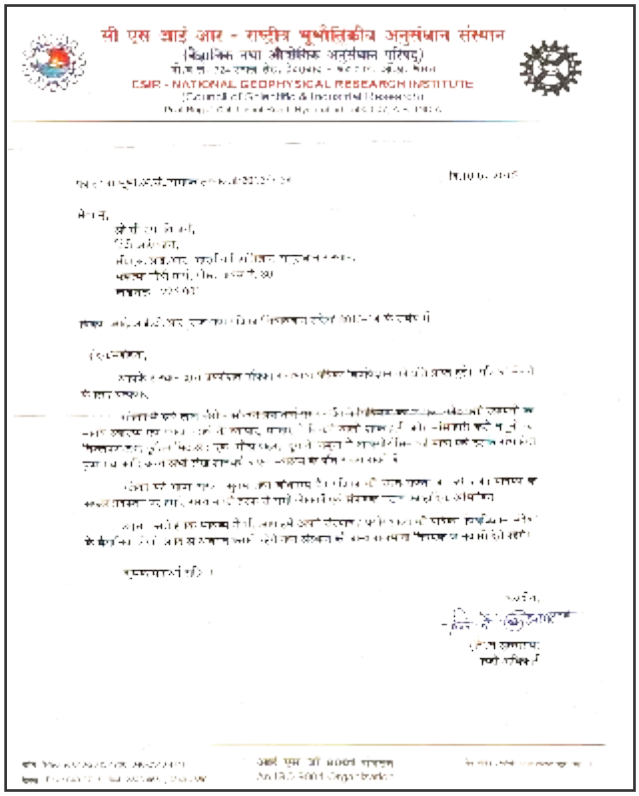
सी एस आई आर - राष्ट्रीय भूभौतिकीय अनुसंधान संस्थान
(वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद्)
CSIR - NATIONAL GEOPHYSICAL RESEARCH INSTITUTE
(Council of Scientific & Industrial Research)

केंद्रीय सड़क अनुसंधान संस्थान
(वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद्)
CENTRAL ROAD RESEARCH INSTITUTE
(COUNCIL OF SCIENTIFIC AND INDUSTRIAL RESEARCH)
Delhi-Mathura Road, P.O. CRRI, New Delhi-110 025 (INDIA)

पाठकों के पत्र

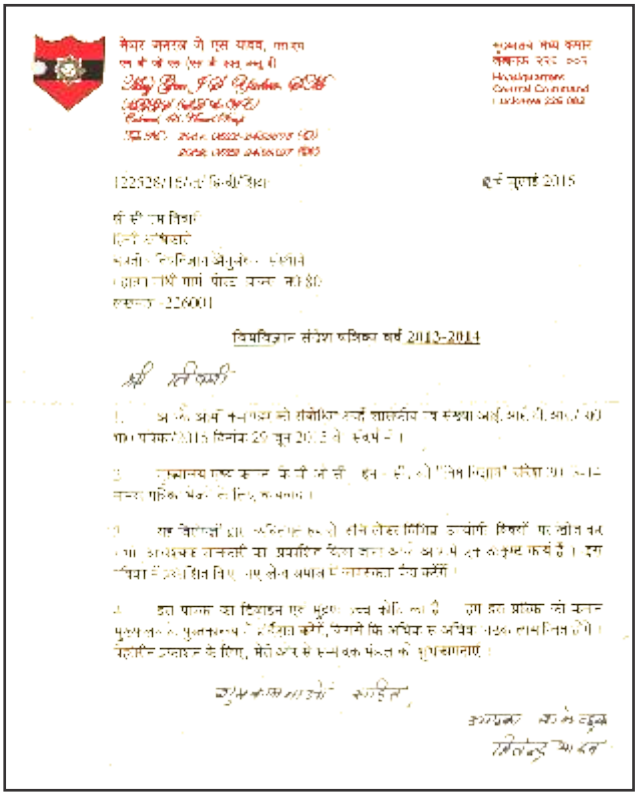

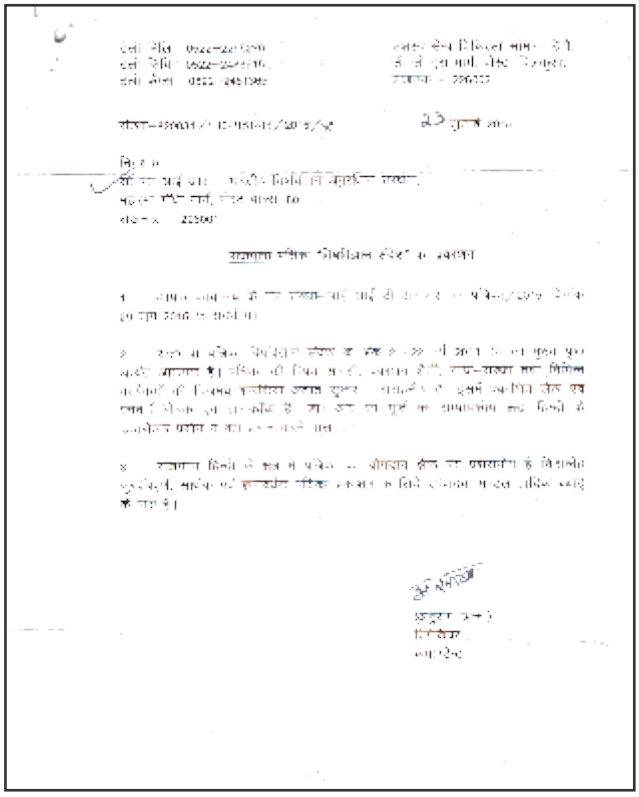

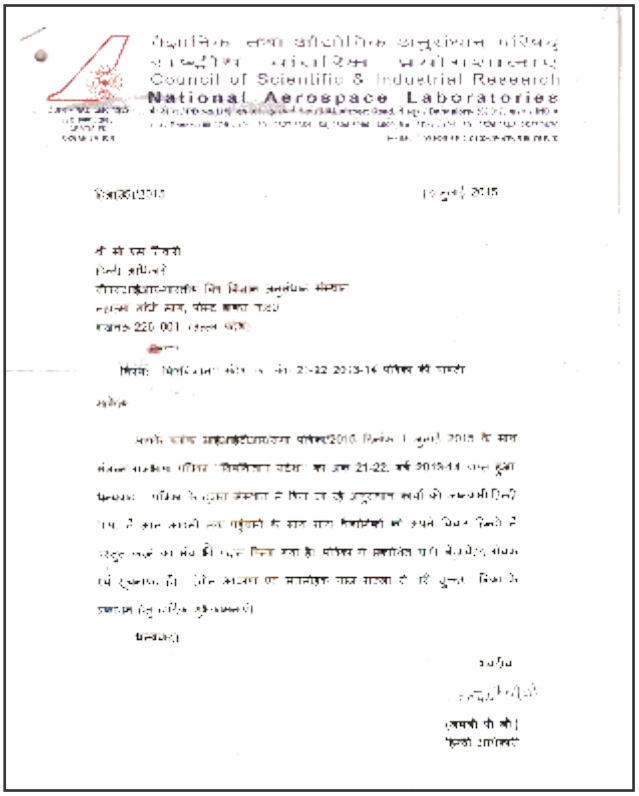

सीएसआईआर-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ ने राजभाषा हिंदी में कार्यालय में उत्कृष्ट प्रदर्शन का अष्टम पुरस्कार प्राप्त किया

सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ को अप्रैल–सितम्बर छमाही (2015–16) की अवधि में राजभाषा हिंदी में कार्यालय कार्यों में उत्कृष्ट प्रदर्शन का अष्टम पुरस्कार भारत सरकार, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3), लखनऊ की छमाही बैठक दिनांक 30 नवम्बर, 2015 को प्रदान किया गया। भा.कृ.अ.नु.प.–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में आयोजित इस बैठक के दौरान 59 सदस्य कार्यालयों में से मूल्यांकन के आधार पर यह पुरस्कार दिया गया। संस्थान की ओर से निदेशक, प्रोफेसर आलोक धावन और हिंदी अधिकारी, श्री चन्द्र मोहन तिवारी ने इस पुरस्कार को प्राप्त किया। पुरस्कार ग्रहण करते हुए अपने संबोधन में प्रोफेसर आलोक धावन ने कहा कि हमारा संस्थान अनुसंधान और विकास के क्षेत्र में कार्यरत है। हमने राजभाषा हिंदी के माध्यम से जनसाधारण हेतु अधिक से अधिक सामग्री का हिंदी में प्रकाशन किया है, जिनमें संस्थान की वार्षिक राजभाषा पत्रिका ''विषविज्ञान संदेश'', द्विभाषी वार्षिक प्रतिवेदन उल्लेखनीय हैं। संस्थान की बेवसाइट द्विभाषी है और इसके नियमित रूप से अद्यतन किया जाता है। राजभाषा कार्यान्वयन के संदर्भ में भारत सरकार द्वारा जारी दिशा–निर्देशों का अनुपालन सुनिश्चित किया जाता है। संस्थान के वैज्ञानिक भी टेलीविजन और समाचार पत्रों के माध्यम से जनसाधारण को हिंदी में वैज्ञानिक उपलब्धियों से समय–समय पर अवगत कराते रहते हैं।

शील्ड एवं प्रमाणपत्र ग्रहण करते हुए सीएसआईआर–आईआईटीआर, लखनऊ के निदेशक, प्रोफेसर आलोक धावन और हिंदी अधिकारी, श्री चन्द्र मोहन तिवारी

कार्यालय कार्यों में उत्कृष्ट प्रदर्शन के अष्टम पुरस्कार की शील्ड

कार्यालय कार्यों में उत्कृष्ट प्रदर्शन हेतु अष्टम पुरस्कार का प्रमाणपत्र

हिंदी कार्यशाला आयोजन का प्रमाणपत्र

स्वर्ण जयंती व्याख्यान श्रृंखला

1965 2015 स्वर्ण जयन्ती

50 वर्षों से राष्ट्र की सेवा में समर्पित

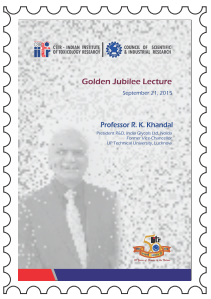

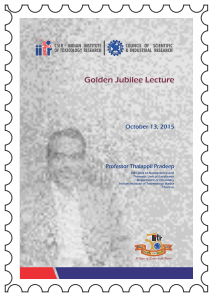

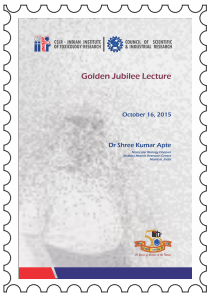

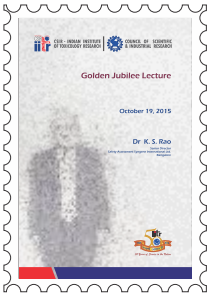

डॉ. बलदेव राज
निदेशक, नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडीज, बेंगलुरु
दिनांकः अगस्त 25, 2015

ऊर्जा सुरक्षा : दूरदर्शिता एवं प्रौद्योगिकियाँ

भारत के लिए 'ऊर्जा दूरदर्शिता'' स्थिरता के साथ–साथ सुरक्षा की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण है। देश में संस्कृति एवं समानता के विकास प्रमुखता के लिए कम कार्बन ऊर्जा स्रोतों के वांछित परिवर्तन के लिए 'दूरदर्शिता' एक संचालक हो सकता है। विश्व परिपेक्ष में, ऊर्जा उत्पादन, खपत और विकास का संक्षेप में वर्णन किया गया है। भारतीय ऊर्जा विकास परिदृश्य पर परिचर्चा हो रही है एवं एक आदर्श परिवर्तन का सुझाव दिया गया है। वर्तमान में भारत में उपलब्ध तकनीकी एवं उन्नत ऊर्जा प्रौद्योगिकी की सुरक्षा एवं स्थिरता के संदर्भ में विचार–विमर्श हो रहा है। भारत में ऊर्जा प्रबंधन प्रणाली संबंधित वस्तुओं, प्रतिरूपण में कई महत्वपूर्ण अनुसंधान खोज एवं सकारात्मक नवीनतम प्रतिरूपों को बताया गया है। पानी, फास्ट स्पेक्ट्रम तथा संलयन रियक्टरों संबंधित सामग्री एवं निर्माण प्रौद्योगिकी पर बल दिया गया है। वर्तमान में किये गये पहल एवं उनका प्रभाव का वर्णन अन्त में किया गया है। साथ ही साथ कुछ नये पहलुओं एवं उनके महत्वपूर्ण लाभ को मौजूदा उन्नत ऊर्जा प्रणाली के तहत प्रस्तावित किया गया है।

मंच पर आसीन गणमान्य (बायें से दायें) डॉ. आलोक पाण्डेय; प्रो. आलोक धावन, निदेशक सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर.; डॉ. बल्देव राज, निदेशक नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस स्टडीज़; प्रो. पी. के. सेठ, सी.ई.ओ., बायोटेक पार्क एवं डॉ. डी. कार. चौधरी

डॉ. बल्देव राज, निदेशक, नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एडवान्सड स्टडीज द्वारा स्वर्ण जयंती व्याख्यान

प्रो. पी. के. सेठ, सी.ई.ओ. बायोटेक पार्क, विचार व्यक्त करते हुए

प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर. द्वारा डॉ. बलदेव राज का सम्मान

प्रोफेसर विक्रमजीत बासु
मटीरियल रिसर्च सेंटर,
इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइन्स,
बेंगलुरू
संकाय सहायक,
डिपार्टमेंट ऑफ मटीरियल
साइन्स एण्ड इंजीयरिंग
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान,
कानपुर
दिनांकः सितम्बर 2, 2015

रोगी विशेष फीमोरल बाल हेड एवं एसिटाबुलर सॉकेट द्वारा कूल्हे के जोड़ों का पूर्ण प्रत्यारोपण : प्रयोगशाला अनुसंधान से प्रोटोटाइप का विकास

वर्तमान में, हड्डी रोग संबंधित प्रक्रियाओं में दीर्घकालिक प्रत्यारोपण स्थिरता, शीघ्र ठीक होने की क्षमता एवं उपचार लागत कुछ मान्य नैदानिक चुनौतियाँ हैं। बढ़ती उम्र में एवं आधुनिक जीवन शैली के कारण बढ़ते हुए हड्डी रोगियों की संख्या चिन्ता का विषय है। विशेषकर, भारत में प्रत्यारोपण सामग्रियों की अत्यन्त उच्च मांग है। भारत वहन करने के उपयोग के लिए, प्रत्यारोपण सामग्रियों का बायोकाम्पेटेबेल, शारीरिक परिस्थितियों में जंग प्रतिरोधन, अधिक शक्ति एवं कम मॉडुलस का सही संयोजन (मेजबान हड्डी के समान), उच्च थकान एवं सहन शक्ति, उच्च लचीलापन एवं आसपास के ऊतकों के साथ सही मिलान होना कुछ आवश्यक गुण है। उपरोक्त परिपेक्ष्य में, भारतीय रोगी विशेष एसिटाबुलर सॉकेट आधारित हाइब्रिड पॉलीमससिरेमिक कम्पोजिट् को क्रम्पेंशन मॉल्डिंग प्रक्रिया द्वारा विकास का वर्णन किया गया है। प्रयोगशाला स्तर से प्रोटोटाइप के विकास में शोध चुनौतियों को विस्तारपूर्वक वर्णित किया गया है। जरकोनिया टॅफेन्ड एलुमिना (ZTA) आधारित फीमोरल बॉल/एंसिटाबुलर साँकेट प्रोटोटाइप को उनके बेहतर शक्ति, क्षय–रोधी एवं अन्य गुणों के साथ अनिवार्य विधियों द्वारा विकसित किया गया है।

मंच पर आसीन गणमान्य (बायें से दायें) डॉ. डी. कार. चौधरी; प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर., आई.आई.टी.आर.; प्रो. विक्रमजीत बासु; डॉ. के. सी. गुप्ता एवं डॉ. मुकुल दास,

प्रो. विक्रमजीत बासु द्वारा स्वर्ण जयंती व्याख्यान

प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर. द्वारा डॉ. के. सी. गुप्ता, पूर्व निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर. का पुष्पों द्वारा स्वागत करते हुए

प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर. प्रो.विक्रमजीत बासु को स्मृति चिन्ह भेंट करते हुए

डॉ. नरेंद्र कुमार जैन
कार्यकारी उपाध्यक्ष,
इंटरनेशनल सोसायटी ऑफ टी साइंस
पूर्व निदेशक,
सीएसआईआर–हिमायल जैव संपदा
प्रौद्योगिकी संस्थान, पालमपुर
दिनांक: सितम्बर 4, 2015

वैश्विक चाय का वर्तमान स्वरूप एवं भविष्य में विकास

विश्व के उपयोग हेतु, लगभग पचास देशों में, 40 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में, लगभग 5 लाख कि.ग्रा. काली, हरी एवं विभिन्न तरह की चायों का उत्पादन किया जाता है। हालांकि, मुट्ठीभर कुछ देशों में ही चाय का उत्पादन 5 लाख कि.ग्रा. प्रति वर्ष से अधिक है। चीन और भारत विश्व के सबसे बड़े उत्पादक है; जो कि विश्व के दो तिहाई उत्पादन करते है परंतु अपने उत्पादन का अस्सी प्रतिशत का उपभोग भी कर लेते है। ये कुल उत्पाद का पाँचवा हिस्सा ही निर्यात करते है। केन्या एवं श्रीलंका विश्व के अग्रणी निर्यातक है जो कि विश्व उत्पाद में 16 प्रतिशत की भागीदारी परंतु निर्यात में 45 प्रतिशत की भागीदारी है क्योंकि वो चाय का उपभोग अपने देश में बहुत कम करते है।

वैश्विक चाय के लिए, चाय संस्थान, उत्पादन बढ़ाने हेतु कृषि प्रौद्योगिकी केन्द्रित अनुसंधान कर रहे है। आपूर्ति एवं माँग का सीधा प्रभाव चाय की कीमत पर पड़ता है। तीन प्रतिशत की अतिरिक्त आपूर्ति से वैश्विक चाय की कीमत 25 प्रतिशत तक कम हो जाती है। चाय उत्पादन को लाभकारी बनाये रखने हेतु, अधिक आपूर्ति का उपयोग जैवरसायनों को पृथक कर उनका उपयोग फार्मास्यूटिक्स एवं औद्योगिक उपायोग हेतु किया जा सकता है। चीन कथित तौर पर एक पेय के रूप में चाय बेचने की तुलना में चाय रसायनों से अधिक आय अर्जित की है। पन्द्रह वर्ष के लिए अनुमानित तथ्यों के अनुसार चाय आपूर्ति, चाय खपत से अधिक रहेगी। तदैव चाय की कीमतें कम रहेगी। चाय उद्योग में 12 लाख से अधिक कर्मी है जिसमें लगभग 51 प्रतिशत महिलायें है।

मंच पर आसीन गणमान्य (बायें से दायें) डॉ. एन. मणिक्कम; प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर. डॉ. एन. के. जैन; प्रो. बी.एन. धावन, पूर्व निदेशक, सी.एस.आई.आर. –सी.डी.आर.आई. एवं डॉ. मुकुल दास

डॉ. एन.के. जैन द्वारा स्वर्ण जयंती व्याख्यान का प्रस्तुतिकरण

प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर. द्वारा डॉ. एन.के. जैन को पुष्प भेंट

प्रो. आलोक धावन, निदेशक सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर. द्वारा डॉ. एन.के. जैन का सम्मान

प्रो. आर. खंडल
अध्यक्ष, अनुसंधान एवं विकास और व्यवसाय विकास, इंडिया ग्लाइकॉल्स लिमिटेड, नोएडा और पूर्व कुलपति, उ. प्र. प्राविधिक विश्वविद्यालय
दिनांकः सितम्बर 21, 2015

खाद्य सुरक्षाः चुनौतियां एवं अवसर; एक भारतीय परिप्रेक्ष्य

खाद्य सुरक्षा एवं भोजन की गुणवत्ता वर्तमान में एक ही पर्याय बन गये है। यह इस तथ्य से विदित है कि खाद्य विनियामक अब न केवल भोजन की शुद्धता के पांरम्परिक मानको अपितु भोजन में उपलब्ध अशुद्धियों को उनके अनुमति सीमा से नीचे रखने पर जोर देते है। उत्पादन के दौरान इस्तेमाल विभिन्न पदार्थों के संदूषण एवं अवशेषों की मात्रा उसके मैक्सिमम रेजीड्युल लिमिट्स (MRL) से अधिक नहीं होनी चाहिए। खाद्य सुरक्षा के प्रति बढ़ती जागरूकता, विषाक्तता सुरक्षा एवं संचार प्रौद्यौगिकी के बढते हुए ज्ञान एवं समय के साथ जांच किये जाने वाले संदूषक एवं अवशेषों की सूची में वृद्वि हुई है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक विषैले पदार्थ की एमआरएल सीमा को कठोरता से निर्धारित किया जा रहा है। पूर्व में जो एमआरएल पीपीएम में निर्धारित थे, उन्हें अब तकनीकी विकास के कारण पीपीबी स्तर तक नीचे किया गया है। इसके अलावा, कई अवशेषी रसायनों को बिल्कुल प्रतिबन्धित (अनुपस्थित) कर दिया गया है। इस तरह के कम स्तर पर विषैले पदार्थों की उपस्थिति स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है या नहीं, यह प्रश्न सभी प्रभावित देशों में चर्चा का विषय है। वास्तव में, कभी–कभी यह विकसित देशों (आयतकों) द्वारा, विकासशील देशों (निर्यातकों) के खाद्य उत्पादों के व्यापार को बाधित करने के लिए होता है। भारत में खाद्य सुरक्षा की उभरती प्रवृत्तियों पर प्रकाश डाला गया एवं भारतीय खाद्य उद्योग की चुनौतियों को अवसर में परिवर्तित करने का संकेत दिया गया।

मंच पर आसीन (बायें से दायें) डा. मुकुल दास; प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर., प्रो. आर. के. खंडल, डॉ. एस.पी.एस. खनूजा, पूर्व निदेशक, सी.एस.आई.आर. सीमैप एवं डॉ. एन. मणिक्कम

प्रो. आर.के. खंडल द्वारा स्वर्ण जयंती व्याख्यान

प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर. द्वारा डॉ. एस.पी.एस. खनूजा, पूर्व निदेशक, सीमैप को स्मृति चिह्न भेंट

प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर. द्वारा प्रो. आर. के. खंडल का स्वागत

प्रो. बलराम भार्गव
कार्डियोलॉजी विभाग,
कार्डियोथोरेपिक विज्ञान केंद्र
और अधिशासी निदेशक,
स्टैनफोर्ड भारत बायोडिजाइन केन्द्र,
अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान,
नई दिल्ली
दिनांकः सितम्बर 26, 2015

भारत की स्वास्थ्य सेवाओं में नवीन खोजों का भविष्य

इस व्याख्यान के द्वारा चिकित्सा उपकरणों की नई खोजों के संदर्भ में भारत के परिदृश्य पर प्रकाश डाला गया। चिकित्सकों, अभियन्ताओं, अभिकल्पकारों एवं उद्यमियों के बीच अंतः विषयक सहयोग की शक्ति के बारे में विस्तारपूर्वक बताया गया। इसके अलावा अन्तर महाद्विपीय संस्थानों एवं विश्वविद्यालयों के बीच पारस्परिक सहयोग से प्राप्त सफलता पर बल दिया गया।भारत अल्प लागत, सरल नव उत्पादों के दशक के लिए तैयार एवं अग्रसर है। ये नव उत्पाद न केवल देश के लिए, अपितु, फर्स्ट वर्ल्ड के लिए भी सस्ते उपयोग सक्षम है। भारतवर्ष में नवीन स्वास्थ्य उपकरणों की खोज के अवसर एवं इसकी प्रारम्भिक सफलताओं पर प्रकाश डाला गया।

प्रो. बलराम भार्गव द्वारा स्वर्ण जयंती व्याख्यान

डॉ. नित्यानन्द, पूर्व निदेशक, सी.एस.आई.आर.–सी.डी.आर.आई. द्वारा श्रोतागणों को सम्बोधन

प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर. द्वारा डॉ. नित्यानंद, पूर्व निदेशक, सी.एस.आई.आर.– सी.डी.आर. आई.को स्मृति चिह्न भेंट

प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर. द्वारा प्रो.बलराम भार्गव को स्मृति चिह्न भेंट

प्रो. टी. प्रदीप
नेनौसाइंस एण्ड थिमेटिक यूनिट ऑफ एक्सिलेंस
(विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग की इकाई)
रसायन विज्ञान विभाग,
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान,
मद्रास, चेन्नई
दिनांकः अक्टूबर 13, 2015

नैनोमैटीरियलस का उपयोग सस्ते जल शोधक के रूप में

स्वच्छ पानी की अभिगम्यता, विकास का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है। समाज पर सार्थक प्रभाव डालने के लिए स्वच्छ पानी का सस्ते में उपलब्ध होना आवश्यक है। सूक्ष्मजीवों से सुरक्षित पीने योग्य पानी सभी के लिए उपलब्ध कराने हेतु, चांदी के मायनों का लगातार पानी में निर्गमन एक सस्ती सामग्री एवं बेहतर तरीका हो सकता है। उपरोक्त क्षमता के साथ–साथ अगर विभिन्न नैनोकम्पोजिट्स की आर्सेनिक, लेड जैसे प्रदूषकों एवं विषालुओं को साफ करने की मिश्रित क्षमता का साथ में जोडने से बिना विद्युत के चलने वाला एवं सस्ता पेय जल शोधक बनाया जा सकता है। पानी में उपलब्ध जटिल प्रजातियाँ जो नैनोमैटीरियल के सतह पर स्केलिंग के तौर पर जम जाती है, इसकी उपस्थिति में एक स्थाई मैटीरियल जो लगातार आयन निर्गमन एवं अवशोषण कर सकें, इसे बनाना ही सबसे बड़ी समस्या है।

हमने सरल एवं प्रभावकारी विधि द्वारा बिना विद्युत के पानी में इसी प्रकार के निरंतर निर्गमन एवं अवशोषण करने वाले मैटीरियल को संश्लेषित किया है। नैनो कम्पोजिट में नदी के बालू की तरह के गुण जैसे कि उच्च अपरूपण क्षमता का स्वतन्त्र एवं नमी दानों ही रूपों में प्रदर्शित होता है। ये मैटीरियल सस्ते पेयजल शोधक के रूप में अमेरिका में 2.5 डालर/वर्ष/परिवार विकसित किये गये है। परिवेशीय तापमान पर इन नैनों संरचनात्मक कम्पोजिट्स को तैयार करना इसमें अवशोषण आधारित जल शोधन के लिए व्यापक उपयुक्तता को दर्शाता है। हमने आर्सेनिक प्रभावित भारतीय क्षेत्रों में यह समाधान लागू किया है। आने वाले 12 महीनों में हम लगभग 6 लाख लोगों तक आर्सेनिक रहित जल पहुँचाने का अनुमान करते है। इस तरह के अनुभवों की विस्तृत रूप से चर्चा भी की गई।

मंच पर आसीन (बायें से दायें) डॉ. पूनम कक्कड़, प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर.; प्रो. टी. प्रदीप; श्री अमित मेहरोत्रा एवं डॉ. एन. मणिक्कम

प्रो. टी. प्रदीप द्वारा स्वर्ण जयंती व्याख्यान

प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर., सत्र के अध्यक्ष, श्री अमित मेहरोत्रा युनीसेफ को स्मृति चिह्न भेंट करते हुए।

प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर.; प्रो. टी. प्रदीप को स्मृति चिह्न भेंट करते हुए।

प्रो. उपिंदर एस. भल्ला
प्रो. और संकायाध्यक्ष,
नेशनल सेंटर फॉर
बायोलोजिकल साइंसेस,
बेंगलुरु
दिनांकः अक्टूबर 14, 2015

स्मृति पर एक विशुद्ध–ज्ञप्तिः प्रकाशीय अभिलेखन एवं ऑप्टोजेनेटिक्स

मस्तिष्क क्रिया और दुष्क्रिया कई स्तर के मनौवैज्ञानिक प्रभाव पर निर्भर करते है। स्मृति एक उच्चस्तरीय व्यवहार है जो कि जटिल घटनाओं के कैस्केड, जिसमें कि आण्विक, आनुवंशिक घटनायें, कोशिकीय में परिवर्तन, नेटवर्क प्रतिक्रियाएं नेटवर्क विष प्रणाली व्यवहार शामिल है, क्रिया के द्वारा उभरता हैं। मस्तिष्क की इस जटिल प्रक्रिया को समझने एवं अध्ययन हेतु, हमने आप्टोजेनेटिक्स एवं अप्टिकल रिकार्डिंग विधि द्वारा स्स्ती तकनीकी का विकास किया है। हमने हिप्पोकैम्पल मस्तिष्क स्लाइस में उत्तेजित हिप्पोकैम्पल संबंधों में प्लास्टिसीटी को रिकार्ड किया। जबकि चूहों की हिप्पोकैम्पल स्लाइसों में प्लास्टीसिटी का अध्ययन विस्तृत रूप से किया गया है, मस्तिष्क की सुसुप्तावस्था अथवा पूर्ववर्ती स्मृतिका की क्रियाशीलता की कमी है। स्लाइस एवं इन–वीवी सन्दर्भों में एक मुख्य अन्तर है।

सी.ए.3 कोशिकाओं की ऑप्टोजेनिक उद्दीपनों का प्रयोग करते हुए सी.ए.3 तंत्रिकाओं में पूर्ववर्ती स्मृतिका की क्रियाशीलता का हमने अंदाजा लगाया। चैनल रोडाप्सिन 2 (सी एच आर–2) – लॉक्स वीषाणु द्वारा उत्परिवर्तत सी.ए. –3–फ्री चूहों में सी.ए.–3 क्षेत्रों के प्रकाशीय उद्दीपन के दौरान हमनें सी.ए.1 कोशिकाओं से ई.पी.एस.पी. को रिकार्ड किया। स्मृति क्रिया के अगले उच्चतर स्तर पर हमने चूहों के हिप्पोकैम्पस की क्रियाशीलता जो कि अनुप्यपण–अनुकूलन (चिन्ह–अनुकूलन) कार्य के दौरान सीखने की प्रक्रिया में होने वाले सीखने की प्रक्रिया के दौरान सी.ए.1 पिरामिड़ल तंत्रिकाओं का हमने 2–फोटॉन चित्रण किया।

मंच पर आसीन (बायें से दायें) डॉ. एन. मणिक्कम; डॉ. आर.सी. श्रीमाल, पूर्व निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर.; प्रो. उपिंदर एस. भल्ला; प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई. आर.–आई.आई.टी.आर. एवं डॉ. देवेन्द्र परमार

प्रो. उपिंदर एस. भल्ला द्वारा स्वर्ण जयंती व्याख्यान

प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर. द्वारा डॉ. आर. सी. श्रीमाल का सम्मान

डॉ. आर. सी. श्रीमाल, पूर्व निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई. टी.आर., प्रो. उपिंदर एस. भल्ला को स्मृति चिह्न भेंट करते हुए

प्रो. श्री कुमार आप्टे
एमेरिटस प्रोफेसर,
होमी भाभा नेशनल इंस्टीट्यूट – परमाणु ऊर्जा विभाग और राजा रमन्ना फेलो,
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई
दिनांकः अक्टूबर 16, 2015

डीनोकोकस रेडियोड्यूरन्स की जेनेटिक इंजीनियरिंग द्वारा रेडियोएक्टिव अम्लीय/क्षारीय गंदे जल से यूरेनियम का जैवनिपटान

प्राकृतिक तौर पर यूरेनियम विस्तृत सान्द्रता में पाया जाता है एवं सामान्यतः सभी जीवित कोशिकाओं के लिए विषाक्त होता है। प्राकृतिक या मानव जनित कारणों से अम्लीय/क्षारीय गंदा जल बनता है; जिसमें यूरेनियम कम सान्द्रता में पाया जाता है। पानी के सुरक्षित निपटान हेतु इस यूरेनियम को निकालना आवश्यक है, परंतु यह भौतिकीय–रसायनिक विधियों द्वारा भी कर पाना कठिन है। गन्दे पानी से, यूरेनियम को सूक्ष्म जैव निपटान विधि द्वारा अघुलनशील यूरेनाइल फॉस्फेट में विशेष रूप से जैविक अवक्षेपण करना एक प्रभावकारी तरीका है। प्रकृति में ऐसे कई जीवाणु उन जगहों पर भी मिलते है जहाँ परमाणु के कचरे में उच्च विकरण पाया जाता है। हमने प्रयोगशाला में, ऐसे ही रेडियोरोधी जीवाणु *डीनोकोकस रेडियोड्यूरन्स* को जेनेटीकली परिवर्तित करके, विकिरण प्रेरित डीनोकोकल पीएसएसबी प्रमोटर के द्वारा अम्लीय/क्षारीय फॉस्फेटेज् की अभिव्यक्ति को अलग–अलग बढ़ाया गया है। बनाये गये रिकॉम्बिनेन्ट प्रजातियों में अलग–अलग अम्लीय फॉस्फटेज एवं क्षारीय फॉस्फैटेज क्रियाशीलता दिखाई, जो कि 90 यूरेनाइल फॉस्फेट या यूरनाइल कार्बेनेट 1 मिली मोल यूरेनियम से 5–6 घंटे में अवक्षेपित हुआ। प्रजातियों में उच्च यूरेनियम सान्द्रता (5–20 मिली मोल) पर भी अवक्षेपण सक्षम पाया गया। परिवेशी तापमान पर लायोफिलाइजेशन के बाद 1 वर्ष तक फॉस्फेटेज क्रियाशीलता क्षमता संरक्षित पाई गई।

मंच पर आसीन (बायें से दायें) डॉ. राम चन्द्रा; प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर.; प्रो. श्री कुमार आप्टे; डॉ. पी.एस. चौहान एवं डॉ. एन. मणिक्कम

प्रो. श्री कुमार आप्टे द्वारा स्वर्ण जयंती व्याख्यान

प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर. द्वारा डॉ. पी.एस. चौहान का सम्मान

प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर. द्वारा प्रो. श्री कुमार आप्टे का सम्मान

डॉ. के. एस. राव
वरिष्ठ निदेशक,
सुरक्षा आंकलन,
सिनजीन इंटरनेशनल लिमिटेड,
बेंगलुरू
दिनांकः अक्टूबर 19, 2015

प्रथम मानवीय डोजिंग (एफ आई एच) के सुरक्षित स्तर के निर्धारण गतिज तथ्य का उपयोग

नई दवाओं के विकास में हम पूर्ण तरह जानवरों के अध्ययन पर निर्भर हैं। जो दवा जानवरों में पूरी तरह प्रभावशाली है, वो मानव में उतनी प्रभावकारी नहीं होती। इसका एक कारण दवा का जानवरों और मनुष्यों की प्रजाति में अनुचित ट्रान्सलेशन है। शुरूआती डोज का चयन एक जटिल प्रक्रिया है। शुरूआती डोज़ इतनी कम हो कि वह सुरक्षित हो और इतनी ज्यादा हो जोकि दवा के अधिक मात्रा में खपन को रोके और ज्यादा समय न ले। इसके लिये सबसे ज्यादा प्रचलित तरीका NOAEL (एन ओ ए ई एल) पर आधारित है। पारस्परिक जानवरों के अध्ययन और शारीरिक सतह क्षेत्रफल (मिलीग्राम/वर्ग मीटर) से निर्धारित होकर मानव को समान मात्रा में दी जाती है। सबसे सही प्रजाति की एच ई डी को सुरक्षित घटक के रूप में प्रयोग करके मानव में अधिकतम शुरूआती डोज (एम आर एस डी) का निर्धारण किया। जो भी हो, एन ओ ए ई एल (NOAEL) पर आधारित विधि भिन्न सुरक्षित घटकों पर निर्भर है और एफ आई एच (FIH) निर्धारण के लिए एक सुरक्षित तरीका है। फॉर्माकोकाइनेटिक निर्देशित विधियाँ एक यांत्रिकीय रेवानेल प्रदान करता है जो कि भिन्न कंपनियों और इंस्टीट्यूट्स में बहुत प्रचलित हैं मानव फॉर्माकोकाइनेटिक (पी के) का उपयोग मानव क्लीयरेन्स और बायोएवेलिविलिटी के प्रोजेक्ट में एफ आई एच (FIH) निर्धारण में हैं फिर भी एक आई एच बहुत ही चुनौतीपूर्ण प्रक्रिया है। इस व्याख्यान का उद्देश्य एक आई एच निर्धारण में पी के निर्देशित साधारण प्रक्रियाओं की जानकारी देना है। एफ आई एच निर्धारण के समय पूरा ध्यान मौखिक डोजिंग, हाफ लाइफ विनिमयन, पीक टू थ्रू प्लाज्मा सांद्रता अनुपात के बाद ए यू सी (AUC) पर दिया जाता है। क्योंकि यह AUC (ए यू सी) प्रभावशीलता और सुरक्षा के निर्धारण में आवश्यक है। दवा की अधिकतम सटीक सांद्रता का अनुमान (Cma) और भ्रू सांद्रता (Cmin) का उपयोग अवांछनीय विषाक्तता और प्रभावी सांद्रता निर्धारण में उपयोगी है। इसलिये, सांद्रता–समय का ग्राफ मानव में बहुत महत्व रखता है। वर्तमान में, पीके/पीडी मॉडल मानते है कि मुख्य दवा ही फॉर्माकोलॉजिकल क्रियाशीलता और विषाक्तता और बनने वाले उपाचयों के लिए जिम्मेदार है? सटीक मानवीय डोज–प्रभाव–प्रदर्शन–समय की प्रोफाइल, फर्माकोलॉजिकल क्रियाशीलता और विषाक्तता को पीके/पीडी मॉडल द्वारा निर्धारित करना चाहिए। हालांकि परी के और पी के/पी डी निर्देशित विधि आजकल प्रचलित हो रहे हैं, जो कि एफ आई एच डोज चयन में यांत्रिक और सम्पारिकल तकनीक का इस्तेमाल करते हैं। डोज निर्धारण हमेशा मौजूद जानकारी का ध्यानपूर्वक अध्ययन चाहता है। अभी कोई भी यूनिवर्सल विधि नहीं है जो हर केस में काम करे।

मंच पर आसीन (बायें से दायें) डॉ. पूनम कक्कड़; प्रो. आलोक धावन; डॉ. के. एस. राव; डॉ. वी. पी. कम्बोज एवं डॉ वाई. शुक्ला

डॉ. के.एस. राव द्वारा स्वर्ण जयंती व्याख्यान

प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर. द्वारा पूर्व निदेशक सी.एस.आई.आर.–सी.डी.आर.आई., डॉ. वी.पी. कम्बोज का सम्मान

प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर. द्वारा डॉ. के.एस. राव का सम्मान

डॉ. श्रीकांत नड्डुर
एंबेसी साइंस फेलो,
आर्थिक, पर्यावरण विज्ञान और प्रौद्योगिकी प्रभाग,
अमेरिकी दूतावास,
नई दिल्ली
दिनांकः अक्टूबर 20, 2015

21वीं सदी में पर्यावरणीय स्वास्थ्य अनुसंधान : अनावरण और प्रतिक्रिया के विश्लेषण में निर्देशन बदलाव की आवश्यकता

पिछले दो दशकों के शोध से जिसमें अध्ययन डिजाइन और उन्नत प्रौद्योगिकी का समावेश है, जिससे यह बात पूर्णतः साबित हो चुकी है कि पर्यावरण का हमारे स्वास्थ्य और रोगों पर महत्वपूर्ण प्रभाव है जो कि वैश्विक व्याधि भार को बढ़ाने में सक्रिय योगदान करता है। एकल बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित कर बीमारी में अनुवांशिकी की भूमिका को समझने के प्रारंभिक प्रयास की तरह ही पर्यावरणीय स्वास्थ्य अनुसंधान गतिविधियाँ भी एक समय में एक अनावरण पर ध्यान केन्द्रित करती हैं। यह नीति किसी विशिष्ट रसायन का व्यावसायिक अनावरण द्वारा निदर्शित है। आधारित उपागम का विषाक्तता शोध में समायोजन करके, किसी भी बीमारी की शुरूआत और विस्तार संबंधित आणिवक मार्गों में आए परिवर्तन की निर्धारण प्रक्रिया और गतिशील हो गई है। इन प्रयासों से निर्धारित रसायनों और विषाक्त पदार्थों के अनावरण की जाँच और निदान के लिए बायोमार्कर का समूह तैयार हो गया है। परंतु, वास्तविक रूप से मानव एक ही समय पर हजारों रसायनिक और भौतिक कारकों से अनावरित है। इसके अलावा, पूर्ववर्ती बीमारी, पोषण, सामाजिक आर्थिक स्तर और व्यवहार के प्रभाव से हम आश्चर्यचकित है। पूर्णतः अनावरण की समझ विकसित हो रही है। अनावरण के अतिरिक्त, स्वास्थ्य संबंधी जाँचों को जैविक प्रक्रिया में आए बदलाव, समस्थापन तंत्र और जैविक लोच को समायोजित करना चाहिए। यह प्रस्तुतिकरण ऐतिहासिक सीख के उदाहरण के साथ, एकल प्रदूषक 21वीं सदी में पर्यावरणीय स्वास्थ्य समस्याओं पर प्रभाव का अवलोकन करती है और तेजी से उभरते 'एक्पोसोम' की संकल्पना पर प्रकाश डालती है।

मंच पर आसीन (बायें से दायें) डॉ. देवेन्द्र परमार; प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर.; डॉ. श्रीकान्त नडूडर एवं डॉ. एन. मणिक्कम

डॉ. श्रीकान्त नडूडर द्वारा स्वर्ण जयंती व्याख्यान

प्रो. आलोक धावन, निदेशक, सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर. द्वारा माननीय कुलपति, के.जी.एम.यू. प्रो रविकांत का सम्मान

प्रो. आलोक धावन द्वारा डॉ. श्रीकान्त नडूडर का सम्मान

सी.एस.आई.आर.-आई.आई.टी.आर. गेहरू परिसर

सरोजनी नगर औद्योगिक क्षेत्र, कानपुर रोड, लखनऊ - 226008, उ.प्र., भारत

वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद्

सीएसआईआर-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान लखनऊ

सीएसआईआर-आईआईटीआर लखनऊ दक्षिण पूर्व एशिया में विषविज्ञान के क्षेत्र में एक मात्र बहुउद्देशीय शोध संस्थान, जिसका ध्येय है

''पर्यावरण, स्वास्थ्य की सुरक्षा एवं उद्योग के लिए सेवा''

अनुसंधान और विकास के क्षेत्र

- भोजन औषधि और रसायन विषविज्ञान
- पर्यावरण विषविज्ञान
- नियामक विषविज्ञान
- नैनो चिकित्सा एवं नैनो सामग्री विषविज्ञान
- प्रणाली विषविज्ञान एवं स्वास्थ्य आपदा आंकलन मूल्यांकन

प्रस्तावित सेवायें

- जीएलपी प्रमाणित पूर्व क्लिनिकल विषाक्तता परीक्षण
- एनएबीएल द्वारा मान्यता प्राप्त
- नये रसायनिक इकाई की सुरक्षा/विषाक्तता मूल्यांकन
- जल गुणवत्ता मूल्यांकन और निगरानी
- विश्लेषणात्मक सेवायें
- पर्यावरण निगरानी एवं प्रभाव आंकलन
- महामारी विज्ञान अध्ययन
- रसायनों/उत्पादों के बारे में जानकारी

अभिज्ञान

- वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान संगठन (एस.आई.आर)
- उ. प्र. प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (जल और वायु)
- भारतीय फैक्ट्री अधिनियम (पीने योग्य पानी)
- भारतीय मानक ब्यूरो (कृत्रिम अपमार्जक द्रव्य)
- भारतीय खाद्य संरक्षा एवं मानक प्राधिकरण (एफएसएसएआइ)

उपलब्ध/विकसित प्रौद्योगिकी

- जल विश्लेषण किट
- जल गुणवत्ता विश्लेषण हेतु सचल प्रयोगशाला वाहन
- सरसों के तेल में आर्जीमोन के शीघ्र परीक्षण हेतु आर्जिमोन जॉच किट
- खाद्य तेलों में मिलावटी बटर यलो की जांच हेतु सी0डी0 स्ट्रिप
- आर्सेनिक परीक्षण किट

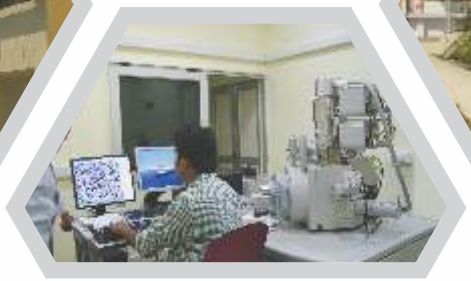

निदेशक
सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गांधी मार्ग, पोस्ट बाक्स सं. 80,
लखनऊ–226001

दूरभाषः 0522–2621856, 2613357
फैक्सः 91–522–2628277
Email: iitrindia@iitrindia.org

1965 2015 स्वर्ण जयन्ती

50वर्षों से राष्ट्र की सेवा में समर्पित

रासायनिक एवं जैविक परीक्षणों के लिए एनएबीएल द्वारा मान्यता अनुरूप सुविधायें

विषाक्तता परीक्षण जीएलपी